प्रस्तावना.

आजकाल दुनियामां बहुधा जनस्वभावनुं वलण संस्कृत अने मागधी भाषामां लखायेला कठीन शास्त्रीय विषयो तरफ न दोरातां स्वभाषामां लखायेला सरल विषयो तरफ दोरावा लाग्युं छेः तेथी करीने दिवसे दिवसे शास्त्र संबंधी उच्च ज्ञान हीन, हीनतर थतुं जाय छे. ज्यांसुधी गुजराती भाषामां अनेक ग्रंथो बहार पड्या नहोता, त्यांसुधी उच्च तत्वज्ञान प्राप्त करवानी उमेद धरावनाराओ संस्कृत तथा प्राकृत भाषाओनो अभ्यास करी ते द्वारा उच्च ज्ञान मेळवता हता पण तेवा मनुष्यो संख्यामां थोडा अने कोइक ठेकाणे जोवामां आवता. ज्यारे गुजराति भाषामां कथारूपे, नाटकरूपे, के तत्वज्ञानरूपे अनेक ग्रंथो बहार पड्या, त्यारे लोकोनुं शास्त्रीय कठीन भाषा तरफ दुर्लक्ष थयुं अने तेथी ते द्वारा उच्च तत्वज्ञान मळतुं हतुं ते बंध थयुं. तेथी शास्त्र संबधी गूढ रहस्योने स्वभाषामां बहार पाडवा जरूर जणाइ. वांचवानो शोख वधतो गयो तेम तेम भिन्न भिन्न विषयोना पुस्तको बहार पडता गया. पण तेमां धर्मनुं स्वरूप समजाववाने योग्य ग्रंथो बहुज थोडा छे. तेथी जमानाने अनुसरती भाषामां वधारे पुस्तको बहार पडवानी आवश्यकता जणायाथी अमारा तथा बीजा सज्जनोना आग्रहथी मुनि महाराज श्री वृद्धिचंद्रजीना शिष्य शांतमूर्ति मुनिमहाराज श्री कर्पुरविजयजीए मध्यम तथा कनिष्ट पंक्तिना अभ्यासीयोने अल्प श्रमे धर्म तत्वनो

बोध थाय एवा हेतुथी जैन हितोपदेश नामना पुस्तकनी रचना सरल अने रसीली भाषामां करीछे. जेनो पहेलो भाग अमारा तरफथी अगाउ प्रसिद्ध करवामां आव्योछे. ते पुस्तक विशेष प्रकारे जन प्रिय थइ पडयुं छेः जेना परिणामे, आ बीजा तथा त्रीजा भागनुं पुस्तक अमारा वांचक वर्ग समक्ष मूकवा अमो भाग्यशाळी थया छीए.

आ जैन हितोपदेशनुं पुस्तक पोताना नाम प्रमाणे पोतानुं गांभीर्य महत्व अने बोधकत्व जणावे छे वळी आ पुस्तकनो क्रम एवीतो सरलताथी गोठववामां आव्यो छे के प्राये उत्तम, मध्यम अने कनिष्ट ए त्रणे वर्गना वांचक अधिकारीओ स्वस्व बुद्धि अनुसारे निःशंकपणे तेनो लाभ लइ शकशे ए निर्विवाद छे; सिद्धांतरूप समुद्रने पार उतारवा माटे नौका तुल्य आ ग्रंथ रत्ननुं एकजवार अवलोकन करवाथी तेनी खरी उपयोगीता सज्जनो सहेजे समजी शकशे.

श्री जैन हितोपदेश भाग २ जानी शरूआतमां मंगलाचरणरूपे सांप्रतकाळमां विचरता श्री सीमंधर जीननी स्तुति कठिण शब्दनी फुटनोट साथे आप्या बाद श्री गणेंद्र मुनि विरचित सुभाषित रत्नावळी ग्रंथमांथी धर्म नीति अने शुभ व्यवहारने उपयोगी जुदा जुदा ४५ विषयो उपर स्फुटपणे विवेचन कर्युं छे. उक्त विषयोनुं अत्र दिग्दर्शन करवा करतां एकज वखत तेने वांची मनन करवानुं काम अमो वांचकवृंदनेज सोंपीए छीए. त्यार पछी सुमति अने चारित्र राजना सुखदायक संवादमां पतित चारित्र धारीने पंच महाव्रतमां पुनः स्थिर करवा माटे करेलो रसिक बोध नोवेलरुपे आपेल छे. पछी 'धर्मनी कुंची' ए विषयमां धर्मरत्नने लायक जीवना ३५ गुणोनुं प्रथम सामान्यथी अने पछी विशेषथी विवेचन आप्युं छे अने अंतमां परमात्म छत्रीसी अने अमृतवेलीनी सज्झाय आपवामां आवी छे.

श्री जैन हितोपदेश भाग त्रीजामां श्रीमद् हेमचंद्राचार्य विरचित शासन नायक वीराधिवीर श्री वर्द्धमान जीनना स्तोत्रनो सारांश, मंगळाचरणरुपे आपीने प्रथम ज्ञानसार सूत्र (अष्टकजी)ना मूळ श्लोको तेना रहस्यार्थ साथे आपेल छे जे एवी तो सरलताथी स्फुटपणे लखायेल छे के साधारण ज्ञानवाळाने पण ते सहज रीते समजमां आवी शके तेम छे पछी वैराग्यसार अने उपदेश रहस्य ए नामना विषयमां वैराग्य अने उपदेशमय बावतनो सारो समावेश करवामां आव्यो छे. त्यारपछी आध्यात्मिक विषयनी पुष्टीकारक अध्यात्म गीता, संयम, बत्रीसी, अने क्षमा छत्रीसी कठीन शब्दनी फुटनोट साथे आपी ग्रंथनी समाप्ती करवामां आवी छे.

दरेक जैनशाळाना बाळकोने क्रमसर वांचनमाळा चलाववानी आवश्यकता आपणी कोन्फरन्स तरफथी जे स्वीकारवामां आवी छे ते वांचनमाळानी गरज आ पुस्तकनो पहेलेथी क्रमसर अभ्यास करवाथी केटलाक अंशे सरशे—एम अमारु निष्पक्षपात्तपणे मानवुं छे. तेथी तेनो घटतो उपयोग करवा अमे सहु सज्जनोने साग्रह विज्ञप्ति करीए छीए.

पूज्य मुनिश्रीना प्रयास माटे अमे अंतःकरणथी आभार मानवा साथे उक्त ग्रंथरत्ननो लाभ लेइ तेओ साहेवना परिश्रमने सर्व भव्यात्माओ सार्थक करो एम इच्छी अत्र वीरमीए छीए.

आ ग्रंथ छपाववाने आश्रयदाता, सद्गृहस्थोनो अंतःकरणथी आभार मानी तेमनुं अनुकरण करवा अन्य धनिकोने नम्रविज्ञप्ती करीए छीए. इतिशम्,

ली. प्रसिद्ध कर्त्ता.

अनुक्रमणिका.

श्री जैनहितोपदेश भाग २ जो.

श्री जैनहितोपदेश भाग ३ जो.

मंगलाचरणरूप.

श्री सीमंधर[1] जिन—स्तुति.

प्रभु नाथ तुं तिर्यलोकनो[2], प्रत्यक्ष त्रिभुवन भाण;
सर्वज्ञ सर्वदर्शी[3] तुमे, तुमे शुद्ध सुखनी खाण जिनजी
विनती छे एह. १

प्रभु जीव जीवन भव्यना, प्रभु मुझ जीवन प्राण;
ताहरे दर्शने सुख लहुं, तुंहि जगत स्थिति जाण. जि० २

तुज विना हुं बहु भव भम्यो, धर्या देश अनेक;
निज भावने परभावनो, जाण्यो नही सुविवेक. जि० ३

धन्य तेह जे नित्य प्रहसमे[4], देखे जे जिन मुख चंद;
तुज वाणी अमृत रस लही, पामे ते परमानंद. जि० ४

एक वचन श्री जिनराजनो, नयगम[5] भंग प्रमाण;
जे मुणे रुचिथी ते लहे, निज तत्त्व सिद्धि अमान. जि० ५

जे क्षेत्र विचरो नाथजी, ते क्षेत्र अति सुपसथ्थ[6];
तुज विरह जे क्षण जाय छे, ते मानीयें अकयथ्थ[7]. जि० ६

श्री वीतराग दर्शन विना, वीत्यो जे काल अतीत[8];
ते अफळ मिच्छा दुकडं, तिविहं तिविहनी रीत. जि० ७

---

१ महाविदेह क्षेत्रमां विचरता जिनवर. २ त्रण लोकनो. ३ सर्व वस्तुते सर्वथा साक्षात देखवावाळा. ४ प्रभात समये. ५ नैगमादिक सात नयो. ६ सुंदर मंगलकारी. ७ अकृतार्थ—निष्फळ. ८ गयेलो काल.

प्रभु वात मुज मननी सहु, जाणोज छो जिनराज;
स्थिर भाव जो तुमचो[1] लहुं, तो मिले[2] शिवपुर साथ[3]. जि० ८
प्रभु मिळे हुं स्थिरता लहुं, तुज विरह चंचळ भाव;
एकवार जो तन्मय[4] रमुं, तो करुं अचल स्वभाव. जि० ९
प्रभु अछो क्षेत्र विदेहमां, हुं रहुं भरत मझार;
तोपण प्रभुना गुण विषे, राखुं स्वचेतन सार. जि० १०
जो क्षेत्र भेद टळे प्रभु, तो सरे सघळां काज;
सन्मुख भाव अभेदता, करी वरुं आतमराज. जि० ११
पर पुंठ इहां जेहनी, एवडी जे छे स्वाम[5];
हाजर हजूरी ते मळे, नीपजे ते केटलो काम. जि० १२
इंद्र चंद्र नरेंद्रनो, पद न मागुं तिल मात्र;
मागुं प्रभु मुज मनथकी, न वीसरो क्षण मात्र. जि० १३
ज्यां पूर्ण सिद्ध स्वभावनी, नवी करी शकुं निज रिद्ध[6];
त्यां चरण शरण तुमारडो, एहिज मुज नवनिध[7]. जि० १४
म्हारी पूर्व विराधना[8], योगे पडयो ए भेद;
पण वस्तु धर्म विचारतां, तुज मुज नहिं छे भेद. जि० १५
प्रभु ध्यान रंग अभेदथी, करी आत्मभाव अभेद;
छेदी विभाव[9] अनादिनो, अनुभवुं स्वसंवेद[10]. जि० १६

---

१ तमारो—तमारी जेवो. २ मळे—प्राप्त थाय. ३ मोक्ष सहायी, अंते सत्साइ. ४ भेदभाव रहित. ५ स्वामी. ६ रिद्धि. ७ निधि. ८ कसूर. ९ विरुद्ध भाव, विषय कषायादि. १० स्वरूप—आत्मभाव, आत्म दर्शन—साक्षात्कार.

विनवुं अनुभव मित्रने, तु न करीश पर रस चाह[१];
शुद्धात्म रस रंगी[२] थइ, करी पूर्ण शक्ति अबाह[३]. जि० १७

जिनराज सीमंधर प्रभु, तें लह्यो कारण शुद्ध;
हवे आत्म सिद्धि निपाववो, शी ढील करीए बुद्ध. जि० १८

कारणे कार्य सिद्धिनो, करवो घटे न विलंब;
साधवी पूर्णानंदता[४], निज कर्तृता अविलंब. जि० १९

निज शक्ति प्रभु गुणमा रमे, ते करे पूर्णानंद;
गुणगुणी भाव अभेदथी, पीजीये शम-मकरंद[५]. जि० २०

प्रभु सिद्ध बुद्ध महोदयी[६], ध्याने थइ लयलीन[७];
निज देवचंद्र पद आदरे, नित्यात्म[८] रस सुख पीन[९]. जि. २१

इति.

---

१ चाहना अभिलाषा. २ निर्मळ स्वभावमां मग्न. शान्तरस निमग्न.
३ अबाध-विघ्न रहित. ४ स्वभाव पूर्णता. ५ शान्तरस. ६ महा भाग्यवंत.
७ एकाग्र. ८ सहज स्वभाव-परमात्म भाव. ९ पुष्ट मस्त.

सुभाषित रत्नावली.

प्रस्तावना.

विदीत थायके 'सुभाषित रत्नावली' नामनो एक संस्कृत पद्यात्मक ग्रंथ श्री गणेंद्र कृत प्रथम मारा जोवामां आव्यो. तेनी फक्त एकज प्रत मळवाथी अने ते पण अत्यंत अशुद्ध होवाथी उक्त ग्रंथना मूळ साथे तेनुं भाषांतर करवा जे प्रथम विचार प्रभव्यो हतो ते तेवा रुपमां अमलमां मूकी शक्यो नहि. परंतु तेनी शरुआतमां सार रुपे जे श्लोको दाखल कर्या छे ते साथे थोडाक बीजा श्लोकोनुं भाषांतर आदिमां कायम राखीने बाकीना विषयोनुं विवेचन कंइक स्वतंत्र रीते स्वक्षयोपशमानुसारे करवुं दुरस्त धारी उक्त ग्रंथमां कहेवा धारेला विषयो पैकी बनी शक्या तेटला लगभग ४५ विषयो दाखल करवामां आव्या छे. वर्त्तमान समयने अनुसारे जिज्ञासु भाइ बहेनोने उक्त विषयो संबंधी संक्षेपथी बोध पूर्वक शुभ क्रिया रुचिनी वृद्धि थाय अने एम यथाशक्ति ज्ञान अने क्रियाना संमेलनथी वीत-राग प्रभुनी पवित्र आज्ञानुसार स्वहित आचरवा तेओ समर्थ थाय एवी सद्बुद्धिथी प्रेराइने आ प्रस्तुत प्रयत्न करवामां आव्यो छे. आवा शुभाशययुक्त प्रयत्ननी सार्थकता करवा भव्य भाइ बहेनोने कंइक साग्रह भलामण करुं तो ते कंइ खोटुं कहेवाशे नहि. वर्त्तमानकाळे कंइक जागृत थती जिज्ञासा स्वक्षयोपशमानुसार लखी ते जिज्ञासु वर्ग समक्ष मूकवाने जेम हुं स्वकर्तव्य समजुं छुं तेम तेनो यथाशक्ति आदर करवा रुप निज कर्तव्य करवाने कृतज्ञ भाइ बहेनो चूकशे नहि एम समजीने प्रस्तुत ग्रंथ संबंधी प्रस्तावना पूर्ण करुं छुं.

शुभं स्यात् सर्व सत्त्वानाम्. सन्मित्र कर्पूरविजयजी.

श्री जैनहितोपदेश भाग २जो.

सद्भाषितावली.

श्री गणेन्द्रै विरचिता पीठिका.

जिनाधीशं नमस्कृत्य, संसारांबुधितारकं ॥
स्वान्यस्य हित मुद्दिश्य, वक्ष्ये सद्भाषितावलीम् ॥१॥

धर्मं त्वं कुरु दुस्त्यजं, त्यजं महापापं बुधै र्निंदितं,
सम्यक्त्वं भज शर्मदं, त्यज महामिथ्यात्व मूलंच वै ॥
सच्छास्त्रं पठ वृत्त माचर, जयं पंचेन्द्रियाणां च भो,
नारी संगमपि स्वयं त्यज, सदा कामं कलंकास्पदम् ॥२॥

दृष्ट्वा स्त्री सुशरीर रूपमतुलं मध्ये विचारं कुरु,
श्री तीर्थेश्वर पाद सत्कमलयोः सेवां सदा सद्गुरौ ॥
बाह्याभ्यंतर सत्तपः कुरु सदा जिह्वां वशे चानय,
भ्रात स्त्वं त्यज द्वेष राग सहितान् सर्वान् कषायांश्चवै॥३॥

सर्वेषु जीवेषु दयां कुरुत्वं, सत्यंवचोब्रूहि धनं परेषां ॥
वाऽब्रह्म सेवां त्यज सर्वकालं, परिग्रहं मुंच कुयोनिद्वारं ४
वैराग्य सारं सज सर्वकालं, निर्ग्रंथ संगं कुरु मुक्ति बीजं॥
विमुच्य संगं कुजनेषुमित्र, देवार्चनं त्वं कुरु वीतरागे।५।
दानं त्वं कुरु पात्रसारमुनय चैत्यालयं भावनां,
रात्रौ भोजनवर्जनं त्यजमहागार्हस्थ्यभावंसुहृद् ॥
देहं त्वं त्यज भोग सारमपिवै संसार पारं व्रज,
धीरत्वंकुरु मुंच शोकमशुभं शौचं च नीरंविना ॥६॥
सारं त्वं कुरु देहमेव सफलं धृत्वाव्रतं मा त्यज,
संन्यासे मरणं च भोगविषये चाशामिहाऽमुत्र च ॥
मध्यस्थं हितमेव जाप्य जपनं रोगस्य निर्नाशनं,
जीवस्या शरणं चलंच विभवं सारं विवेकं भज ॥ ७॥
संबलं कुरु वै धर्मं, मानुष्यं दुर्लभं भवेत् ॥
अयोग्यं च परित्यज्य, मुक्ति योग्यं समाचर ॥ ८॥

॥ इति पीठिका ॥

सुभाषित रत्नावली मुख प्रवेश.

संसार समुद्रथी तारणहार श्री जिनेश्वर देवने नमस्कार करी स्वपरना हितने माटे हुं सुभाषित रत्नावळीनी व्याख्या करुंछुं १.

भो भद्र ! तुं धर्म आचरण कर, ज्ञानीए निंदेलां महापापनो त्याग कर, सुखदायी समकीतनुं सेवन कर, महा दुःखदायी मिथ्यात्वनो त्याग कर, उत्तम ज्ञाननो अभ्यास कर, व्रतनुं सेवन कर अने पांचे इंद्रियोनुं दमन कर, स्त्रीना संगनो पण त्याग कर, तेमज सदोष काम सेवानो सर्वदा त्याग कर. २

स्त्री संबंधी सुंदर देहनु अतुल रुप देखीने भोभद्र ! तुं मनमां निर्दोष विचार कर. श्री तीर्थंकर देवनां चरण कमळनी सेवा कर, सद्गुरुनी सदा भक्ति कर. वन्ने प्रकारना शुद्ध तपनुं सेवन कर. अने जीभने वश कर, तेमज हे भाइ ! राग द्वेष सहित सर्व कषायनो तुं (काळजीथी) त्याग कर. ३.

हे भद्र ! तुं सर्व जीवोमां दया भाव राख्य, सत्य वाणी वद, परधन अने अब्रह्म सेवानो सर्वथा त्याग कर, तेमज दुर्गतिदायक परिग्रह मूर्च्छाने त्यज. ४

सर्वदा श्रेष्ठ वैराग्यने भज; मुक्तिदायक निर्ग्रंथ मुनिनो संग कर, अने दुर्जनोनो संग त्यजी दे, हे मित्र ! तुं वीतराग देवनी भावथी भक्ति कर. ५

वळी पात्रापात्रनो विवेक राखीने तुं दानदे, जिन चैत्य कराव, रुडी भावना भाव, रात्रिभोजननो त्याग कर, तेमज हे मित्र तुं संसारिक मोहने त्यजी दे; केवळ भोगना साधनरुप एवा देहनी मूर्च्छा त्यज, अने संसारनो पार पाम. तेमज धीरपणुं धारणकर दुःखदायी शोकने त्यज अने मननो मेल दूर कर. ६

श्रेष्ठ एवो मानव देह पामीने सारां व्रत नियम पाळी तेने सफळ करवो, व्रत भंग नहि करवो; समाधिवाळुं मरण करवुं, आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा तजी देवो; मध्यस्थ रही स्वपर हित साधवुं, परमेष्ठिनो जाप जपवो; धर्म रसायण सेववुं वैराग्य भावना भाववी, लक्ष्मी विगेरे क्षणिक वस्तु उपरथी मोह त्यजी देवो अने सारभूत एवा विवेकने भजवो. ७

हे सुभग ! तुं धर्मरुपी संबल (भातुं) साथे लइले, फरी फरी मनुष्य भव पामवो दुर्लभ छे, माटे अयोग्य आचरण त्यजी दइ जेथी जन्म मरणनो अंत आवे एवुं योग्य आचरण सेवीले. ८

" इति प्रस्तावना. "

धर्मं कुरु.

धर्मं करोति यो नित्यं, स पूज्य स्त्रिदशेश्वरैः ॥
लक्ष्मीस्तं स्वयमायाति, भुवन त्रय संस्थिता. ॥१॥

धर्मवतोहि जीवस्य, भृत्यः कल्पद्रुमो भवेत् ॥
चिंतामणिः कर्म करः, कामधेनुश्च किंकरी. ॥ १० ॥
धर्मेण पुत्र पौत्रादि, सर्वं संपद्यते नृणां; ॥
गृह वाहन वस्तूनि, राज्यालंकरणानि च. ॥ ११ ॥
वरं मुहूर्त मेकंच, धर्म युक्तस्य जीवितं ॥
तद्धीनस्य वृथा वर्ष, कोटा कोटि विशेषतः ॥ १२ ॥
यम दम समयातं, सर्व कल्याण बीजं ।
सुगति गमन हेतु, तीर्थनाथैः प्रणीतं; ॥
भवजलनिधिपोतं, सार पाथेय मुच्चै;
त्यज सकल विकारं, धर्ममाराधय त्वम्. ॥ १३ ॥

पापंत्यज.

पापं शत्रुं परं विद्धि, श्वभ्र तिर्यग्गतिप्रदं ॥
रोग क्लेशादि भांडारं, सर्व दुखाकरं नृणाम् ॥ १४ ॥
जीवंतोऽपि मृता ज्ञेया, धर्म हीनाहि मानवाः ॥
मृता धर्मेण संयुक्ता, इहा मुत्र च जीविताः ॥१५॥
पापवतो हि नास्त्यस्य, धन धान्य गृहादिकं ॥

वस्त्रालंकार सद्वस्तु, दुःख क्लेशानि संति च ॥ १६ ॥
मित्र शत्रु च विज्ञेयो, पुण्य पापे शरीरिणां ॥
जीवेन व्रजतः सार्धं, सुखदुःखफलप्रदम् ॥ १७ ॥
सकल भव निदानं, रोग शोकादि बीजं ॥
नरक गमन हेतु सर्व दारिद्र मुलम् ॥
इह परभव शत्रुं, दुःख दानैक दक्षं ॥
त्यंज मुनिवर निन्धं पाप बीजं समस्तम् ॥ १८ ॥

---

१ शिष्ट सेवित सन्मार्गनुं सेवन कर.

जे नित्य स्वकर्तव्य समजीने सन्मार्गनुं सेवन करे छे ते इंद्रोने पण मान्य थाय छे, अने सकल लक्ष्मी तेने स्वयं आवी मळे छे. पुन्यशाळीने पगले पगले निधान छे. ९ सन्मार्गगामी-धर्मी जीवने कल्पवृक्ष सेवक थइने रहे छे, चिंतामणि रत्न तेनुं चिंतित कार्य साधी आपे छे, अने कामधेनू तेना सकल मनोरथ पूरे छे. १० धर्म सेवनवडे प्राणीओने पुत्र पौत्रादिक प्राप्त थाय छे तेमज राज्यना अलंकारभूत एवां घर वाहन विगेरे वस्तुओ पण सहजे मळे छे. ११ धर्मे करीने युक्त एवा जीवनुं बे घडी जेटलुं पण जीवतर लेखे छे, अने धर्महीन जीवनुं तो कोटा कोटी कल्प सुधीनुं पण जीवन

नकामुं छे. १२ ते माटे हे भव्य ! यम–महाव्रतादि अने दम–इंद्रिय-दमन आदिथी युक्त, सर्व कल्याणनुं मूळ कारण, सद्गति गमननुं हेतु, भव समुद्रथी पार पमाडवाने प्रवहण तुल्य अने भवान्तरमां सार शंबलरूप एवा ऋषभादिक तीर्थनाथोए प्रगट करेला धर्मनुं तुं सर्वविकार रहितपणे सेवन कर. १३

२ शिष्ट निंदित पाप कार्यनो परिहार कर.

प्राणीयोने नर्क तिर्यंच गति आपनार, रोग शोकादि दुःखना निधान, अने सकल क्लेशनां स्थानरुप पापने तुं परम शत्रु समज. १४ धर्महीन मानवोने जीवता छतां पण मूआ मानवा, अने धर्मे करी युक्त मानवो मूआ छतां आलोक अने परलोकमां जीवताज जाणवा. १५ पापवंत प्राणीने धन धान्य गृहादिक तथा वस्त्र अलंकारादिक शुभवस्तु प्राप्त थइ शकती नथी, तेने तो केवळ दुःख अने क्लेशज प्राप्त थाय छे. १६ पुण्य अने पाप प्राणीयोना मित्र अने शत्रु छे, एम जाणवुं, केमके सुख दुःख फळने आपनारा ते बंने प्राणीनी साथेज जाय छे. १७ भव भ्रमणना निदानरुप अने रोग शोकादिकना बीज रुप नर्क गमनना हेतु रुप अने सर्व दारिद्रनां मूळरुप आ भव अने परभवना शत्रुरुप अने दुःख देवामां एकारुप एवां समस्त पापनां निंद्य कारणोने हे सुव्रत ! तुं तजीदे. समस्त पापकार्यथी तदन अलगा रहेवुं एज सार छे. १८

सम्यक्त्वं भज.

सम्यग् दर्शन संशुद्धः सत्य मानुच्यते बुधैः ॥
सम्यक्त्वेन विना जीवः पशुरेव न संशयः ॥ १९ ॥
सम्यक्त्व युक्त जीवस्य, हस्ते चिंतामणिर्भवेत् ॥
कल्पवृक्षो गृहे तस्य, कामगव्यनु गामिनी ॥ २० ॥
सम्यक्त्वाऽलंकृतो यस्तु, मुक्ति श्री स्तं वरिष्यति ॥
स्वर्गश्रीः स्वय मायाति, राज लक्ष्मी सुखी भवेत् ।२१।
यत्र कुत्रापि सद् दृष्टिः पूज्यः स्याद्भुवनैरपि ॥
सम्यक्त्वेन विना साधुः निन्दनीयः पदे पदे ॥ २२॥
सकल सुख निधानं, धर्म वृक्षस्य बीजं ॥
जनन जलधि पोतं, भव्य सत्त्वैकपात्रं ॥
दुरित तरु कुठारं, ज्ञान चारित्र मूलं ॥
त्यज सकल कुधर्मं, दर्शनं त्वं भजस्व ॥ २३ ॥
भाषा शुद्धि विवेक वाक्य कुशलः शंकादि दोषोज्झितः।
गंभीरः प्रशमश्रिया परिगतो वश्येन्द्रियो धैर्यवान् ॥

..........निश्चयो विरतितो, भक्तिश्च देवे गुरा,
चौचित्यादि गुणैरलंकृत तनुः सम्यक्त्व योग्यो भवेत २५

---

३ निर्मळ श्रध्धानकर.

तत्व श्रद्धाथी संस्कार पामेला जीवोज साचा गणाय एम समयना जाण कहे छे. शुद्ध श्रद्धा विनाना जीव तो केवळ पशु रुपज छे. एमां संशय नथी. समकितवंत जीवना हाथमांज चिंतामणि रत्न छे, तेना आंगणामांज कल्पवृक्ष उग्यो छे. अने कामधेनु तो तेनी सहचारिणीज छे. जे सम्यकत्व भूषणथी भूषित छे तेनेज मुक्ति कन्या वरनारी छे. स्वर्ग लक्ष्मी तो तेने स्वयं आवी मळे छे. अने राजलक्ष्मीनुं तो कहेवुंज शुं? समकीतवंत जीव सर्व रीते सुखीज थाय छे. समकित दृष्टि जीव त्रणे भुवनमां गमे त्यां पूजानिक थाय छे अने समकित गुण विनानो ते पगले पगले निंदापात्र बने छे. २२

"वीतराग प्रभुनां एकांत हितकारी वचननुं सावधानपणे श्रवण करीने तेमां कृत्याकृत्य, त्याज्यात्याज्य अने हिताहितना निर्णय पूर्वक श्रद्धा-आस्ता बेसवी तेनु नाम समकित छे." शंका, कंखा, फळ संदेह, मिथ्यात्विनी प्रशंसा, अने तेनो परिचय ए पांच दूषणो समकितवंतने दूर करवानां छे. अने शुद्ध देवगुरु तथा धर्म-तीर्थनी

भक्ति प्रभावनादिक उत्तम भूषणो तेणे यत्नथी धारण करवानां छे. शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने, आस्तिकता रुप पांच लक्षण पण समकितवंत जीवमां अवश्य होवां जोइये. एटले के अपराधि उपर पण क्षमा, अविकारी एवा मोक्ष सुखनी अभिलाषा; संसारथी विरक्तता, दुःखी उपर दया अने वीतरागना वचननी पूर्ण प्रतीति एथी समकीत ओळखाय छे." एम समजीने हे भद्र! तुं सकल सुखनुं निधान, धर्मवृक्षनु बीज, भवनिधि पार पमाडनारुं पोत, भव्यतावंतनेज प्राप्त थनारुं, पाप तरुनु उच्छेदनारुं अने ज्ञान-चारित्रनु मूळ एवुं समकित सकल कुधर्मना त्याग पूर्वक तुं अंगीकार कर. २३

भाषा, बुद्धि, विवेक अने वाक्यमां कुशळ, शंकादि दोषरहित, गंभीर, समतावंत, जितेन्द्रिय, धैर्यवान्, तत्त्वग्राही, देव-गुरु भक्त, अने उचितता विगेरे गुणोथी भूषित एवो भव्य आत्माज समकित पामवाने अधिकारी छे. २४

४ मिथ्यात्वनो त्याग कर.

अज्ञानथी अथवा सम्यग् ज्ञानना खामीथी सत्यासत्य या तत्त्वातत्त्व संबंधी शुद्ध समज विनानी अथवा कदाग्रहवाळी विपरीत बुद्धिनु नाम मिथ्यात्व छे, तेथी जीव सत्य मार्गने त्यजी असत्य मार्गे दोरवाइ जाय छे. अथवा सत्य मार्गने सारी रीते समजी शकतो नथी, तेमज क्वचित गाढ मिथ्यात्व योगे सन्मार्गने त्यजी असत् मार्गनु

स्थापन करवा भारे परिश्रम करी अनेक भोळा जीवोने उन्मार्गे खेंची जाय छे. सत्य मार्गमां खोटी शंकाओ करवाथी अथवा मिथ्यात्विओनो परिचय करी तेमनां परस्पर असंबद्ध वचन सांभळवाथी या तेमनी प्रशंसा करवाथी समकितवंत जीवने पण उक्त महा दोषनी प्राप्ति थइ जाय छे, के जेने पछीथी हठावी काढवा भारे परिश्रम करवानी खास जरुर पडे छे. उक्त मिथ्यात्व योगे जीवो भिन्न भिन्न विपरीत करणी करवामां प्रवर्ते छे. तेथी उक्त दोषना प्रकार तथा तेना स्वामीने जाणवानी जरुर छे.

मिथ्यात्वना प्रकार तथा उक्त दोषने सेवनारनां नाम.

१ आभिग्रहिक–परीक्षा रहित केवळ स्वसमय प्रमाणे एकांत वादी दर्शनो.

२ अनभिग्रहिक–विवेक शून्यपणे सत्यासत्यने समज्या विना सर्व दर्शनने समान समजनार.

३ सांशयिक–सत्य सर्वज्ञ वचनमां (न्याय विरुद्ध) शंका धारनार मूढात्मा.

४ अनाभोगिक–उपयोग शून्यपणे मूर्च्छित दशामां वर्तनार एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय विगेरे.

५ आभिनिवेशिक—जाणी जोइने हठ कदाग्रहथी सत्य वस्तुनो अनादर करीने असत्य वस्तु (धर्म) नो स्वीकार करी तेनुंज स्थापन करनार निन्हवो विगेरे.

उक्त मिथ्यात्व महा दोषथी भरेला जीवो सत्य धर्मने सेवी शकता नथी. जेम ज्वरातुर जीवने दूध साकर भावतां नथी तेम मिथ्यामतिने सत्य धर्म रुचतो नथी. जेम रोगीने कुपथ्य व्हालुं लागे छे तेम तेने कुधर्म प्रिय लागे छे, छतां परोपकारैकनिष्ट सद्वैद्य समान सद्गुरु मिथ्यामतिने वारवा अने शुभ मतिने धारवा भव्य जीवोने नीचे मुजब हितोपदेश आपे छे—हे भव्यो! सकल पापनु मूळ, दुःख वृक्षनु बीज, नर्कगृहनु द्वार, स्वर्ग, अपवर्गनु भारे विघ्न, परम पुरुष निंद्य, अने मूढ लोकोए सेवित एवा सकल असार मिथ्यात्व वीजनो तमे त्याग करो के जेथी समकित अमृतनु सेवन करी तमे अक्षय सुखना अधिकारी थाओ."

सम्यग् ज्ञाननु सेवन कर.

जेना वडे (आत्म) वस्तु धर्मनु यथार्थ भान थाय अने अज्ञान अंधकार दूर थाय तेमज जेथी तत्काळ मिथ्यात्व भ्रमने दूर करनार समकित गुण प्रगट थाय तेने ज्ञानी पुरुषो सम्यग् ज्ञान कहे छे.

सम्यग् ज्ञानीने गमे तेवुं शास्त्र समपणे परिणमे छे. गमे तेमां-

थी ते सार मात्र ग्रही शके छे. टुंकाणमां मात्र परमार्थथी ते सुखे स्वपर हित साधी शके छे. अज्ञानी या शुष्कज्ञानी तेम कदापि करी शकतो नथी.

सम्यग् ज्ञानीने सम्यग् ज्ञानना बळथी समजायेला राग द्वेषादिक अंतरंग शत्रुवर्गने दमवा मुख्य लक्ष रहे छे. तेनी सकल करणी तेवा मुख्य लक्षथीज प्रवर्ते छे. तेथी तेने आ दृश्य दुनीया केवळ स्वार्थमय भासे छे. जे एक वस्तुने संपूर्ण जाणे छे ते सर्व वस्तुने संपूर्ण जाणे छे, एटले के जे सर्व भावने सर्वथा जाणे छे. तेज एक भावने संपूर्ण जाणी शके छे. आ वातनी खात्री सम्यग् ज्ञानथी सारी रीते थइ शके छे. माटेज सत्समागम करीने या परोपकारशील महा पुरुष प्रणीत परमागमनी सहाय मेळवीने सम्यग् ज्ञाननो खप कर्या करवो योग्य छे. एवा खपी पुरुषोज परम पदना अधिकारी थइ शके छे. जेम पूर्वे एक पण पदनु सम्यग् रीत्या श्रवण, मनन अने निदिध्यासन करवाथी कइक भाग्यवंत भव्योनु कल्याण थयुं छे, तेम सर्वकाळे थइ शके तेम छे. ज्यारे एक पण पद संबंधी सम्यग् ज्ञाननो आवो अपूर्व महिमा छे तो पछी तेवां अनेक पदवाळा सम्यग् ज्ञाननुं तो कहेवुंज शुं ?

ज्ञानी पुरुषो सम्यग् ज्ञानने अपूर्व अमृत, अपूर्व रसायण अने अपूर्व ऐश्वर्य कहिने बोलावे छे. अने ते यथार्थ छे, केमके तेथीज

आत्मा परमपदनो भोगी थइ शके छे.

सम्यग् ज्ञानयुक्त आत्माज स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी लक्ष्मीनो अधिकारी थाय छे. पण अज्ञान अने अविवेकात्मातो दुःखमय संसार सागरमांज भ्रमण करे छे.

ज्ञानवंत–विवेकी गमे त्यां कर्म–मुक्त थाय छे, त्यारे अज्ञानी प्राणी ज्यां त्यां कर्मथी बंधाय छे.

ज्ञानहीन प्राणी पुन्य, पाप, गुण अवगुण, तथा त्याज्यात्याज्य विगेरेना विवेकने जाणी शकता नथी. जेम जन्मांध जीव सूर्यना स्वरुपने जाणी शकता नथी तेम अज्ञानी अविवेकी जीव पण हिताहित, उचितानुचित, तेमज भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय संबंधी गुणदोषनु यथार्थ स्वरुप समजवाने समर्थ थइ शकतो नथी.

उक्त हेतु माटे सम्यग् ज्ञाननुं जेम बने तेम आराधन करवा शास्त्रकार आपणुं लक्ष खेंचवा भार दइने कहे छे के—

"हे भव्यो ! निर्मळ गुणनुं निधान, समस्त विज्ञाननुं बीज मुमुक्षुजनोए सेववा योग्य, सर्व तत्त्वप्रकाशक, पापतरुनुं निकंदक अने मनरूप मदोन्मत्त हाथीनो गर्व गाळवाने केसरी सिंह समान, सर्वज्ञ भाषित सम्यग् ज्ञाननुं तमे जरुर यथाशक्ति आराधन करो. तेनुं विराधन तो तमे कदापि करशो नहि.

---

६ सदाचारनु सेवन कर.

आचारनी शुद्धि करवी, सदाचरणनुं सेवन करवुं एज सम्यग् ज्ञान-दर्शननुं फळ छे. सम्यग् ज्ञान-दर्शन छतां सदाचार (सम्यक् चारित्र गुण) प्राप्त थयो नहि तो वांझीया वृक्षनी पेरे ते ज्ञान-दर्शनने अध्यात्मी पुरुषो नकामां कहे छे, एम समजी जेम बने तेम सद्व्रतो सेववा आत्मार्थी जनोए अहोनिश उजमाळ रहेवुंज योग्य छे. दश दृष्टांतथी दुर्लभ मनुष्यदेह पाम्यानुं खरुं फळ एजछे.

शुद्ध चारित्र युक्त एक दिवसनुं पण जीवित लेखे छे, परंतु चारित्रहीन कोटी वर्षनुं पण जीवन नकामुं छे. शुभकरणी विनाना दिवस मात्र वांझीया लेखवाना छे.

संघयण-शरीरवळ हीणुं छतां जे चारित्रने सम्यग् आचरे छे ते उत्कृष्ट शरीर वळनी अपेक्षाए सहस्रगणुं फळ पामे छे. संघयणनुं बानुं काढीने चारित्र गुणमां शिथिल थवाने बदले उलटो अधिक प्रयत्न करवो युक्त छे. छतां शिथिलताने भजनार प्रगट स्वपरनां अहितनाज भागी थाय छे.

चारित्रवंत स्व मर्यादाने सेवतो जे जे वस्तुने इच्छे छे तेने ते तत्काळ आवी मळे छे एवो सम्यग् चारित्रनो महिमा प्रगट छतां तेमां कोण प्रमादी थशे ?

हीन संघयण छतां जे एक वर्षनी दीक्षा बराबर पाळवी ते उत्कृष्ट संघयणनी सहस्र वर्षनी दीक्षा बराबर समजवी युक्त छे. एम विचारी तप, जप, ज्ञान, ध्यान विगेरे सदनुष्ठानमां सदा सावधानपणे वर्तवामांज स्वपरहित समायेलुं जाणवुं.

चारित्रथी चलायमान थइ भ्रष्ट थयेलो जीव जीवतो छतो मूआ बरोबर छे. अने चारित्र संयुक्त आत्मा मूआ छतां उभय लोकमां अमर थइ रहे छे. उक्त हेतुथी चारित्र गुणनी पुष्टि माटे शास्त्रकार भार मुकीने उपदिशे छे के—

" सकल मदरहित, देवमान्य, सर्व तीर्थनाथोए सादर सेववायोग्य महा गुणसागर पंडितोए सेवित, मुक्ति सुखनुं अवंध्य बीज, निर्मळ गुणनिधान, सर्व कल्याणनुं मूळ कारण, अने सकळ विकाररहित एवुं निर्मळ चारित्र हे भव्यो ! तमे भावथी भजो, जेथी अक्षय अनंत सुखने तमे सहजे वरो. "

---

७ इंद्रियोनुं दमन कर.

नायक एवा मने प्रेरेला इंद्रिय—चोरोए धर्म धननुं हरण करीने बापडा लोकोने आकुळव्याकुळ करी मूक्या छे. तेथी तेमने वश करवाने भगीरथ प्रयत्न करवानी जरुर छे. अन्यथा ते सर्वने वश करी जीवनी भारे दुर्दशा करशे.

जेम इंधनथी अग्नि तृप्त थतो नथी अने गमे तेटली नदीयोथी पण दरीयो पूरातो नथी तेम विषयसुखथी कदापि पण इंद्रियो तृप्त थवानी नथी. एम मध्यस्थपणे विचार करी विवेकथी संतोषवृत्ति धारवी योग्य छे.

जेणे वैराग्य खड्गथी इंद्रिय चोरोने हण्या छे तेनोज खरेखर मोक्ष थाय छे. बाकी बीजा कायाक्लेशो वडे शुं वळवानुं छे? माटे प्रथम मन अने इंद्रियोनेज वश करी लेवानी जरुर छे. ते विना करवामां आवती कष्टकरणी कष्टहरणी थवानी नथी.

मननो जय करीने जेमणे इंद्रियोनो निग्रह कर्यो नथी तेमणे साधु-मुद्रा धारण करीने केवळ पोताना आत्माने ठग्योज छे. एम निश्चय समजवुं.

जे पोतानी इंद्रियोने पण जीतवाने समर्थ थइ शकता नथी तेमनी दीक्षा के तपस्यामां कांइ माल जेवुं नथी. इंद्रियोना गुलाम थइने उलटा ते धर्मनी अपभ्राजना रुप महा अनर्थने पेदा करे छे. माटे दीक्षा ग्रहण कर्या पहेलांज योग्य विचार करवानी जरुर छे. दीक्षा लीधा बाद तो इंद्रियो उपर संपूर्ण काबु राखवा अहोनिश लक्ष राखी रहेवानी खास जरुर छे. केमके विरक्त आत्माने पण ते विषयपासमां पाडी नांखतां चूकती नथी.

इंद्रियरुपी दुर्धर चोरो जीवनां व्रतज्ञानादि गुण रत्नथी भरेला जगतारक भांडने क्षणवारमां स्खलना पमाडे छे. तेथी जे मुनीश्वरो संनद्ध थइने महाव्रतरुपी वाणो सावधानपणे अही मर्यादामां रह्या छतां ध्यानरुप तीरथी तेमने मर्ममां हणे छे, तेओज सुखसमाधे मोक्षपुरीमां जइ शके छे.

---

८ स्त्रीनो संग-परिचय तज.

स्त्री केवळ काम विकारनुं घर छे, एम समजी साधु जनोए तेनी संगति वारवी योग्य ज छे. भला भला पण साधु स्त्री संगतथी निशान चूकी गया छे. तेथी ब्रह्मचारीजनोए स्त्रीओना परिचयथी दूर रहेवुं ज हितकारी छे. एम वर्तवाथी ज नवकोटि शुद्ध ब्रह्मचर्यनी रक्षा थइ शके छे.

दुनियामां गहनमां गहन स्त्री चरित्र ज छे. तेथी जेम बने तेम साधु पुरुषोए तेनाथी चेततां रहेवानी जरुर छे. जेवो मूषकने मार्जारी तरफथी भय राखवानी जरुर छे. तेम ब्रह्मचारी साधुने पण स्त्री समुदाय तरफथी भय राखवानी जरुर पडे छे, स्त्रीजनोनो परिचय साधु जनोने हितकारी नथी ज ए निर्विवाद सिद्ध छे.

अग्निथी लालचोळ थयेली लोहमय पूतळीनुं आलिंगन करवुं सारु पण नर्कना द्वारभूत नारीना नितंबनुं सेवन करवुं सारुं नथीज.

स्त्रीने एक दूझती विषनी वेल छे एम समजीने तेनाथी दूर रहेवुं.

स्त्रीनां मोहमय वचन विलास या हावभावथी लोभाइ प्रबळ कामथी पीडित थइ अंते आप खुद चालनार साधु ब्रह्म व्रतथी भ्रष्ट थाय छे.

स्त्रीना चिर परिचयथी साधु कुलवालुकनी पेरें मार्ग भ्रष्ट थइने महा विडंबना पात्र थाय छे, अने क्षणिक सुखने माटे अक्षय सुखथी चूकी जाय छे. तेथी आत्मार्थी साधु जनोए स्त्री संगथी दूर रहेवुं ज युक्त छे.

ज्यारे चित्रादिमां निर्माण करेली नारी पण मननो क्षोभ करे छे तो पछी साक्षात् जीवती ज्योत (महामाया) नारी साथे संसर्ग वार्तादिक करतां केम कायम रही शकाय ए जरुर विचारवा जेवुं छे.

सर्प, व्याघ्र, चौरादिकनी साथे सहवास करतां एटलुं नुकशान नथी जेटलुं स्त्रीनी साथे क्षणमात्र रहेतां संभवे. एम समजीने शाणा साधुओए क्षणमात्र पण स्वच्छंदपणे स्त्रीनो संग या परिचय करवो योग्य नथी.

सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तेथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टिमांज झेर रहेलुं छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चाल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं ? स्त्रीसंगी साधु जरूर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजब स्त्रीना अंगोपांगने पण दृष्टि दइने नीरखता नथी, विकार बुद्धिथी (पशु वृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय सुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोदधिने सहजमां तरीने अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाशयोनांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कह्युं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं ॥
वर कीर्त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं.॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण सुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ठ एवी कीर्त्ति–कौमु-दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवुं आ प्रगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

---

९ विषय रसनो त्याग कर.

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुर्गंधी एवी स्त्रीनी योनिमां कामांन्ध माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. भवभीरु विवेकात्मा तो स्वप्नमां पण तेनो संग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गंधी एवा श्लेष्मा-दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्ध माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कृमा-कुळ स्त्रीना उदरमां कामांन्ध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीथी वींटेलुं अने वस्त्राभरणथी भूषित करेलुं स्त्रीनुं रुप जोइने हे! भद्र! तुं विवेकथी विचारकर. पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक झंपलाइ पडीश नहि. नहितो छेवट पश्चाताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु-

सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तेथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टिमांज झेर रहेलुं छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चाल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं? स्त्रीसंगी साधु जरुर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजव स्त्रीना अंगोपांगने पण दृष्टि दइने नीरखता नथी, विकार बुद्धिथी (पशु वृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय सुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोदधिने सहजमां तरीने अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाशयोनांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कह्युं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं ॥
वर कीर्त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं ॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण सुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ठ एवी कीर्त्ति-कौमु-
दीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवुं आ प्रगट
अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

---

९ विषय रसनो त्याग कर.

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय,
अशुचि अने दुर्गंधी एवी स्त्रीनी योनिमां कामांन्ध माणस कीडानी
पेरे क्रीडा करे छे. भवभीरु विवेकात्मा तो स्वप्नमां पण तेनो संग
इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गंधी एवा श्लेष्मा-
दिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्ध माणस श्वाननी पेरे
चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कुमा-
कुळ स्त्रीना उदरमां कामांन्ध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीथी वींटेलुं अने वस्त्राभरणथी भूषित करेलुं स्त्रीनुं
रुप जोइने हे! भद्र! तुं विवेकथी विचारकर. पण तेमां पतंगनी पेरे
तुं एकाएक झंपलाइ पडीश नहि. नहितो छेवट पश्चाताप करीश.
स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु-

सापणी स्पर्श करीने करडे छे अने नारी तो दूरथीज डंस मारे छे. तेथी एम समजाय छे के दृष्टि विष सर्पनी जेम तेनी दृष्टिमांज झेर रहेलुं छे. एवी स्त्रीनुं नाम सांभळतांज स्थानान्तर चाल्या जवुं जोइए.

सर्व रीते संयम प्राणने हरनारी होवाथी नारीने शास्त्रकारे प्रत्यक्ष राक्षसी कहीने बोलावी छे. छतां तेनो विश्वास करनार साधुना चरित्र विषे वधारे शुं कहेवुं? स्त्रीसंगी साधु जरुर संयमथी भ्रष्ट थइ जाय छे.

सारांश ए छे के भवभीरु होवाथी जेओ भगवंतनी आज्ञा मुजब स्त्रीना अंगोपांगने पण दृष्टि दइने नीरखता नथी, विकार बुद्धिथी (पशु वृत्तिथी) तेनी साथे वात पण करता नथी, अने मनथी विषय सुखनी भावना करता नथी, एम सर्व रीते सावधान थइने ब्रह्मचर्यनुं पालन करे छे तेज महात्माओ आ दुस्तर भवोदधिने सहजमां तरीने अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे. एवा महाशयोनांज शुद्ध चरित्र अनुकरण करवा योग्य छे. वळी कह्युं छे के—

न च राजभयं न च चोरभयं, इहलोक सुखं परलोक हितं ॥
वर कीर्त्तिकरं नरदेवनतं, श्रमणत्व मिदं रमणीयतरं.॥१॥

जेने नथी तो राज भय अने नथी तो चोरभय, आ लोकमां

पण सुखकर अने परलोकमां पण हितकर, श्रेष्ठ एवी कीर्त्ति–कौमुदीने विस्तारनार अने जेने नर देवादिक नमेला छे, एवुं आ प्रगट अनुभवातुं साधुपणुंज श्रेयःकारी छे माटे तेमां विशेषे आदर करवो.

---

९ विषय रसनो त्याग कर.

जाणे केवळ नर्कनुंज स्थान न होय! एवी असार निंदनीय, अशुचि अने दुर्गंधी एवी स्त्रीनी योनिमां कामांन्ध माणस कीडानी पेरे क्रीडा करे छे. भवभीरु विवेकात्मा तो स्वप्नमां पण तेनो संग इच्छतो नथी.

चामडाथी वींटेला हाडपिंजरवाळा अने दुर्गंधी एवा श्लेष्मादिकथी भरेला कामिनीना मुखने कामान्ध माणस श्वाननी पेरे चाटे छे

मांसना लोचा जेवा स्त्रीनां स्तनो अने विष्टादिथी भरेला कृमाकुळ स्त्रीना उदरमां कामांन्ध माणस कागडानी जेम क्रीडा करे छे.

गोरी चामडीथी वींटेलुं अने वस्त्राभरणथी भूषित करेलुं स्त्रीनुं रूप जोइने हे! भद्र! तुं विवेकथी विचारकर. पण तेमां पतंगनी पेरे तुं एकाएक झंपलाइ पडीश नहि. नहितो छेवट पश्चाताप करीश. स्वभाविक रीतेज अधिक अशुचिथी भरेला अने अनेक द्वारथी अशु-

चिने वहन करतां छतां चामडाथी मढेला स्त्रीना देहनुं अंतर स्वरुप विचारीने तुं विवेकथी तेनो परिहार कर.

कामान्ध माणस कामरागने वश थयो थको दोषाकुळ स्त्रीमां गुणनोज आरोप कर्या करे छे, अने विषयरसना त्यागी एवा विवेकी हंसनी पण हांसी करी स्वउत्कर्ष बतावया मागे छे. पण अंते तो काच ते काच अने मणि ते मणिज छे.

घूड दिवसे देखतुं नथी अने कागडो रात्रे देखतो नथी पण कामांन्ध तो रात्रे के दिवसे कंइपण देखी शकतो नथी. मोह महा मदिराना जोरथी तेनी शुद्धबुद्ध खोवाइ जवाथी ते मूर्च्छितप्रायः थइ जाय छे.

कामान्ध माणस जिह्वा अने कामने वश पडयो जे जे पापकर्म करे छे तेनां अगण्य फळ ते नरकादिक गतिमां जइने भोगवे छे.

कामान्ध माणस सुख, दुःख, हिताहित, पुण्य, पाप तेमज समीपस्थ वध, बंध अने मरणने पण जाणी शकतो नथी. तेने दुर्गतिनो डर होतो नथी, तेथी ते निःशंकपणे पशुक्रीडा (मैथुन—पशुक्रिया) करवामांज मशगूल रहे छे. अने सांढनी जेम स्वच्छंदपणे म्हालवामांज सार समजे छे.

तिल मात्र सुखने माटे कामान्ध माणस सारां व्रतने तजीदे छे.

अने आ लोक अने परलोकमां मेरु जेवडां मोटां दुःख माथे व्होरी ले छे.

विषम एवा काम-बाणथी पीडित थइ जे धर्मरूप चिंतामणिने तजी देछे, ते हतभाग्य अनेक जन्ममरण संबंधी दुःखने साधी दुर्गतिमां जाय छे.

---

१० श्री वीतराग देवनी भक्ति कर.

जे सुबुद्धि पुरुष एकाग्रचित्ते सदा वीतराग प्रभुनी सेवा करे छे ते स्वर्ग अने राज्यादि संबंधी सर्व सुखने भोगवीने अंते अक्षय पदने पामे छे.

वीतराग प्रभुने तजीने जे राग द्वेष युक्त देवने भजे छे ते दुर्मति चिंतामणि रत्नने त्यजीने धूळनुं ढेफुं हाथमां लेवा जेवुं करे छे.

जिनेश्वर देवनुं स्मरण मात्र करवाथी रोग शोक भय क्लेश ग्रह साकिणि अने दारिद्र्यादिक सर्व दुःख दूर थइ जाय छे.

जे मुग्ध अनेक देव अने अनेक गुरुने सेवे छे ते कार्याकार्य संबंधी विचार शून्य उन्मत्त जेवो छे, एम जाणवुं.

भव्य कमळोने प्रबोध करनार, सर्व दुःखने दूर करनार, त्रिभु-

वनपतिने सेववा योग्य, धर्म रत्नना सागर, स्वपरने अत्यंत हितकारी स्वर्ग अने मोक्षसुखना मुख्य साधनभूत अने सकळ गुणनानिधान एवा तीर्थनाथ श्री वीतरागप्रभुनी हे भव्यो! तमे भावथी भक्ति करो जेथी अनुक्रमे सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्ररुप रत्नत्रयीने पामी तेनुं सम्यग् आराधन करीने तमे अक्षय—अविनाशी सुखना संपूर्ण अधिकारी थाओ?

---

११ सद्गुरुनुं सेवन कर.

जे गुरु ज्ञान अने चारित्रथी युक्त छतां धर्मोपदेशक, निर्लोभी अने भव्य जीवोनो निस्तार करनार छे, तेनुंज आत्महितैषीए सेवन करवुं युक्त छे.

जे सद्गुरु स्वयं भवसमुद्र तरी शके छे तेज अन्य जीवोने पण तारी शके छे. जे पोतेज भवसागरमां डूबे छे ते परने शी रीते तारी शकशे? एम विचारीने सदोष—सारंभी गुरुनो त्याग करवो.

सद्गुरु सेवक सुबुद्धि पुरुष स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी सुखने पामे छे. पण कुगुरुकामी दुर्बुद्धि तो नरक अने तिर्यंच गतिनेज प्राप्त थाय छे.

जे निर्ग्रंथ गुरुने तजीने कुगुरुनी सेवा करेछे ते घरना आंगणे उगेला कल्पवृक्षने छेदीने धंतूराने वाववा जेवुंज करे छे.

मातापिता अने सर्व कुटुंवादिक, दुर्गतिमां पडता जीवनो उद्धार करवा असमर्थ छे. पण एक सद्गुरु, पवित्र धर्मनी सहायथी अनेक भव्य जीवोने आ भवसायरथी तारवाने समर्थ थइ शके छे.

जेने स्वपर संवंधी सम्यग् विचार वर्ते छे, जे संसारना पारने पामेला छे, वळी निरुपम गुणे करीने युक्त, ज्ञान विज्ञानमां दक्ष, जीतेन्द्रिय, भव्य जीवोने तारवा पोत समान, अने सकळ दोषरहित एवा सद्गुरुनी हे भव्यो ! तमे भावथी भक्ति करो.

---

१२ तप करवामां यथाशक्ति प्रयत्न कर.

जे सुवुद्धि तपनुं स्वरुप समजीने केवळ आत्मकल्याण माटे तेनुं सेवन करे छे तेने अनुक्रमे सर्व कर्मनो अंत थतां मुक्तिकमळा पण वरे छे तो पछी स्वर्ग संवंधी सुख अने राज्यना सुखनुं तो कहेवुंज शुं ? तेवां सुख तो प्रासंगिक होवाथी सहजे संपजे छे.

अनशन, ऊनोदरी वृत्ति संक्षेप, रसत्याग, कायक्लेश अने संलीनतारुप वाह्यतप तथा प्रायश्चित, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान अने काउस्सग्ग (समाधि) रुप अभ्यंतर तपने जे विवेकथी सेवे छे ते महाशयनी सकळ मनोरथमाळा फळीभूत थाय छे.

वाह्यतपथी जेम अभ्यंतरतपनी पुष्टि थाय तेम लक्ष राखवानी खास जरुर छे. वळी जेम धर्मसाधनमां वधारे सावधानपणुं रहे,

वनपतिने सेववा योग्य, धर्म रत्नना सागर, स्वपरने अत्यंत हितकारी स्वर्ग अने मोक्षसुखना मुख्य साधनभूत अने सकळ गुणनानिधान एवा तीर्थनाथ श्री वीतरागप्रभुनी हे भव्यो ! तमे भावथी भक्ति करो जेथी अनुक्रमे सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्ररुप रत्नत्रयीने पामी तेनुं सम्यग् आराधन करीने तमे अक्षय—अविनाशी सुखना संपूर्ण अधिकारी थाओ ?

---

११ सद्गुरुनुं सेवन कर.

जे गुरु ज्ञान अने चारित्रथी युक्त छतां धर्मोपदेशक, निर्लोभी अने भव्य जीवोनो निस्तार करनार छे, तेनुंज आत्महितैषीए सेवन करवुं युक्त छे.

जे सद्गुरु स्वयं भवसमुद्र तरी शके छे तेज अन्य जीवोने पण तारी शके छे. जे पोतेज भवसागरमां डूबे छे ते परने शी रीते तारी शकशे ? एम विचारीने सदोष—सारंभी गुरुनो त्याग करवो.

सद्गुरु सेवक सुबुद्धि पुरुष स्वर्ग अने मोक्ष संबंधी सुखने पामे छे. पण कुगुरुकामी दुर्बुद्धि तो नरक अने तिर्यंच गतिनेज प्राप्त थाय छे.

जे निर्ग्रंथ गुरुने तजीने कुगुरुनी सेवा करेछे ते घरना आंगणे उगेला कल्पवृक्षने छेदीने धंतूराने वाववा जेवुंज करे छे.

कर्मरुप पर्वतनुं भेदन करवा वज्र समान, स्वर्ग अने मोक्ष सुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपनुं हे भव्यो! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपनुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संबंधी सुखने पामी अंते दृढ प्रहारीनी जेम अविचळ सुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने सुखे साधी शके छे.

---

१२ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां लंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याल राखतो नथी ते कुबुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आदु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळु, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सक्करकंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र–फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, वहुबीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज प्रमुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छाश, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छाश) मध, माखण, वासी अन्न, वोळ अथाणुं अने सडी गयेली वस्तु विगेरे अभक्ष्यादिकनुं

कषायनी मंदता थाय अने परिणामनी शुद्धि थाय तेम लक्ष राखीने तप करवो. समतापूर्वक तप करवाथी निकाचित कर्मना पण बंध तूटी जाय छे. विवेकयुक्त तप संयमथी गमे तेवां अघोर पापनो पण क्षय थाय छे.

जे करतां दुर्ध्यान थाय अथवा आगळ उपर धर्मसाधन अटकी पडे एवां अज्ञान तप घणा करवा करतां विवेकयुक्त स्वल्प तपथी विशेष हित थइ शके छे. जे स्वाधीनपणे तप संयमथी देहनु दमन करे छे तेने कदापि परतंत्रता संबंधी दुःख सहन करवुं पडतुं नथी. पण शरीर—ममताथी जे कंइपण तप जप संयम सेवता नथी तेमने पराधीनपणे बहुज शोचवुं पडे छे. अंते पण तप जप संयम विना सकळ दुःखनो अंत नथी तो पछी शा माटे प्राप्त थयेली शुभ सामग्रीनो लाभ लेवा चूकवुं जोइये ? पुण्य सामग्रीने पामीने तेनो सदुपयोग नहि करनारने तेवी सामग्री पुनः प्राप्त थवीज मुश्केल छे. माटे जेम बने तेम तेनो सदुपयोग करवोज युक्त छे.

च्यार ज्ञाने करी युक्त अने सुर—सेवित एवा तीर्थनाथ पण ज्यारे कर्म क्षय माटे तप करे छे तो पछी सामान्य जनोए ते शा माटे करवो न जोइये ? आत्म उन्नति माटे ते करवानी खास आवश्यकता छे.

कर्मरुप पर्वतनुं भेदन करवा वज्र समान, स्वर्ग अने मोक्ष सुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपनुं हे भव्यो! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपनुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संबंधी सुखने पामी अंते दृढ प्रहारीनी जेम अविचळ सुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने सुखे साधी शके छे.

---

१३ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां लंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याल राखतो नथी ते कुबुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आदु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळु, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सक्करकंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र-फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, वहुवीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज प्रमुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छाश, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छाश) मद्य, माखण, वासी अन्न, घोळ अथाणुं अने सडी गयेली वस्तु विगेरे अभक्ष्यादिकनुं

कषायनी मंदता थाय अने परिणामनी शुद्धि थाय तेम लक्ष राखीने तप करवो. समतापूर्वक तप करवाथी निकाचित कर्मना पण बंध तूटी जाय छे. विवेकयुक्त तप संयमथी गमे तेवां अघोर पापनो पण क्षय थाय छे.

जे करतां दुर्ध्यान थाय अथवा आगळ उपर धर्मसाधन अटकी पडे एवां अज्ञान तप घणा करवा करतां विवेकयुक्त स्वल्प तपथी विशेष हित थइ शके छे. जे स्वाधीनपणे तप संयमथी देहनु दमन करे छे तेने कदापि परतंत्रता संबंधी दुःख सहन करवुं पडतुं नथी. पण शरीर-ममताथी जे कंइपण तप जप संयम सेवता नथी तेमने पराधीनपणे बहुज शोचवुं पडे छे. अंते पण तप जप संयम विना सकळ दुःखनो अंत नथी तो पछी शा माटे प्राप्त थयेली शुभ सामग्रीनो लाभ लेवा चूकवुं जोइये? पुण्य सामग्रीने पामीने तेनो सदुपयोग नहि करनारने तेवी सामग्री पुनः प्राप्त थवीज मुश्केल छे. माटे जेम बने तेम तेनो सदुपयोग करवोज युक्त छे.

च्यार ज्ञाने करी युक्त अने सुर-सेवित एवा तीर्थनाथ पण ज्यारे कर्म क्षय माटे तप करे छे तो पछी सामान्य जनोए ते शा माटे करवो न जोइये? आत्म उन्नति माटे ते करवानी खास आवश्यकता छे.

कर्मरुप पर्वतनुं भेदन करवा वज्र समान, स्वर्ग अने मोक्ष सुख साधवाने मंत्र समान अने विषय विकारने हठाववाने श्रेष्ठ उपाय रुप एवा समाधिकारक तपनुं हे भव्यो! तमे भावथी सेवन करो.

जे समतापूर्वक शुद्ध तपनुं सेवन करे छे ते चिलाति पुत्रनी पेरे स्वर्ग संबंधी सुखने पामी अंते दृढ प्रहारीनी जेम अविचळ सुखने पामे छे. अथवा नागकेतुनी पेरे कल्याण परंपराने सुखे साधी शके छे.

---

१३ जीह्वाने वश कर.

रसनेंद्रियमां लंपट छतो जे मूढ भक्ष्याभक्ष्यनो ख्याल राखतो नथी ते कुबुद्धि अभक्ष्य भक्षणथी अधोगतिनेज पामे छे.

आदु, मूळा, गाजर, पिंड, पिंडाळु, सूरण, गरमर, नीलीगळो, वटाटा, सक्करकंद वगेरे सर्व भूमिकंद, कोमळ पत्र–फूल के फळ, विष, हिम, करा, अजाण्यां फळ, काचुं मीठुं, तिल, खसखस रात्रिभोजन, रिंगण, विंगण, वहुवीज फळ, तुच्छ फळ, वडबीज प्रमुख वे रात्री उपरांतनुं दहिं, त्रण रात्रि उपरांतनी छाश, कठोळ साथे काचो गोरस (दूध, दहिं के छाश) मध, माखण, वासी अन्न, घोळ अथाणुं अने संडी गयेली वस्तु विगेरे अभक्ष्यादिकनुं

स्वरुप समजीने सुबुद्धिजनोए तेनो त्याग करवो योग्य छे. केमके क्षणिक विषय-सुखनी खातर तेथी असंख्य के अनंत जीवोनो विध्वंस थाय छे.

एक तलमात्र भूमिकंदमां पण अनंत जीवो रहेला छे. तेथी पशुनी पेरे विवेक रहित तेवी अभक्ष्य, अनंतकाय वस्तुओने प्रमाण रहित खानार माणसो अनंत जीवोनो संहार करी क्षणिक तृप्ति मेळवी अधोगतिने पामी अनंत जन्म मरण संबंधी दुःखने प्राप्त थाय छे.

तिलमात्र सुखने माटे मेरुथी पण मोटुं दुःख मूर्ख लोको अज्ञानताथी मागी लेछे जिह्वेंद्रियने वश करी अभक्ष्य मात्रनो त्याग करनार सुबुद्धिजनो सर्वत्र सुखी थाय छे.

रस लंपट जीवो अनेक व्याधिओने भोग थइ पडे छे तेम जीतेंद्रिय कदापि थइ पडतो नथी. एम समजीने पण अभक्ष्य भक्षणथी सदंतर दूरज रहेवा प्रयत्न करवो.

औषध उपचारनी खातर मध, माखण विगेरे अभक्ष्य वस्तु वापरी खानारने पण परिणामे अहितज कहेलुं छे. तेथी तेवा विषम संयोगोमां विवेकी माणसोए विशेषे सावचेत रहेवुं योग्य छे. (युक्तछे.)

पवित्र दीक्षा ग्रहण कर्या छतां रसनेंद्रियने वश थइ यथेच्छित भोजन करनार भिक्षु मंगू आचार्यनी पेरे विडंबनापात्र थाय छे.

तेथी उभय लोकनां सुखनें इच्छता आत्मार्थी जीवोए जीह्वाने जेम बने तेम विवेकथी वश करवा सतत प्रयत्न करवो युक्तज छे.

जेम कुपथ्य भोजनथी माठां परिणाम आवे छे तेम तेवां विवेक विनानां रागद्वेष युक्त स्वार्थी वचनोथी पण विपरीतज परिणाम आवे छे एम समजीने स्वपरने हितकारी सत्य अने प्रिय वचनज प्रसंगोपात बोलवानी टेव पाडवी. जरुर विनानुं, वगर विचार्युं, स्वच्छंदपणे बहु बोलवानी कुटेवथी जीव घणीवार जीवना पण जोखममां आवी पडे छे एम विचारीने शाणा माणसोए हित, मित, प्रिय, एवुं सत्य पण प्रसंगोपात जरुर जेटलुंज नम्रपणे बोलवानी टेव राखवी. आथी सर्व कोइने संतोष मळवानो सारो संभव रहे छे. रागद्वेष रहित मध्यस्थपणे विचारीनेज प्रसंगोपात प्रिय अने सत्य वचन वदवाथी ते परने पण प्रायः हितकारीज थाय छे.

---

१४ राग द्वेषनो त्याग कर.

अनादि कुकर्मना योगथी जीवने रागद्वेषरूप भारे दुस्तर विकार थया छे, जेथी जीव एकने देखी राजी थाय छे अने बीजाने देखी नाराजी थाय छे. तेमज ते चेपी रोग अनेक भव संतति सुधी चाल्या करे छे.

उक्त महाविकारथी जीवने स्वपरनुं यथार्थ भान थइ शकतुं नथी. तेथी तेने गुणदोष संबंधी उलटुं अवळुंज भान थाय छे. **रागी दोषं न पश्यति**—विषय सुखमां मग्न थयेलो जीव स्त्री आदिक पदार्थोमां रहेला दोषोने तेमज तेमना संग–परिचयथी भावी दोषोने नहि समजतां उलटा तेमां गुणनोज आरोप करीने अंध प्रवृत्ति कर्या करे छे. एवीज रीते इर्ष्या–द्वेषथी जेनुं अंतःकरण कलुषित थइ गयुं छे तेनी मति पण विपरीतज दोरावाथी सामामां गमे तेवा सद्गुणो छतां अने तेवा सद्गुणी–समर्थनी साथे द्वेषबुद्धि राखवाथी भावी अनर्थने ते मूढात्मा समजी शकतो नथी, एटलुंज नहि पण सामानामां रहेला सद्गुणोने ते जडमति केवळ दोषरुपेज लेखे छे अने तेने तृणनी जेम गणी मिथ्याभिमानथी तेनी साथे वर बांधीने उलटो अनर्थज पेदा करे छे. वडना बीजनी पेरे आगळ जतां तेनी परंपरा वधतीज जाय छे. एम समजीने शाणा माणसोए जेम बने तेम शीघ्र उक्त महा विकारोने उपशमाववा अवश्य उद्यम करवो घटे छे.

राग अने द्वेष हलाहल झेर करतां पण अधिक दुःखदायी नीवडे छे.

जो समता भावित सत् पुरुषोनी सोबत करीने तेमनी हित शीखामणथी पोतानी अनादिनी भूल समजवामां आवे अने तेथी

पोताना विकारोने वारवाने जोइतो प्रयत्न करवामां आवे तो अनुक्रमे सतत शुभ अभ्यासना बळथी आपणामां जड घालीबेसेला राग द्वेषादि विकारोनो समूळगो अंत आवी शके. पण ज्यां सुधी उक्त महा विकारोनो अंत न आवे त्यां सुधी तेमनुं उन्मलन करवा अडग प्रयत्न कर्याज करवो जोइए.

राग अने द्वेषथी अंध थयेला प्राणीयोनी प्रायः अधोगतिज थाय छे. एवा अंध जीवोने खरी आंख आपनारा अलौकिक शस्त्र वैद्य समान कोइक सत् पुरुषनो समागम भाग्योदये थइ आवे अने जो तेमनी सम्यग् उपासना करवामां आवे तो सदुद्यमना स्वादिष्ट फळ रूपे आपणा अनादिना महा विकारो नष्ट थइ आपणने समता रूपी दिव्य चक्षुनी स्वतंत्र प्राप्ति थइ शके.

---

१५ क्रोधादि कषायने दूर कर.

क्रोध, मान, माया, अने लोभ ए च्यार कषाय छे. अप्रीति लक्षण क्रोध, अहंभाव लक्षण मान, दंभ लक्षण माया, अने असंतोष लक्षण लोभथी अनुक्रमे प्रीति, विनय, मित्राइ, अने सुख शान्तिनो नाश थाय छे. माटे समजु माणसने ते अवश्य परिहरवा योग्यज छे.

द्वेष या इर्ष्या थकी क्रोध अने मान पेदा थाय छे तेमज काम या रागान्धताथी माया अने लोभ पेदा थाय छे अने जेम जेम तेमने तेथी पोषण मळतुं जाय छे तेम तेम तेओ वृद्धि पामता जाय छे.

बाह्य अने अंतर बे प्रकारना शत्रुओमां अज्ञानी लोको जेना प्रति वैरभाव राखे छे ते बाह्यशत्रु छे, अने ज्ञानी पुरुषो जेमनो क्षय करवा अहोनिश यत्न कर्या करे छे ते अंतरंग शत्रुओ—काम, क्रोधादिक छे. बाह्यशत्रु उपर कषाय करवो ते अप्रशस्त छे. अने अंतरंग शत्रुओ उपर कषाय करवो ते प्रशस्त कषाय कहेवाय छे. प्रशस्त कषायना योगे अप्रशस्त कषायनो अनुक्रमे अभाव थाय छे, तेथी प्रशस्त कषाय अप्रशस्त रागादिने दूर करवा अमोघ उपाय तुल्य छे.

अंते तो सर्व प्रकारना कषाय सर्वथा परिहरवाथीज परमपद प्राप्त थाय छे. ज्यां सुधी लेश मात्र राग, द्वेषादिक विकार होय त्यां सुधी वीतरागता होइ शके नहि अने ते विना अक्षयपदना अधिकारी थइ शकायज नहि. माटे वीतराग दशाने प्रगट करवा रागद्वेष अने कषाय मात्रनो क्षय करवाने सतत प्रयत्न करवो जोइये.

क्षमा गुणवडे क्रोधनो, विनय—नम्रता गुणथी माननो, सरलता—गुणथी माया—कपटनो, अने संतोष गुणथी लोभनो पराजय करवो. कह्युं छे के—

क्षमा सार चंदनरसें, सिंचो चित्त पवित्र;
दया वेल मंडप तळे, रहो लहो सुख मित्र.
देत खेद वर्जित क्षमा, खेद रहित सुखराज;
तामे नहि अचरिज कछु, कारण सरिखो काज.

क्षमा खड्गः करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति॥
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवो पशाम्यति.

मृदुता कोमळ कमलथें, वज्रसार अहंकार;
छेदतहे एक पलकमे, अचरिज एह अपार.

माया सापणी जगडसै, ग्रसै सकळ गुणसार;
समरो रुजुता जांगुली, पाठ सिद्ध निरधार.

कोउ सयंभू रमणको, जो नर पावै पार;
सोभी लोभ समुद्रको, लहै न मध्य प्रचार.
मन संतोष अगस्तिकुं, ताके शोष निमित्त;
नितु सेवो जिनि सो कियो, निजबल अंजलि मित्त.

पूर्वोक्त वे प्रकारना कषाय समजवानु फळ ए छे के जेनाथी भव संतति वधे एवा अप्रशस्त कषायथी दूर रहेवा माटे प्रथम तो प्रशस्त रागादिक सेववां. एटले के शुद्ध देव, गुरु अने धर्म प्रति प्रेमभाव धारण करवो ने वधारवो. ते एटले सुधी के संसार संबंधी खोटो राग समूळगो नष्ट थइ जाय. अने आत्म-गुणनुं आपणने सहज भान थाय अने छेवटे वीतरागदशा, प्रगट करवाने सर्व प्रमाद दोषनो परिहार करीने सम्यग् ज्ञान, दर्शन अने चारित्रना दृढ अभ्यासथी आपणे सर्वथा निष्कषायपणुं पामीये.

जेओ शुद्ध देव गुरु धर्म उपर निर्मळ राग करवाने बदले उलटो कराग-द्वेष पेदा करे छे ते हतभाग्योने भविष्यमां अनंत भव भ्रमण करवुं पडशे. अने तेमने प्राप्त सामग्री पुनः पामवी दुर्लभ थइ पडशे.

जेओ पोते गुणी छतां गुणवंत उपर राग धरशे तेओ अवश्य उभय लोकमां सुख अने यशना भागी थइ अंते अक्षय पदने पामशे.

दीक्षा ग्रहण करीने जे क्रोधादि कषायने सेवशे-हितकारी वचन कहेनारनी उपर कोपशे, तपश्रुतनो गर्व करशे अथवा पूजा प्रतिष्ठादिकथी मनमां अभिमान धरशे, खरा गुण विना खोटो आडंबर रची दंभवृत्ति चलावशे अने वस्त्र पात्र पुस्तक या शिष्य शिष्याओनो खोटो लोभ राखशे. तेमनी उपर ममता धारण करशे तो

ते स्वचारित्रने निष्फळ करीने अंते अधोगतिने पामशे. सहज सुखदायी चारित्रने धारीने जे भवभीरु साधुओ राग द्वेषादिक दुष्ट विकारना उत्पादक अनुकूळ या प्रतिकूळ कारणो मळतां छतां निरतिचारपणे स्वसंयमने पाळे छे तेज खरा धीर वीर साधुओ छे एम निश्चें जाणवुं. कह्युं पण छे केः—विकारहेतौसतिविक्रियंते, येषां न चेतांसि त एव धीराः—राग द्वेष या कामक्रोधादि विकार ऊपजे, एवां कारण विद्यमान छतां जेमनां चित्त जराए क्षोभ पामतां नथी तेज धीर–वीर पुरुषो छे.

---

१६ अहिंसा व्रतनो आदर कर.

प्रमाद युक्त आचरणथी स्वपर प्राणनो नाश करवो तेनुं नाम हिंसा छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा ए पांच प्रमाद जीवोने दुर्गतिमां पाडनार छे तेथी ते अवश्य वर्ज्य छे. सर्व प्रमाद रहित थइने "आत्मवत् सर्व भूतेषु" सर्व प्राणीने स्वसमान लेखनार महाशय अहिंसा व्रतने यथार्थ पाळी शके छे.

सर्व जीवने अभय दान देनार जेवो कोइ उत्कृष्ट पुण्यवान् नथी. केमके सर्व दान करतां अभय दान चढीयातुं छे.

दुनियामां वहालामां व्हाली चीज पोताना प्राणज गणाय छे. तेथी कोइ क्षुद्र जीवना पण प्रिय प्राण अपहरवा यत्न करवो नहि.

सर्वे जीवितज इच्छेछे, कोइपण मरणने इच्छतुंज नथी. एम स-मजी निग्रंथ पुरुषो अहिंसाव्रतनो अत्यंत आदर करे छे.

मनथी, वचनथी, के कायथी हिंसा करवा करावचा के अनु-मोदवानो सावधानपणे त्याग करवाथीज अहिंसाव्रतनुं पूर्ण रीते पालन थाय छे.

जे जेवा मंद के उत्कृष्ट परिणामथी परने परिताप करे छे ते तेनो तेवोज अल्प के अधिक विपाक भोगवे छे. तथा कोइ रीते कोइने पण पीडा ऊपजे एवुं मनथी, वचनथी के कायाथी, करवुं, करावबुं के अनुमोदवुं नहि. केमके जेवुं बीज वावीये तेवुंज फळ पामीये. वळी आपणने दुःखमात्र अनिष्ट छतां जो आपणे अन्यने आपणा तुच्छ स्वार्थनी खातर जाणी जोइने असमाधि उपजाविये तो पछी तेना बदला तरीके आपणने पण असमाधिज पेदा थाय तेमां आश्चर्य शुं ? तथा उत्तम रस्तो एज छे के सारा के नरसा अ-नुकूळ के प्रतिकूळ संजोगोमां सहनशीळपणुं धारण करीने कोई जीवने कंइपण असमाधि नहि करतां बनी शके तेटली समाधि क-रवा प्रयत्नशील थवुं. आवा कठीण पण सीधे रस्ते चालनार स-त्पुरुषने कदापि कंइपण कष्ट प्राप्त थवानुं नथी, एटलुंज नहि पण ते सत्पुरुष पोताना सदाचरणथी श्रेष्ठ सुखनोज अधिकारी थवानो.

शरीर संबंधी अनेक प्रकारना व्याधि, निर्धनता, परतंत्रता, अनं वैर, विग्रह विगेरे सर्व हिंसानां फळ समजीने सुबुद्धिजनोए अहिंसानोज आदर करवो.

आरोग्य, सौभाग्य, स्वामित्व, अने समाधि प्रमुख अहिंसानां फळ समजीने शाणा माणसोए अहिंसाव्रतनोज अत्यंत आदर करवो युक्त छे.

---

१७ सत्य व्रतनुं पालन कर.

प्रिय अने हितकारी वचनने ज्ञानी पुरुषो सत्य कहे छे, अने सत्य छतां अप्रिय, कटुक अने अहितकारी वचन असत्यज कह्युं छे. तथा वक्ताए वचन व्यवहारमां विशेषे विवेक राखवानी जरुर छे.

आंधळो, लुच्चो, लवाड, चोर, दुष्ट, धीठ विगेरे वचनो रागद्वेषादिक विकारथी उच्चरायेलां होवाथी ते प्रसंगे असत्य ठरे छे.

वैर, खेद, अविश्वासादि अनेक दोषो असत्य बोलवाथी उद्भवे छे. तेमज आलोकमां वसुराजानी पेरे अपवाद अने परलोकमां अनर्थ परंपराने पामे छे.

असत्य बोलनारने पोताना वचनपर प्रतीति बेसाडवा अनेक कुतर्को करवा पडे छे तेथी तेनु मन महा माठा ध्यानमांज मग्न रहेछे.

सत्य बोलनारनुं मन निर्भय रहे छे, तेथी तेने खोटा संकल्प विकल्प करवा पडता नथी. सत्य वचनमां टेक राखनारने देवता पण सहाय करे छे.

सत्य वचन क्षीरसमुद्रना जळ जेवुं मीठुं छे तेथी सत्यनुंज पान करनारने खारा समुद्रनां जळ जेवां असत्य वचनथी कदापि संतोष वळतोज नथी.

असत्य भाषणथी भोळा लोकोने अवळे रस्ते दोरनार जेवो कोइपण विश्वासघाती–महापापी नथी. तेथी सभासमक्ष भाषण करनारे पोतानी जवाबदारी सारी रीते विचारी राखवानी जरुर छे. केमके तेना उपर लाखोगमे माणसोना भविष्यनो सवाल रहेलो छे.

सत्यना रागीए लक्षमां राखवुं जोइये के दुनियामां असत्य बोलवानां कारण मात्र क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यज होय छे, अने जेम बने तेम काळजीथी तेवां कारणोने दूर करीने सत्यज वचन वदवुं एवा सत्यवादीनो सुयश कालिकाचार्यनी पेरे चिर स्थायी रहे छे.

सत्यनी खातर पोताना प्रिय प्राणने पण गणे नहि तेज सत्य धर्मनो अधिकारी छे. एम समजीनेज युधिष्ठिर प्रमुखे प्राणांत सुधी ते व्रतनुं पालन कर्युं छे.

जे माणस विवेकथी विचारीने प्रसंगोपात, हित, मित, भाषणथी सर्वने प्रिय लागे एवुं सत्य वचन बोले छे. तेनुं वचन सर्व मान्य थवाथी अंते ते अभीप्सित कार्य सुखे साधी शके छे.

तोतडी जीभ, मूंगापणुं, मुखपाकादि रोग, मूर्खता, दुःस्वर अने अनादेयवचनादिक सर्व असत्यनांज फळ समजीने तेनाथी सुबुद्धिजनोए दूर रहेवुं. तेमज बीजा पण योग्य जीवोने दूर रहेवा प्रेरणा करवी.

चोखी जीभ, सुस्पष्ट भाषित्व, निर्दोषता, पांडित्य, सुस्वर, अने आदेयवचनादिक सर्व सत्यनांज फळ समजीने शाणा माणसोए सदा सत्यनोज पक्ष करीने सत्यव्रतनुं पालन करवा उजमाळ रहेवुं.

---

१८ अदत्तनो त्याग कर.

साक्षात् अन्यायथी दावपेच करीने पराइ वस्तु छीनवी लेवी, तेम करवा बीजाने उश्केरणी करवी, तेने सहाय आपवी, जाणी जोइने चोराइ वस्तु लेवी, थापण ओळववी, अने विश्वासघात करवो ए बधा चोरीना पेटामां आवी जाय छे. एम समजीने दक्ष, नीतिवंत अने दयाळु श्रावके तेनाथी बीलकुल दूरज रहेवुं.

दस प्राण उपरांत पैसाने लोको अगीयारमो प्राण लेखे छे तो

एवा प्राणप्रिय द्रव्यनुं अपहरण करनार माणस पराया प्राणना हरण करनार करतां पण अधिक पातकी ठरे छे, अने तेथी ते आलोकमां प्रत्यक्ष वध बंधनादिक पामीने परभवमां नरकनो अधिकारी थायछे.

मुमुक्षु साधुने तो एथी पण अधिक वारीकीथी अदत्तनो त्याग करवानो छे. तेने तो मनथी पण अदत्त लेवानो सख्त निषेध कहेलो छे.

स्वामी अदत्त, जीव अदत्त, तीर्थंकर अदत्त, अने गुरु अदत्त एम च्यार प्रकारनुं अदत्त सर्वथा तजी साधुने महाव्रत पाळवानुं छे. तमां जेटलो जेटलो अनादर कराय छे तेटलुं तेटलुं महाव्रत दूषित थतुं जाय छे. तेथी तेनुं स्वरुप यथार्थ समजीने सुसाधु जनोए अदत्तथी सर्वथा दूर रहेवा यत्नवंत रहेवानी अवश्य जरुर छे.

आहार, पाणी, औषध, भेषज, वस्त्र, पात्र, अने रहेठाण विगेरे तेना धणीनी रजा शिवाय लइ वापरवाथी स्वामी अदत्त लागे छे.

घर धणीये आप्या छतां जो ते ते वस्तु सचेत (सजीव) अथवा अचेत (निर्जीव) नहि थयेली एवी मिश्र छती लइ वापरवामां आवे तो ते लेनार अने वापरनार साधुने जीव अदत्त लागे छे.

द्रव्य, क्षेत्र, काळ, अने भावने प्रधान करीने प्रवर्तती एवी प्रभु आज्ञाने प्रमाण करवाने वदले स्वच्छंदपणे व्यवहार चलाववाथी

आप खूद वर्तनथी तीर्थंकर अदत्त लागे छे.

तेमज गीतार्थ गुरु महाराजनी तेवीज हितकारी आज्ञाने अवगणी आप मते चालनार साधुने गुरु अदत्त लागे छे.

अदत्तनुं स्वरुप सम्यग् विचारीने जे भवभीरु जनो तेनाथी अलगा रहेशे ते स्वर्गादिकनी संपदाने साक्षात् पामी अंते अविचळ-सुखना अधिकारी थाशे.

---

१९ ब्रह्मचर्यनुं सेवन कर.

देवता, मनुष्य अने तिर्यंच संबंधी विषय भोगोथी विरमीने सहज संतोषधारी, धर्मध्यानमां निमग्न रहेवुं तेनुं नाम ब्रह्मचर्य छे.

मनथी पण उक्त विषयोने नहि इच्छवारुप महाव्रत मुमुक्षु पुरुषोने होय छे. अने यथासंभव सामान्यपणे तो ते व्रत गृहस्थ श्रावकोने पण होय छे. मुनियोमां स्थूलभद्रादिकनां अने गृहस्थोमां विजय शेठ अने विजया शेठाणी तथा सुदर्शन शेठ विगेरेनां तेमज अनेक सता अने सतीओनां दृष्टान्तो जग जाहेर छे.

अनादिनी विषय वासना भाग्ययोगे सर्वथा अथवा अंशथी उपशान्त थये छते उक्त महाव्रत सर्वथी के देशथी उदय आवे छे. उक्त महाव्रतना दृढ अभ्यास पूर्वक भावनाथी तेनी सिद्धि थतां ते

महाशयने सहज संतोष जन्य अनंत सुख व्यापी जाय छे अने एवा स्वाभाविक सुखमां निमग्न थयेला योगी पुरुषने कदाच अप्सरा चलायमान करवा यत्न करे तो ते तद्दन निष्फळ जाय छे. एवा स्वाभाविक आत्म सुखनीज कामनाथी जे महाशयो उक्त महाव्रतने सेवे छे ते सकळ सुरासुरने मान्य थइने अक्षयसुखना अधिकारी थाय छे.

उक्त महाव्रतनी रक्षा माटे प्रथम नव ब्रह्म-वाडो पाळवानी जरुर रहे छे. माटे ते वाडोनुं स्वरुप समजी दरेक मुमुक्षुए तेनो खप करवो युक्त छे.

१ वसति-स्त्री, पशु, पंडक विगेरे रहे त्यां ब्रह्मचारीने रहेवुं कल्पे नहि.

२ कथा-कामकथा करवी घटे नहि.

३ निषद्या-स्त्री विगेरेनुं आसन शयन विगेरे वापरवुं नहि.

४ इंद्रिय-स्त्री आदिकनां अंगोपांग रागबुद्धिथी नीरखवां नहि.

५ कुडयंतर-भींत अथवा पडदा पासे स्त्री आदिकनो वास तजवो.

६ पूर्वक्रीडा-पूर्वे अव्रतीपणे करेली काम क्रीडा संभारवी नहि.

७ प्रणीत भोजन-रसकसवाळा घेवर प्रमुखनुं स्निग्ध भोजन करवुं नहि.

८ अतिमात्राहार–प्रमाणथी वधारे लूखुं भोजन पण करवुं नहि.

९ विभूषा–स्नान, वस्त्रालंकारथी के तैलादिकना मर्दनथी ब्रह्म चारीने स्वशरीरनी शोभा करवी कराववी नहि.

ए प्रमाणे अखंड ब्रह्मचर्यने पाळीने पुर्वे अनेक शुद्धाशयो जेम अक्षय सुखने पाम्या छे तेम वर्तमान अने अनागत काळमां पण पवित्र पुरुषार्थ फोरवनारा अनेक महाशयो ए निर्मळव्रतने निरतिचारपणे पाळीने आत्मोन्नति करी अन्यने दृष्टांतरुप थइने अंते अक्षय संपदाने वरशे.

---

२० परिग्रह—मूर्च्छानो परिहार कर.

सचेत, अचेत, के मिश्र एवी अल्प मूल्य के वहु मूल्यवाळी वस्तु उपर मूर्च्छा थवी तेने ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे. ते परिग्रह वे प्रकारनो छे.

धन, धान्य, रुपुं, सोनुं, द्विपद, चतुष्पद विगेरे बाह्य परिग्रह छे. तथा वेदोदय ३, हास्यादि ६, मिथ्यात्व अने कषाय ४ मळीने १४ प्रकारनो अभ्यंतर परिग्रह कह्यो छे.

ए बन्ने प्रकारनो परिग्रह सर्वथा परिहरे ते निर्ग्रंथमुनि कहेवाय छे.

अंतरनो परिग्रह तज्या विना बाह्य परिग्रहना त्याग मात्रथी कंइ कल्याण नथी. शुं कांचळी मात्र तजवाथी सर्प निर्विष थइ शके छे?

बंने प्रकारना परिग्रहने तृणवत् तजीने जे संसारथी न्यारा रहीने संयमने साधे छे तेनां चरणकमळने त्रणे जगत पूजे छे.

परिग्रह एक एवा प्रकारनो ग्रह छे के जेना योगे आखी जगत् पीडा पामे छे. परिग्रह ग्रहथी घेलो थयेलो साधु पण जेम आवे तेम लव्या करे छे.

जेम अत्यंत भारथी जाझ जळमां डूबी जाय छे तेम परिग्रह ग्रहथी ग्रस्त थयेलो जीव पण आ भयंकर भवसायरमां डूबे छे.

जेम जेम जीवने दैववशात् लाभ मळतो जाय छे तेम तेम तेने लोभ वधतो जाय छे, अने ते एटलो वधो के तेनी कंइपण हद रहेती नथी, जेथी ते अनेक प्रकारना पापारंभ करीने पण पैसा पेदा करवा प्रयत्न कर्या करे छे. तेथी जिन शासनानुयायी दरेक आत्मार्थी जीवने उचित छे के तेणे 'पाणी पहेलांज पाळ' नी पेरे प्रथमथीज परिग्रहनुं प्रमाण करीने रहेवुं. अने नियमित धनधान्य–नीतिथीज पेदा करवा खास लक्ष राखवुं, भाग्यवशात् विशेष द्रव्यनी प्राप्ति थइ तो सद्गुरुनी सलाह मुजब पुण्यक्षेत्रमां तेनो विवेकथी व्यय करीने कृ-

तार्थ थावुं ए प्रमाणे जे शुभाशय मूर्च्छाने मारे छे ते उभयलोकमां अवश्य सुखी थाय छे.

' इच्छा तो आकाशनी जेवी अनंती छे एम निश्चयथी समजीने अनहद् एवा लोभनो निग्रह करवा परिग्रहनुं प्रमाण तो अवश्य करवुं. अन्यथा मम्मणशेठ विगेरेनी पेरे निर्मर्याद लोभतृष्णाथी माठा हाल थशे.

परिग्रहनुं प्रमाण करीने यथाप्राप्तमां संतोष वृत्ति धारवाथी उभय लोकमां केवुं सुख मळे छे, तेने माटे आनंद कामदेवादिक अनेक श्रावकोनां अने पुणीया श्रावक विगेरेनां दृष्टान्त जग प्रसिद्ध छे.

धर्मनां साधनभूत वस्त्र, पात्र अने पुस्तकादिक उपगरणो परिग्रहरुप नथी पण जो मूर्च्छा राखीने तेमनो सदुपयोग करवामां न आवे तो ते सर्व परिग्रहरुप थइ पडे छे. केमके मूर्छा एज परिग्रह छे एम ज्ञातपुत्र श्री महावीर स्वामीए कहेलुं छे माटे मूर्छा तजीने जम तप जप संयमवडे देहने सार्थक करवामां आवे छे, तेम धर्मोपगरणने पण ते ते धर्म कार्यमां मूर्छा रहित उदार दीलथी उपयोग पूर्वक वापरी सार्थक करवा ए वीरपुत्रोनी फरज छे.

---

२१ वैराग्य भाव धारण कर.

संपदो जल तरंग विलोला, यौवनं त्रि चतुराणि दिनानि।
शारदाभ्रमिव चंचल मायुः, किं धनैः कुरुत धर्ममनिन्द्यं॥१॥

लक्ष्मी जळतरंगनी जेवी चपळ छे, यौवन अल्प स्थायी होवाथी अस्थिर छे, अने आयुष्य शरद्नां वादळां जेवुं चंचळ छे. माटे हे भव्यो ! तमे क्षणिक धननो लोभ तजीने सर्वोत्तम एवा वीतराग भाषित धर्मनुंज सेवन करो.

रागीना उपर रहेनारी या स्वार्थ पूरता कृत्रिम रागने धरनारी एवी नारीने कोण सहृदय पुरुष वांछे ? तेतो विरागी उपर पूर्ण प्रेमने धरनारी एवी मुक्तिकन्यानेज वांछे छे.

दुनियामां सर्व कोइ स्वजनवर्गादिक स्वार्थनिष्ठज छे. एम सुस्पष्ट समज्या छतां कोण सहृदय पुरुष तेमां निष्कारण मग्न थइ रहे ? ज्यारे मोह मायानो पडदो दूर खसे छे त्यारे अखंड साम्राज्य सुखने साक्षात् सेवनारा चक्रवर्ती सरखा सिंह पुरुषो पण पूर्ण वैराग्यथी आ पौद्गलिक सुखनो त्याग करीने सहज आनंदने साक्षात् अनुभववाने श्री वीतराग देशित चारित्र धर्मनो स्वीकार करीने तेने सिंहनी पेरे पाळवा प्रवृत्त थाय छे.

दुःखगर्भित, मोहगर्भित अने ज्ञानगर्भित एम वैराग्य त्रण प्रकारनो छे. ए त्रणे प्रकारमां ज्ञानगर्भित वैराग्यज शिरोमणि छे.

जेम हंस क्षीर नीरने स्वचंचुथी जूदां पाडी क्षीरमात्रनुं ग्रहण करी ले छे. तेम ज्ञानगर्भित वैराग्यवंत-विवेकात्मा शुद्ध चारित्रना बळथी अनादि कर्ममळने दूर करी शुद्ध आत्मत्त्व (सहजानंद सुख) ने साक्षात् पामे छे.

रागद्वेषादिक दुष्ट दोषोने दूर करवाथीज शुद्ध वैराग्य प्रगटे छे, अने उक्त वैराग्यना दृढ अभ्यासथी रागद्वेषादिक विकारो समूळगा नाशे छे, त्यारेज आत्मानी सहज वीतराग (परमात्म) दशा साक्षात् प्राप्त थाय छे.

आवा वीतराग परमात्मानां वचन सर्वथा प्रमाण करवा योग्यज होय छे. आ दुःखमय असार संसार मध्ये श्री वीतराग देशित धर्मनुं सेवन करी लेवुं, एज सारभूत छे, छतां पण प्रमादवशवर्ती जनो सत्य-सर्वज्ञ देशित धर्मनुं यथार्थ सेवन करी शकताज नथी, जेथी पूर्व पुण्योदये प्राप्त थयेली आ अमूल्य तकने गमावी ते बापडाओने पाछळथी बहु शोचवुं पडे छे.

समतासागर सत्पुरुषोना सदुपदेशनुं विधिवत् श्रवण मनन करवाथी भव्य जीवोने पूर्वोक्त उत्तम वैराग्यनो अपूर्व लाभ मळे छे.

विरक्त भावे रहेतां विशाळ राज्यादिक भोगो पण बाधकभूत थइ शकता नथी. पण अन्यथा तो गाढमोहथी आत्मा मलीन थया विना रहेतोज नथी. विरक्त पुरुष छती वस्तुए अनासक्त रहे छे, अने मूढात्मा तो तेमां सदाकाळ आसक्तज रहे छे. शुद्ध वैराग्यनीज खरी बलिहारी छे, खरा वैराग्यथी चक्रवर्तीने स्वराज्य तजवुं लगारे मुश्केल नथी. पण मोहग्रस्त भीखारीने तो एक रामपात्र (शकोरुं) तजवुं पण भारे कठण थइ पडे छे. शुद्ध वैराग्यवंत निष्कलंक चारित्रने पाळी सर्व दुःखने शमावी अंते अक्षय सुखने वरे छे.

---

२२ गुणीजनोनो संग कर.

निर्गुणी एवा खल या दुर्जनोनो संग त्यजीने हे भव्य तुं तारुं स्वहित साधवाने सद्गुणी–सज्जनोनो सदा समागम कर.

सद्गुणीनी सोबतथी निर्गुण पण गुणवंत थाय छे अने नीच एवा निर्गुणीनी सोबतथी सद्गुणी पण निर्गुणी थइ जाय छे. जुओ! मलयागिरिना संगथी सामान्य वृक्षो पण चंदनताने अने मेरुगिरिना संगथी तृण पण सुवर्णताने भजे छे. तेमज लीमडाना संगथी आंबा अने कोळाना संगथी कणकनो वाक विनाश पामे छे.

साधु पुरुषो सदुपदेशवडे सामाना अज्ञान अंधकारनो नाश

करी तेने सत्य वस्तुनुं भान करावे छे, जेथी तेनो मोह भ्रम दूर नासे छे.

गुणीजनो निर्गुणीजनोने पण सद्गुणी करवा इच्छे छे, गुणीमांथी गुण ग्रहण करे छे, सद्भूत गुणनुं गान करे छे अने पोताना गुणोनो पण गर्व करता नथी. एवा सद्गुणीनो संग महा भाग्य योगेज थाय.

गुणीजनो मनथी वचनथी अने कायथी निःस्पृहपणे परोपकार करे छे.

सद्गुणीना संगथी सामानां पापनो लोप थाय छे, धर्माचरण करवामां निर्मळ मति विस्तरे छे, वैराग्य प्रगटे छे, स्नेहराग विघटे छे, सर्व इंद्रियो उपर काबु मळे छे, शोक क्लेश अने भयादिक दुःखनो जय थइ शके छे अने संसारनो पार थाय छे. एम समजीने स्व चरित्रने निर्मळ करनार एवा सत्पुरुषोनी सोबत तुं निरंतर कर. पात्रापात्रनी योग्य कदर गुणी पुरुषज करी शके छे पण निर्गुणी करी शकतो नथी. तेथी जो सामामां पात्रता हशे तो ते तेने स्व समान करवा पण भूलशे नहि. परंतु जो पात्रतानी खामी जणाशे तो प्हेलुं लक्ष सामाने पात्रता प्राप्त कराववा दोरशे, अने ते योग्यज छे. केमके सुपात्रमांज करेलो श्रम सार्थक थाय छे कह्युं पण छे के " पात्रापात्रनो विवेक शिखवाने गाय अने सर्पनो मुकाबलो करवो.

गायने तृण-भक्षणथी दूध थाय छे अने सापने दूध पावाथी पण झेरज थाय छे." सुबुद्धिजनोए तो सर्वथा प्रथम पात्रताज प्रगट करवा लक्ष दोरवानुं छे.

---

२३ श्री वीतरागने ओळखी वीतरागनुं सेवन कर.

जेने संक्लेशकारी राग, शान्ति भंजक द्वेष अने सम्यग् ज्ञानाच्छादक तथा विपरीत चेष्टाकारी मोह सर्वथा नष्ट थया छे, अने त्रिभुवनमां जेनो महिमा गवायो छे तेज खरा महादेव छे. जे वीतराग, सर्वज्ञ, अक्षय सुखना स्वामी, क्लिष्ट एवां कर्मथी मुक्त अने सर्वथा देहातीत-जन्म मरणथी रहित थया छे. जे सर्व देवोना पूज्य छे, सर्व योगीयोना ध्येय छे अने सर्व नीतिना कर्ता छे तेज खरा महादेव छे. ए प्रमाणे श्रेष्ठ चरित्रवाळा जेमणे सर्व दोष रहित मोक्ष मार्ग प्रकाशक शास्त्र प्ररूप्यां छे तेज परम देव परमात्मा छे.

सदा सावधानपणे तेमनी आज्ञानो अभ्यास करवो एज तेमनी आराधनानो खरो उपाय छे. अने ते पण शक्तिना प्रमाणमां करवाथी अवश्य फळदायी निवडे छे. छती शक्ति गोपवीने प्राप्त सामग्रीनो जोइए तेवो सर्वज्ञ आज्ञाने अनुसार सदुपयोग नहि करनार प्रमादशील जनोने श्री वीतराग सेवानो यथार्थ लाभ मळी शकतो

नथी. जेम परोपकारशील एवा कुशल वैद्यनां निःस्वार्थ वचनानु-
सारे वर्तन करनार व्याधिग्रस्त जनोना व्याधिनो अंत आवे छे, तेम
परमात्म प्रभुनां एकांत हितकारी वचनने परमार्थथी अनुसरनार
भव्य जीवोनां भवदुःखनो जरुर अंत आवे छे.

एवी रीते परमशांत, कृतकृत्य, अने सवज्ञ–सर्वदर्शी? एवा
वीतराग परमात्माने सम्यग् भक्ति–भावथी सदा नमस्कार थाओ!

मोह माया तजीने जे प्रसन्नचित्तथी परमात्म प्रभुनी पूजा सेवा
करे छे ते सर्व अघन टाळी अंते अनघ एवा अक्षयपदने वरे छे. जे
उपर मुजब परमात्मानुं स्वरुप सद्बुद्धिथी विचारीने विवेक पूर्वक
तेमनी पवित्र आज्ञाने यथाशक्ति आराधवारुपी उपासना निष्कपट-
पणे करे छे ते अनुक्रमे दृढ अभ्यासना योगथी सर्व दुःखनो अंत
करीने पोतेज परमात्मपदने वरे छे.

---

२४ पात्रापात्रने समजी सुपात्रने दान दे.

जे संसारथी उदासीन थइ सर्वज्ञ वीतराग वचनानुसारे सर्व
आरंभ परिग्रहनो त्याग करी पांच महाव्रतोने धारण करीने स्व क-
र्तव्य सावधानपणे साधवा उजमाळ रहे छे ते जैनशासनमां सुपात्र
कहेवाय छे तेथी विरुद्ध वर्तन करनार प्रमादी, स्वच्छंदी या दंभी

डोळघालुनी कुपात्रमां गणना थाय छे. कल्याणार्थीए कुपात्रनी उपेक्षा करीने प्रतिदिन सुपात्रनीज पोषणा करवो युक्त छे.

सुपात्रमां पण न्यायोपार्जित द्रव्यवडे विवेक पूर्वक क्षेत्र कालादि विचारीने करेलो व्यय अत्यंत हितकारी थाय छे.

सुपात्रने कुपात्र बुद्धिथी के कुपात्रने सुपात्र बुद्धिथी दीधेलुं दान दूषित छे.

पात्रापात्रनी योग्य परीक्षा पूर्वक सुपात्रने स्वल्प पण आपेलुं विवेकवाळुं दान अमूल्य थइ पडे छे, विवेक विना तो ते विशेष पण फलीभूत थतुं नथी.

स्वाभाविक प्रेम, उल्लास, उदारता, अने अकुंठित भावना विगेरे विवेक युक्त दाननां भूषण छे, तेथी दाताने अत्यंत लाभ थायछे.

स्वाति नक्षत्रनुं जळ जेम जूदां जूदां फळ आपे छे, तेम गमे तेवुं सारुं द्रव्य पण पात्रताना प्रमाणमांज फळीभत थाय छे. माटेज पात्रापात्र संबंधी विचार प्रथम कर्तव्य छे. सुपात्र दानथी शाळीभद्रनी पेरे विशाळ भोग पामी पछी स्वर्ग या मोक्षनां सुख प्राप्त थाय छे. अरे तेनी अनुमोदना मात्रथी मृगला जेवां मुग्ध प्राणी पण साक्षात् दातारनी पेरे स्वर्ग गति पामे छे. तो पछी परम प्रेम पूर्वक पवित्र चारित्रपात्र साधुजनोने जे सदा उल्लसित भावे दान दे छे,

अने अन्य देनारनी अनुमोदना करे छे तेमनुं तो कहेवुंज शुं? तेतो तेमना पवित्र आशयथी अक्षय सुखनाज अधिकारी थाय छे. तेथी शास्त्रकारे योग्यज कह्युं छे के हे भव्यो! तमे अनेक गुणनिधान स्वर्ग मोक्षदायक सकल सुखकारक, पाप ओघ निवारक, स्वपर हितदायी, अने सर्व संतोषकारी एवुं अक्षय सुखहेतुक दान निर्ग्रंथ मुनियोने सदा आपो.

---

२५ जरुर जणाय त्यांज जिनालय जयणाथी करावबुं.

कोइक भाग्यशाळी भव्यनुंज द्रव्य जयणाथी जिनालयमां वपराय छे.

नवुं जिनालय करवा करतां जूनुं समरावबामां सामान्य रीते आठ गुणुं फळ शास्त्रकारो कहे छे. शुद्ध समजथी तो ते करतां अनंतगणुं फळ मळे छे.

न्यायोपार्जित द्रव्यवाळो, उदार आशय, मोटी लागवगवाळो, शास्त्र नीति प्रमाणे चालनारो, भवभीरु श्रावकज जिनालय करावबानो अधिकारी छे. केमके तेज तेने जयणा पूर्वक निर्विघ्ने करावी साचवी शके छे.

जिनालय करावतां कोइपण जीवने लगारे किलामना उपजावची नहि. तेमां उत्तमोत्तम वस्तुओ वापरवी, अने कारीगरोना कामनी विशेषे कदर करवी. नीच जातिना लोकोने या मद्यमांस भोजीने तेमां कामे लगाडवा नहि. दयाना काममां पूरती काळजी राखवी.

चैत्य पूर्ण थये छते तेमां विलंब रहित विधिवत् जिनबिंबनी स्थापना करवी. बिंब प्रतिष्ठादिक सत् क्रिया यथायोग्य सुविहित साधु पासे करावची. सूरिमंत्रादिकथी प्रतिष्ठित प्रभु प्रतिमामां अपूर्व चैतन्य प्रगटे छे, जेथी भव्य जीवोने दर्शन करतां शाक्षात् समवसरणनुं भान थाय छे, अने प्रभु महिमाथी पूजा भक्तिमां भाविक जीवो तल्लीन थइ जाय छे.

प्रभु प्रतिमा शास्त्रोक्त नीति मुजब प्रमाणमां नानी या मोटी करावचामां आवे छे. जेने देखतांज भव्य जीवोने प्रभुनी पूर्व अवस्थानुं यथार्थ भान थइ आवे छे, जेथी तेओ छद्मस्थ, केवळी, अन र्वाण अवस्थाने जूदी जूदी रीते भावी शके छे.

स्नानार्चनवडे छद्मस्थ अवस्था प्रातिहार्यवडे केवळी अवस्था, अने पर्यंकासने काउस्सग्गमुद्राथी प्रभुनी निर्वाण अवस्था भावी शकाय छे.

जिनाबिंब युक्त जिनालय ज्यां सुधी स्थिर रहे त्यां सूधी अनेक भव्य जीवो उक्त भावना वडे महान् लाभ उपार्जन करी अनेक भव-संचित कर्मनो क्षय करीने नागकेतुनी पेरे अविचळ पदवी वरे छे.

आथी केवळ जश कीर्त्ति माटे जरुर विना नवां जिनालय करवा करतां जीर्ण जिनालय समरावववानी केटली बधी जरुर छे ते स्पष्ट समजी, अल्प द्रव्यथी, अल्प श्रमथी अने अल्प वखतथी अचिंत्य लाभ लेवाने अने एम करीने अक्षय नामना मेळववाने आत्मार्थी जनोए भुलवुं जोइतुं नथी. ज्यां सुधी पूर्व पुण्योदये लक्ष्मी साध्य छे, त्यां सुधीज तेवुं महत्त्वनुं काम स्वतंत्र पण बनी शके तेम छे. एम जाणी विचारमांज वखत नहि गाळतां आवां परमार्थ कार्यमांज तेने सफळ करवो योग्य छे. जीर्णोद्धार करावनार महाशय पोताना आत्मानोज उद्धार करे छे एटलुंज नहि पण अनेक भव्यात्माओनो पण उद्धार करे छे. ते वात उपरली हकिकत समभावे विचारतां स्पष्ट मालम पडशे.

पूर्वे पण अनेक भूपति, अमात्य अने श्रेष्ठीलोकोए आवा जीर्णोद्धार करीने स्वपर उद्धार कर्याना दाखला शास्त्रमां मोजुद छे.

---

२६ निर्मळ भावनाओ भाव.

निर्मळ मनथी दान, शीळ, के तप विगेरे धर्मकरणी यथाशक्ति करतां अथवा नहि करी शकाय तेने माटे शोच पूर्वक अभ्यास करतां या तो कोइ महाशयने विधिवत् धर्मकरणी करतां देखीने मनमां जे शुभभाव पेदा थाय ते विगेरे भावना कहेवाय छे. उक्त भावना वडेज करेली करणी सफळ थाय छे, अभिनव भाव पेदा थाय छे अने अंते भव भ्रमणनो अंत आवे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा, अने माध्यस्थ्यरुप भावना चतुष्टय दरेक कल्याणार्थी जनोए प्रत्यहं भाववा—आदरवा योग्य छे, तेथी उक्त चारे भावनाओनुं स्वरुप कंइक संक्षेपथी पण जाणवानी जरुर छे.

१ मैत्री—सर्व कोइ मारा मित्र छे, कोइ मारा शत्रु छेज नहि. सर्व कोइ सुखी थाओ! कोइ दुःखी नज थाओ! सर्व कोइ सुखना मार्गे चालो! कोइपण दुःखना मार्गे नहि चालो! सर्व कोइ सत्य सर्वज्ञ भाषित धर्मनुंज शरण ग्रहो! कोइपण अधर्म या कुधर्मना पासमां नहि पडो! एवी पवित्र बुद्धि सर्व प्रति राखवी ते मैत्री०

२ मुदिता—या प्रमोद—मेघमाळाने देखी जेम मोर केकारव करे छे, अने चंद्रने देखी जेम चकोर खुशी थाय छे तेम गुण महो-

दयने देखीने भव्य जीवो अंतरमां आल्हाद पामी उल्लसित थाय ते मुदिता०

३ करुणा—कोइ दीन दुःखीने देखी स्वशक्ति अनुसारे सहाय अर्पि तेनुं देखीतुं दुःख दूर करवा, अने धर्महीन जीवोने यथायोग्य हितोपदेश दइ धर्म सन्मुख करवा उचित सहाय आपी धर्मना अधिकारी बनाववा प्रयत्न करवो ते करुणाभावना कहेवाय छे.

४ मध्यस्थ–देव गुरु धर्मना निंदक, नास्तिक, निर्दय निष्प्रतिकार्य (जेने कोइ रीते हितोपदेश लागे नहि एवा अनार्य) जीवो उपर पण द्वेष नहि करतां कर्मनी विचित्रता मात्र विचारी तटस्थ रही स्वकर्तव्य करवुं पण नाहक रागद्वेषथी कर्मबंध थाय तेम नहि करवुं तेनुं नाम मध्यस्थ भावना छे.

अथवा भव वैराग्यने करनारी अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व आदि द्वादश भावनाओ भव्य जीवोए निरंतर भाववा योग्य छे. उक्त भावनाओना बळ थकी भरत महाराजा मरुदेवादिक अनेक भावित आत्माओ परमपदना अधिकारी थया छे. तथा दरेक मोक्षार्थी जनोए उक्त भावनाओनो प्रतिदिन परमार्थथी अभ्यास करवो योग्य छे.

पूर्वोक्त भावना विना करवामां आवती धर्मकरणी पण अलूणा

धान्यनी पेरे लूखीज लागे छे अने भावना युक्त ते अमृत समान स्वादिष्ट लागे छे. एथीज कह्युं छे के तद्हेतु अने अमृत क्रिया शीघ्र मोक्ष सुख अर्पे छे.

---

२७. रात्रि भोजननो त्याग कर.

सूर्य अस्त थया पछी अन्नादि भोजन मांस समान अने जळ पानादि रुधीर समान कह्युं छे तेथी ज्ञानी पुरुषोने ते वर्ज्यज छे.

दिवसमां पण भोजन करतां अनेक सूक्ष्म जीवो उडतां भोजनमां आवी पडे छे तो पछी रात्री वखते तो तेवा असंख्य जीवो भोजनमां आवी पडे एमां तो कहेवुंज शुं ? आथीज रात्रि भोजन वर्ज्य छे. दिवसमां पण रसोइ करतां उपयोग नहि राखवाथी या भोजन करती वखते गफलत करवाथी कोइ झेरी जीव के तेनी झेरी लाळ मांहे पडया होय तो तेथी भोजन करनारना जीवनुं पण जोखम थाय छे.

जो दिवसमां पण बेदरकारीथी आटलो भय रहे छे तो रात्रिमां एवा अवनवा वनावो स्वभाविकज बनवा पूरतो भय राखवो जोइये. जो भोजनादिक करतां भोजनमां जू आवी जाय तो जळोदर रोग पेदा थाय, जो करोळीयो वगेरे आवे तो लूता (कोढ). आदिक

रोग पेदा थाय, जो कीडी या धनेडा विगेरे क्षुद्र जीवो आवे तो बुद्धि नष्ट थाय, मांखी आवे तो वमन थाय, वाळ आवे तो कंठ (स्वर) भंग थाय, अने झेरी जीवोनां विष गरलादिक आवे तो पोताना प्राण पण जाय. एम समजीने स्वदेहनी रक्षा माटे पण रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवो उचित छे. परमार्थ बुद्धिथी तेनो त्याग करवाथी तो असंख्य जीवोने अभयदान देवाना अनंत पुन्यना भागी थइने उभयलोकमां उत्कृष्ट सुख पामी शकाय छे. आथी रात्रि भोजननो सर्वथा त्याग करवा शास्त्रकारोए भार दइने कह्युं छे.

शास्त्र संबंधी पवित्र आज्ञानो भंग करीनेज मूढमतिजनो रात्रि-भोजन कर्या करे छे, तेओ पुण्य सामग्रीने निष्फळ करीने, करेलां क्लिष्ट कर्मना योगथी भवान्तरमां घूड, नोळीया, साप, मार्जार, अने गरोळी जेवा नीच अवतार पामी नरकादिकनी महाव्यथाने पामे छे. रात्रि भोजनने शास्त्र नीतिथी तजनार भाइ ब्हेनोए सूर्य अस्त पहेलां बे घडीथी मांडीने सूर्योदय पछी बे घडी सुधी भोजन-नो त्याग करवो जोइये, अने एम करवाथी एक मासमां १५ उप-वासनो लाभ सहज मळी शके छे. तेमज जो 'गंठसहियं' प्रमुख पच्चख्खाण पूर्वक प्रतिदिन एकाशन अथवा ब्यशन करवामां आवे तो एक मासमां २९ या २८-उपवासनो अवश्य लाभ मळे छे.

---

२८ मोह मायाने तजीने विवेक आदर.

'हुं अने मारुं' ए मोहना मंत्रथी जगत् मात्र आंधळुं थइ गयुं छे. परंतु 'नहि हुं अने नहि मारुं' ए प्रतिमंत्र मोहनो पण पराजय करवाने समर्थ छे.

शुद्ध आत्म द्रव्य एज हुं छुं अने शुद्ध ज्ञानादि गुण एज मारुं धन छे. ते शिवाय हुं अने मारुं कंइ नथी, एवी शुद्ध समज मोहनुं निकंदन करवाने समर्थ छे. तेथी दरेक मुमुक्षुए एज आदरवा योग्य छे.

नाना प्रकारना राग द्वेषवाळा विकल्पो वडे जेणे मोह मदिरानुं पान कर्युं छे ते पोतानुं भान भूलीने अनेक प्रकारनी विपरीत चेष्टाओने वश थइ चारे गतिमां भमतोज फरे छे, अने विडंबना पात्र ज थाय छे. तेथी मोह मायामां नहि फसातां तेनोज क्षय करवा यत्न करवो युक्त छे. मोह मायाने सर्वथा जीतनारा अप्रमत्त मुनियोज जगतमां शिरसा वंद्य छे. सर्वथा मोह रहित वीतराग मुनियोज परम शान्त छे.

वज्रबंधन करतां पण रागबंधन आकरुं छे अने तेने माटे प्रबळ वैराग्यनी पूरती जरुर छे. वैराग्यवडे गमे तेवुं राग बंधन दूर थइ जाय छे.

अज्ञान-अविवेक ए मोह बंधननुं, अने ज्ञान-विवेक ए वैराग्य दशा प्रगट करवानुं प्रबळ कारण छे.

पूर्वे जीवे जेवो शुभाशुभ अभ्यास कर्यो होय छे तेवोज तेने जन्मांतरमां उदय आवे छे, एम समजीने सदा शुभज अभ्यास सेववो अने अशुभ अभ्यास त्यजी देवो युक्त छे.

जे लक्षपूर्वक सदा शुभ अभ्यासनुंज सेवन करे छे, तेने पूर्व सेवित अशुभ कर्मोनो आपोआप अनुक्रमे अंत आवे छेज.

जेम निर्मोही-मोहरहित महा पुरुष वस्तु स्वरुपने जाणी जोइ शके छे तेम मोहाधीन-मूढात्मा कदापि जाणी शकतो नथी. तेतो बेभानताथी छता गुणमां दोषनो अने छता दोषमां गुणनो आरोप करी ले छे. आवो विभ्रमकारी मोह दूर करवा मुमुक्षुओए सतत उद्यम करवो युक्त छे. मोहनो क्षय करवामांज तेमना चारित्रनी सफळता रहेली छे, एम समजीने जेम रागादिक विकारोनो लोप थाय तेम तेओ प्रमाद रहित परमार्थ पंथमां प्रवर्तवा प्रतिदिन प्रयत्न शील रहे छे. अने अन्य आत्मार्थी जनोने पण उक्त सन्मार्गमां ज प्रवर्ताववा उपदिशे छे.

---

२९ खोटी ममतानो त्याग कर.

नित्य मित्र समो देहः स्वजनाः पर्व सन्निभाः ॥
जुहार मित्र समो ज्ञेयो, धर्मः परम बंधवः—

जितशत्रु राजाने सुबुद्धि नामा प्रधान छे. बुद्धि निधान होवाथी ते राजाने बहु वल्लभ छे, छतां क्वचित् दैववशात् तेना उपर कुपित थयाथी तेणे कोइक मित्रनुं ज्यां सुधीमां राजानो कोप शान्त थइ जाय त्यां सुधी शरण लेवानुं धार्युं. तेने नित्य मित्र, पर्व मित्र, अने जुहार मित्र नामना त्रण मित्र छे. प्रथम नित्य मित्र पासे गयो तो "अति परिचयात् अवज्ञा" ए न्यायथी तेनी वात हसी काढवाथी ते पछी पर्व मित्र पासे गयो. तेणे कंइक प्रथम तो आश्वासन आप्युं पण सत्यवात निवेदन करीने दाद मागतां तेणे पोतानुं असामर्थ्य जणाव्युं. छेवट प्रधान कंटाळीने जुहार मित्र पासे आव्यो तो तेणे पोताना उदार स्वभावने अवलंबी प्रधानने असाधारण आवकार आपीने भारे आश्वासन पूर्वक जणाव्युं के मित्र! आज तमे कंइ भारे आपत्तिमां आवी पडया छो एम तमारी मुखमुद्रा उपरथी हुं समजी शकुं छुं. तेथी कहुछुं के तमे निश्चिंत थइने जे दुःखनुं कारण होय ते मने शीघ्र जणावो. आथी प्रधानने घणी हिंमत आवी, अने सत्य हकीकत निवेदन करवाथी तेणे कह्युं के भाइ! लगारे फीकर

करशो नहि. ज्यां सुधी मारा खोळीयामां प्राण छे त्यां सुधी तमारो वांको वाळ करवाने कोइ समर्थ नथी. तमे सुखेथी अहिं रहो. आवा आवकारवाळा आश्वासनथी अत्यंत खुशी थयेलो प्रधान जूहार मित्रनुंज शरण करीने रह्यो. काळ जतां राजानो कोप पण उपशांत थयो, अने प्रधाननी भीति नष्ट थइ गइ. पण आवेली विपत्तिमां तेने मित्र संबंधी यथार्थ अनुभव थइ आव्यो. आपणे पण आमांथी बहु सरस शिखामण लेवानी छे. यमराजाने जितशत्रु राजा समान समजवो. अने आत्माने सुबुद्धि प्रधान समान समजवो, तेमज देहने नित्य मित्र समान, स्वजन वर्गने पर्व मित्र समान अने परम उपगारी धर्मने जुहार मित्र समान समजवो. ज्यारे यमराज कुपित थाय छे, अने कोइनो अवसान वखत आवे छे त्यारे ते गाभरो बनीने पोताना बचाव माटे बहु बहु फांफां मारे छे. परंतु ते सर्वे निष्फळ जाय छे. प्रतिदीन यत्नपूर्वक पाळी पोषीने पोढो करेलो देह तेने लगारे सहाय देतो नथी, तेमज वळी प्रसंगे पोषवामां आवता स्वजनो पण तेने मुखथी मीठुं बोलवा उपरांत कंइपण विशेष सहाय करी शकता नथी. परंतु जुहार मित्रनी जेम अल्प परिचित छतां ऊदार आशयवाळो धर्मज केवळ परम उपकारी बंधुनी पेरे परम सहायभूत थाय छे. एम समजीने शाणा माणसोए दुष्ट देहादिकनो मोह तजीने एकांत हितकारी परम गुणनिधान सद्गतिदाता धर्मनोज आश्रय करवो युक्त छे. तेनी उपेक्षा करी देहादिक उपर

ममता राखवी केवळ अनुचितज छे. विवेकी हंसो तो देह ममत्वने तजीने निर्मळ धर्म रसायणनुंज पान करे छे.

---

३० संसार सायरनो पार पामवा प्रयत्न कर.

नर्क, तिर्यंच, मनुष्य अने देवता संबंधी ८४ लक्ष जीवायोनीथी अति गहन अने महा भयंकर भवसायरने तरी पार पामवुं अति अवश्यनुं छे.

दुर्बुद्धि, मत्सर अने द्रोहरुपी तोफानथी संसारसायरमां स्वच्छंदपणे परिभ्रमण करनार लोकोने भारे संकट सहन करवुं पडेछे.

कषायरुपी पाताल कळशा, कामरुपी वडवाग्नी, स्नेहरुपी ईंधन अने घोर रोगशोकादि रुप मच्छ कच्छपथी आकुळ एवा अज्ञानमय तळावाळा संसार समुद्रना मार्गो दुःखना डुंगराओथी आसपास रुंधायेला छे. ए सर्व विषम संयोगोमांथी सहजमां पसार थइ जवुं बहु दुर्लभ छे, तेथी तेनी पार जवाने इच्छनारे अत्यंत काळजी राखवानी जरुर छे, संकट समये हिंमत हारी जनार प्रमादीजनो भवनो पार पामी शकता नथी. पण गमे तेवा विषम संयोगोने समभावे भेटी पुरुषार्थ योगे पोतानो मार्ग कापे छे तेज अंते भवनो अंत करी शके छे.

खरा हिंमतवान पुरुषो आपत्तिने संपत्तिरुप देखीने सुखे उल्लंघी जाय छे. पण पुरुषार्थ हीन जनो तो प्राप्त संपत्तिनो पण सदुपयोग करी शकता नथी. एटलुंज नहि पण उलटो तेनो दुरुपयोग करीने दुःखी थाय छे.

जेम राधावेध साधनार माणसने राधावेध साधतां बारीक उपयोग राखवो पडे छे, तेम दरेक मुमुक्षु जनने पण अवश्य राखवानो छे.

सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन (श्रद्धा) अने सम्यग् वर्तन-सदाचरण (ए रत्नत्रय) आ संसारसायर तरीने पार पामवानो अकसीर उपाय छे.

जन्ममरणजन्य अनंत दुःख जळथी आ संसार समुद्र भरेला छे. छतां तीर्थंकर जेवा निपुण निर्यामकनी सहायथी तेनो सुखे पार पामी शकाय छे.

दृढ संकल्पथी संसार सागरनो पार पामवानी पवित्र बुद्धिथी सर्वज्ञ वचनानुसारे सदुद्यम सेवनार सत्पुरुष जरुर संसारनो पार पामे छे. उत्तम प्रकारनी क्षमा, सरलता, नम्रता, निर्लोभता, उपरांत तप, संयम, सत्य, शौच, निर्ममता अने ब्रह्मचर्य रुप दशविध यतिधर्मनुं यथार्थ सेवन करनार शीघ्र मोक्ष सुख साधी शके छे. शुद्ध

यति धर्मनी अनुमोदना पूर्वक यथायोग्य सहाय अर्पनार संविज्ञ पक्षीय साधु या श्रावको पण निर्दंभाचरणथी अनुक्रमे संसार समुद्रनो अंत करी अक्षय सुखने साधी शके छे.

---

३१. धैर्यने धारण कर. (HAVE PATIENCE)

समतानां फळ मीठां छे. अने ते अनुभव गम्य छे. कंइपण सत् कार्य धीमेथी पण दृढताथी करनार अंते अवश्य फतेहमंद नीवडे छे, तेम अधीरजथी एकाएक करनार भाग्येज फतेह मेळवे छे. नियम वगरनी उतावळ उलटी नुकसानकारी निवडे छे.

दीर्घदृष्टि जनो कोइपण महत्त्वनुं कार्य प्रथम नाना पायाथी शरु करे छे अने अनुकूल सामग्री मळतां तेने उत्साह- पूर्वक आगळ वधारे छे.

अदीर्घदृष्टि जनोने तो तेवो पूर्वापर विवेक नहि होवाथी अनुकूल सामग्रीना विरहे उत्साहभंगथी आरंभेलुं गमे तेवुं महत्त्वनुं कार्य पण छोडी देवुं पडे छे.

व्यवहारिक कार्यनी पेरे कोइपण धार्मिक कार्यमां पण आत्मार्थी पुरुपे अभ्यास पूर्वक हिंमतथी आगळ वधवानी जरुर छे.

धर्मार्थी माणसे प्रथम पात्रता मेळववाने माटे मार्गानुसारी थवुं युक्त छे. अने अक्षुद्रतादिक उत्तम गुणोनो अखंड अभ्यास करीने क्षुद्रता, निर्दयता, शठता, अप्रमाणिकता, अनीति, अन्याय, असत्य, अहंकार, कृतघ्नता अने स्वार्थ अंधता विगेरे अनार्य दोषोने प्रथम जरुर देशवटो देवो जोइये.

आ प्रमाणे अनुक्रमे अधिकार पामीने सत् समागमनी टेव पाडीने तेमांथी वखतो वखत मध्यस्थपणे सत्यने समजी सत्य ग्रहण करवुं जोइये. आ प्रमाणे वधती जती सत्य तत्त्वरुचिथी अने तत्त्व ज्ञानथी सम्यक्त्व अपरनाम समकित या सम्यग् दर्शननी प्राप्ति थाय छे. आनुं नामज तत्त्व श्रद्धा, तत्त्व दर्शन या विवेक ख्याति कहेवाय छे.

तत्त्व श्रद्धारुपी विवेक दीपक घटमां प्रगटया पछी अनुक्रमे तत्त्वाचरण–सन्मार्ग सेवन करवा माटे सतत प्रयत्न करवो जोइये, अने तेवो दृढ अभ्यास करीने सद्गुरु समीपे समकित मूळ उक्त अहिंसा, सत्य, अस्तेयादिक व्रतो यथाशक्ति आदरवां जोइये. तेमां पण प्रथम मांस, मदिरा, शीकार, परदारा गमन, वेश्यागमन, चोरी, अने जूगाररुप सप्त व्यसनोने तो उभयलोक विरुद्ध जाणीने अवश्य परीहरवां जोइये. तेमज मध, मांखण, भूमिकंद अने रात्रिभोजन विगेरे पण वर्जवां जोइए.

सुश्रावके अनुक्रमे सद्गुरु समीपे पांच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत अने च्यार शिक्षाव्रत मळीने द्वादश व्रत संबंधी दृढ नियम लेवो जोइये. आवा व्रतधारी श्रावकोए प्रभुनी पवित्र आज्ञाने अनुसरी एवो तटस्थ अने न्याययुक्त-निष्पक्षपात व्यवहार चलाववो जोइए के ते प्रायः सर्व कोइने प्रिय थइ पडया विना रहेज नहि. निपुण श्रावक न्यायनो एवो नमूनो होवो जोइये के कोइ पण सहृदय पुरुष तेनुं अनुमोदन या अनुकरण करवा चूके नहि.

आवा सुश्रावको जरुर स्वपरनी उन्नति पूर्वक पवित्र जिनशासननी उन्नति पण करी शके छे, अने अनुक्रमे सत् चारित्रने सेवी अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके छे.

शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिक्य लक्षण सम्यकत्व पूर्वक द्वादश व्रतधारी श्रावको, धर्म आराधक थइने आनंद, कामदेवनी पेरे एकावतारी थइने अंते शास्वत सुखने पामी शके छे.

केटलाक भवभीरु महाशयो संसारनी असारता विचारीने, पूर्वोक्त व्रतोनुं यथार्थ पालन करी, मुनि योग्य महाव्रत लेवा उजमाळ थाय छे.

महाव्रत लेवाना अर्थीजनोए प्रथम तेनुं स्वरुप यथार्थ पीछाणीने थोडो वखत पण पहेलां तेनो अभ्यास पाडीनेज ते लेवां योग्य छे.

अननुभवीपणे महाव्रत लेवाथी क्वचित् परीषह उपसर्गादिकथी पडी जवानुं बने छे, तेम अनुभवी महाशयथी महाव्रत लीधा वाद प्रायः पडी जवानु वनतुं नथी.

मन, वचन, के कायाथी कोइपण जीवनी हिंसा राग के द्वेष वडे जाते करवी नहि, वीजा पासे कराववी नहि अने करनारने सारा जाणवा नहि ते प्रथम महाव्रत छे.

क्रोध, मान, माया, लोभ, भय के हास्यथी कंइपण असत्य (अप्रिय-अहितकारी) वचन कदापि कहेवुं, कहेवराववुं के अनुमोदवुं नहि. ते वीजुं महाव्रत कहेवाय छे.

कोइपण प्रकारे देवगुरु के स्वामीनी आज्ञा विरुद्ध कोइनी कंइपण वस्तु अन्न, पान, वस्त्र, पात्र, औषध, भेषज के स्थानादि कदापि लेवी लेवराववी के अनुमोदवी नहि. तेमज मन वचन अने कायाथी सचेत (सजीव) के मिश्र (जीवमिश्र) एवी उपरली वस्तु कदापि कोइ आपे तोपण ग्रहण करवी नहि ए त्रीजुं महाव्रत छे.

देव मनुष्य तिर्यंच संवंधी मैथुन मन वचन के कायावडे कदापि सेववुं नहि. अन्यने सेववा प्रेरवुं नहि तेमज सेवनारने सारा जाणवा पण नहि ए चतुर्थ ब्रह्मचर्य नामे महाव्रत कहेवाय छे.

धर्मोपकरणादिक केवळ धर्म निर्वाहने माटेज जरुर जेटलां राखी तेनो यथार्थ उपयोग करवा उपरांत कोइ पण वस्तु अल्प मल्यवाळी या बहु मूल्यवाळी होय तेना उपर मूर्छा करवी नहि. निःस्पृहता राखवी, अने परस्पृहा तजी देवी ते परिग्रह त्याग नामे पांचमुं महाव्रत छे.

उक्त पंच महाव्रत उपरांत मुनिए रात्री भोजननो सर्वथा त्याग करवानो छे. जेथी षटरस पैकी कोइपण वस्तु-अन्न पानादिकनो सर्वथा निषेध सूर्यास्त पहेलां (बे घडीथी) सूर्योदय पछी (बे घडी) सुधी मुनिने माटे निश्चित होवाथी तेवो पण अभ्यास प्रथमथीज कर्तव्य छे. मुनिने उत्तम प्रकारनी क्षमा, मृदुता, रुजुता, अने संतोषादि दशविध यतिधर्म बहुज बारीकीथी निरंतर आराधवा योग्य छे.

समतादिक श्रेष्ट धर्मना सेवनथी मुनिजनो शीघ्र मोक्ष सुखने प्राप्त थाय छे. तेथी अंतरमां मोक्षार्थीजनोने एनुंज शरण योग्य छे.

---

३२ दुःखदायी शोकनो त्याग कर.

इष्ट वस्तुना वियोगथी के अनिष्ट वस्तुना संयोगथी बहुधा मुग्ध अज्ञानी जनोने जे अंतरमां दुःखकारी मोह पेदा थाय छे अने रुदनादिक विविध चेष्टाओ करावे छे तेनुं नाम शोक कहेवाय छे.

सम्यग् ज्ञानी-विवेकी आत्माने उक्त मोह-शोक एटलो सतावी शकतो नथी. क्वचित् क्षणमात्र अवकाश मेळवी ज्ञानीने पण शोक छळवाने जाय छे, परंतु अंते तो विवेक योगे तेनोज पराजय थायछे.

जे जे कारणो मुग्ध अज्ञानी जनोने मोह-शोकनी वृद्धीनां छे ते ते ज्ञानी-विवेकीने मोहादिकनी हानिनां एटले के वैराग्य वृद्धिनां ज थाय छे.

पूर्वे अनेक सतीओ विगेरेने एवां कारणो संसार चक्रमां अनेकशः मळ्यां छे. पण परिणामे तेवां कारणोथी तेमने लाभज थयोछे.

तेवा ज्ञान विवेक के वैराग्यनी गंभीर खामीथी आज काल मुग्ध अज्ञानी लोको उक्त मोह-शोकने वश पडी भारे दुःखी थाय छे, थता देखाय छे, एटलुंज नहि परंतु पोतानी अनार्य टेवथी अन्य जनोने पण दुःखी करे छे.

मूर्ख मावापो दीर्घदृष्टिनी खामीथी या स्वार्थ अंधताथी बाळलग्न, कजोडां, कन्याविक्रय अने विधर्मीनी साथे पोतानां पुत्र पुत्रीने परणाववाथी तेमने जन्मांत दुःख दरियामां डूबाववाना पातकी थाय छे. उक्त दुःखनो अंत बहुधा मावापनी समज सुधरवाथी आववा संभवे छे. कंइ पण आपत्ति आवी पडतां धीरजथी तेनी सामा थइने तेनो क्षय करवाने बदले मुग्ध जनो अधीरां थइने उलटां वधारे

दुःखी थाय छे, तेनो श्रेष्ठ उपाय ए छे के तेवे वखते हिंमत नहि हारतां धीरजथी आवेली आपत्तिनी सामा थवुं, एटले के युक्तिथी आवेली आपत्तिने उल्लंघी जवा जेटलुं डहापण वापरवा भूलवुं नहि.

जे आवेली गमे तेवी आपत्तिने हिंमतथी अने डहापणथी उल्लंघी जाय छे, जे तेवे वखते धीरज राखीने स्वधर्म—न्याय, नीति, सत्य, प्रमाणिकता विगेरेने तजतो नथी तेने अंते आपत्ति संपत्ति रुप थाय छे. त्यारे जे प्रथमथीज आपत्तिने संपत्तिरुप मानीने भेटे छे अने स्वधर्म—कर्तव्यमां सदा चूस्त रहे छे तेनुं तो कहेवुंज शुं?

केटलाक मुग्ध अज्ञानी लोको मूएलानी पछवाडे बहु बहु शोक—विलाप करे छे अने एम करीने उभय अर्थथी चूके छे तेमज स्वपरनी नाहक पायमालीना कारणिक थाय छे, ते खरेखर धिक्कारपात्र छे.

मूएलां माणस स्व स्वकरणी प्रमाणे परलोक गमन करी सुख दुःखना भागी थाय छे अने एज नियम हवे पछी परलोक गमन करनार हाल जीवता माणसने माटे छे तो मरनार माणसनी शुभाशुभ करणी उपरथी धडो लइने स्वचारित्रनो भविष्यने माटे विचार करवाने बदले नाहक अरण्यमां रुदननी पेरे मरनारनो पछाडी आक्रंदनादिक करवाथी शुं वळवानुं छे? तेथी तो नथी थवानुं मरनारनुं हित के नथी थवानुं हाल जीवतानुं हित. पण गेरफायदो अने

अन्याय तो प्रगटज छे. रुदनादिक करनार पोताना व्यवहारिक अने धार्मिक कर्तव्यथी चूके छे. अने अन्य प्रेक्षक–कौतुकी जनोने पण चूकावे छे. केटलीक वखत तो आवी चेष्टाओ केवळ रुढीनी खातरज करवामां आवे छे. गमे तेम होय पण तेवा व्यर्थ परिश्रम अने काळ व्ययथी प्रगट गेरफायदोज छे. शिवाय रुदनादिक विरुद्ध चेष्टाथी मरनारनी गति कदापि सुधरती नथी, तेथी केवळ अज्ञानता अने मोहनी प्रबळताथी स्वार्थ अंध बनीने अथवा अंध परंपराथी चालती आवेली रुढीने अनुसरी आवी अनर्थकारी करणी करवामां आवे छे एम स्पष्ट मालम पडे छे.

बीजुं जो मरनार माणस मंगळमय धर्मनुं आराधन करीने सद्गतिमां सिधाव्यो होय तो तेवा मंगळमय समये सगा संबंधीओए हर्षने स्थाने शोक करवो ए केटलो बधो अनुचित अने अन्याय भरेलो छे, ते आपोआप पोतानी स्वार्थ अंधताने दूर करी मध्यस्थपणे शान्त चित्तथी विचारी जोतां स्वभाविक रीते मालम पडी आवशे.

---

३३ मननो मेल दूर कर.

काम क्रोधादिक अथवा रागद्वेषादिक अंतर विकारोने उपशमावी अथवा क्षय करी देवाथीज चित्तनी शुद्धि करी कहेवाय छे.

ज्यां सुधी मननो मेल धोयो नथी त्यां सुधी गमे तेटला जळ स्नानथी पण पवित्र थवानो नथी. जेनुं मन शुद्ध-निर्मळ थयुं छे तेज खरो पवित्र छे.

जे समता कुंडमां स्नान करीने पोताना पापमळने पखाळी नांखे छे. अने फरी मलीनताने पामताज नथी. ते विवेकात्माज परम पवित्र छे.

जे कोइ अंतर शुद्धि करवाना उच्च उद्देशथी शास्त्रनी पवित्र नीतिपूर्वक प्रवृत्ति सेवे छे, ते पोताना पवित्र लक्षथी चित्तनी शुद्धि करी शके छे.

उक्त लक्ष पूर्वक शुद्ध देव गुरुनी पूजा करवानी अभिलाषा-वाळा सद्गृहस्थने जयणा पूर्वक जळ स्नान करवानी पण शास्त्रमां संमति छे.

तेथी अधिकार परत्वे गृहस्थलोको वडे एवा पण पवित्र हेतुथी जो जयणा पूर्वक जळस्नान करवामां आवे तो ते पण तेमने हित-कारी कहेलुं छे.

परंतु एवा उच्च उद्देशविना स्वच्छंदपणे अनेकवार जळस्नान करवामां आवे तो ते जळमध्यवर्ती मच्छनी पेरे कंइपण परमार्थथी हितकारी थइ शकतुं नथी. आथी आत्मार्थीजनोए अंतरमळ साफ

करवानोज मुख्य उद्देश मनमां स्थापी राखीने स्वस्व अधिकार प्रमाणे क्रियाकांड करवो घटे छे. निर्दंभ धर्मसेवीनो सरल आशय शीघ्र सफळ थाय छे.

सकळ धर्म साधनमां समता—रागद्वेष रहित वृत्तिनी प्रथम जरुर छे.

गमे ते दर्शनमां समताभावीनी सिद्धि अवश्य थवानी छे. केम के ते समदृष्टिथी रागद्वेष तजीने गमे त्यांथी तत्त्वनुंज ग्रहण करे छे. मिथ्याआग्रही—कदाग्रहीजनो एम कदापि करी शकता नथी. ते तो उलटा परनिंदादिकमां उतरी पोतानुं सर्वस्व बगाडी संसार चक्रमां पुनः पुनः भटक्या करे छे. तेमनुं अंतर विष नहि टळवाथी तेमने वारंवार जन्म मरणना फेरा करवा पडे छे. ते उपर एक कडवी तुंबडीनुं दृष्टांत लक्षमां लइ राखवुं बहु उपयोगी छे.—एकदा कोइ वृद्ध डोशीना पुत्रने अडसठ तीर्थमां जइ न्हावानो विचार थयो. पुत्रमां पात्रतानी मोटी खामीथी माता तेना कामने अनुमोदन आपती नहती, पण प्रथम तेनामां कोइ रीते पात्रता आवे ते जोवाने आतुर हती. पुत्र तो जूवानीना मदमां मातानां हितकारी वचनोनो पण अनादर करतो हतो. छेवट ज्यारे ते अडसठ तीर्थमां जवाने तैयार थयो त्यारे माताए तेने मधुर वचनथी कह्युं के बेटा! आ मारी कडवी तुंबडीने पण तीर्थ करावतो आवजे. मातानुं आ वचन तेने

कठण नहि लागवाथी मान्य राख्युं अने माताए आपेली कडवी तुं-
बडी साथे लइने ते तीर्थ करवा निकळ्यो, लौकिक रुढि मुजब बधा
तीर्थमां स्नान करी माताए साथे आपेली तुंबडीने पण स्नान करा-
वीने अनुक्रमे पोते पोताने स्थाने आव्यो. अने ते तुंबडी माताने
पाछी सोंपी. माताए तेनी समक्ष तपास करीने कह्युं के भाइ! अड-
सठ तीर्थमां न्हाया छतां तुंबडीनी कडवाश गइ नहि. आ प्रगट दा-
खलाथी तेने सरस बोध मळ्यो तेम दरेक धारे ते तेमांथी आवो बोध
मेळवी शके के अधिकार—योग्यता विना जेम स्वभावेज कडवी तुंबडी
अडसठ तीर्थना जळमां न्हाया छतां पोतानी स्वभाविक कडवाशने
तजी मोटी थइ शकी नहि तेम कोइपण पात्रता माटे पूरतो प्रयत्न
करीने पात्रता पाम्या विना गमे तेवी उत्कृष्ट करणीवडे पोतानामां
जड घालीने रहेला एवा काम क्रोधादिक अथवा रागद्वेषादिक
दोषोने कदापि दूर करी शकेज नहि. माटे मननी शुद्धि करवाना
अर्थीजनोए अंतरनो मेल साफ करवाने प्रथम क्षुद्रतादिक दोषोनुं
विरेचन करीने योग्यता मेळववानी अति आवश्यकता छे. अने एम
सावधानता पूर्वक उपाय करवाथी अंते समता जेवा श्रेष्ठ रसायणथी
चित्त शुद्धि सहजमां साध्य थइ शके छे.

जेम निर्मळ वस्त्र उपर जोइए एवो रंग चढी शके छे, अने
घठारीमठारीने साफ करेली भींतो उपर आवेहूब चीतामण उठी

शके छे तेम निर्मळ चित्तवाळाने शुद्ध धर्मनी यथार्थ प्राप्ति थइ शके छे.

जेम निर्मळ आदर्शमां वस्तुनुं यथार्थ प्रतिबिंब पडे छे तेम शुद्ध–निर्दोष चित्तमां पण शुद्ध तत्त्व धर्मनुं यथार्थ संक्रमण थइ शकेछे.

जेम निपुण वैद्य रोगीने प्रथम विरेचनादिकथी अंतरशुद्धि करवानुंज फरमावे छे, तेम सद्गुरु पण शुद्ध धर्मार्थी जनोने प्रथम मननो मेलज साफ करी लेवानी भलामण करे छे. अने खरुं हित पण एमज संभवे छे.

---

३४ मानव देहनी सफळता करी ले.

बुद्धेःफलं तत्त्व विचारणं च, देहस्य सारं व्रत धारणं च॥
वित्तस्य सारं किल पात्र दानं, वाचः फलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥ १ ॥

तत्त्वातत्त्व, सत्यासत्य, गुणदोष, हिताहित, लाभालाभ, भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय अने उचितानुचित विगेरेनो विचार करीने सारभूत तत्त्वनुं ग्रहण–सेवन करवुं एज सद्बुद्धि पाम्यानुं फळ छे.

दश दृष्टांते दुर्लभ मानव देह, आर्यक्षेत्र, उत्तम कुळजातिमां जन्म, इंद्रिय पटुता, शरीर नीरोगता, सद्गुरु योग, निर्मळ बुद्धि, धर्मरुचि अने तत्त्व–श्रद्धादि शुभ सामग्री महा भाग्ययोगे पामीने पांचे प्रमाद त्यजी उल्लसित भावथी सिंहनी पेरे शूरवीरपणे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अने निष्परिग्रहतादिक महाव्रतोनुं स्वरुप यथार्थ समजीने अभ्यास पूर्वक तेमनो स्वीकार करवो अथवा परिणामनी मंदता योगे समकित मूळ श्रावकनां बार व्रत पैकी बनी शके तेटलां समजीने तेवां पण व्रत धारण करवां. ए आ उत्तम मानव भव पाम्यानुं फळ छे. सप्त व्यसन, रात्री भोजनादिक अभक्ष्य भक्षण, अने भूमिकंदादिक अनंत जीवात्म वस्तु, अणगळ जळ-पान विगेरेनुं तो दरेक शाणा माणसे अवश्य वर्जन करवुंज जोइये. प्रारब्ध योगथी प्राप्त थयेली लक्ष्मीनुं फळ ए छे के तेनो उदार आशयथी परमार्थ दावे पुण्यक्षेत्रमां उपयोगमां करवो. यशकीर्त्तिनीज खातर दान पुण्य नहिं करतां केवळ कल्याणार्थे करवामां आवतुं पात्रदान परिणामे अनंतगणुं उत्तम फळ आपी शके छे. अने वचन शक्ति पाम्यानुं उत्तम फळ ए छे के सर्व कोइने प्रीति उपजे एवुं मिष्ट–मधुर अने हितकारीज वचन वदवुं. कदापि पण कोइने अप्रीति के खेद उपजे एवुं कडवुं के अहित वचन कहेवुं नहि. परने प्रिय एवुं प्रसंगने लगतुं हित–मित भाषण करनारज सत्यवादी होवाथी प्रायः सर्व कोइने मान्य थइ शके छे.

आ प्रमाणे टुंकाणमां कहेली हकीकत लक्षमां राखीने विवेकथी वर्तनार पोताना शुभ चरित्रथी स्व मानव भव सफळ करी शके छे. अथवा पूर्वे प्रसंगोपात बतावेली मैत्री मुदिता करुणा अने मध्यस्थ भावनाथी पण मनुष्य देहनी सफळता थइ शके छे. टुंकाणमां यथाशक्ति तन, मन, धनथी स्वपर हित साधी लेवुं एज आ मनुष्य भवनुं रहस्य छे. तेमां उपेक्षा करवी ए मूळगी मूडी खोवा जेवुं छे. तेथी जेम बने तेम प्रमाद रहित स्वपरहित साधवा सदा तत्पर रहेवुं सहृदय जनोने उचित छे.

सद्विवेकथी स्व कर्तव्य समजीने जे शुभाशयो शुद्ध अंतःकरणथी तेनुं सेवन करे छे, ते मनुष्य छतां दैवी जीवन गाळे छे; पण जे स्व कर्तव्य समजताज नथी अथवा तो समज्या छतां तेनी उपेक्षाज करे छे; ते तो मनुष्य रुपे पशु जीवनज गाळे छे एम कहेवुं युक्त छे.

जे पारकी निंदा करवामां मुंगो छे, परस्त्रीनुं मुख जोवामां अंध छे अने परद्रव्य हरण करवामां पांगळो छे, तेवो महापुरुषज लोकमां जय पामे छे. जेना घटमां विवेक दीपक प्रगटयो छे तेज लोकमां खरो पंडित छे, तथा जेणे मद्य, विषय, कषाय, निद्रा अने विकथारुप पांचे प्रमादने वश कर्यां छे एवो अप्रमादी पुरुषज जगतमां खरो शूरवीर छे.

---

३५ प्राणान्ते पण व्रत-भंग करीश नहिं.

प्रथम आपणाथी सुखे पाळी शकाय एवीज प्रतिज्ञा या व्रत-नियम लेवा योग्य छे, अने ते लीधा बाद तेने प्राणान्त सुधीं पाळवां जरूरनां छे.

जो प्रथम ग्रहण करवामां आवता व्रत-नियमनुं स्वरूप यथार्थ समजी लेवामां आवतुं होय अने तेनो जरुर जेटलो अभ्यास पण करवामां आवतो होय तो घणुं करीने व्रत भंगनो प्रसंगज आववा पामे नहिं.

आत्म कल्याणने माटे जे जे सारां व्रत ग्रहण करवां योग्य छे ते बधानुं स्वरुप संक्षेपथी के विस्तारथी प्रथम सद्गुरु समीपे समजी लइ तेमांथी आपणे सुखे पाळी शकीये एवां व्रतज ग्रहण करीने तेमने निरंतर संभारी संभारीने काळजी पूर्वक पाळवा प्रयत्न करवो जोइए.

जे व्रत-पच्चक्खाण उपयोग शून्य या समज्या विनाज लेवामां आवे ते दुःपच्चक्खाण होवाथी निष्फळ छे. तेथी तेवां व्रत लीधां होय या न होय तोपण प्रसंगोपात या च्हाइने सद्गुरु पासे जइ ते ते व्रत संबंधी जरुर जेटली समज लइने जो सारी रीत सावधान थइने ते पाळवामां आवे तो पोताना प्रयत्नना प्रमाणमां जरुर लाभ प्राप्त थइ शकेत. परंतु केवळ गतानुगतिकपणे संमूर्छिमनी पेरेज

वर्त्तवामां आवे तो अने तेटलुं कष्ट सहन कर्या छतां जोइये एवुं फळ कदापि थइ शकेज नहिं. जे जे व्रतनुं पालन प्रीतिथी रुचिथी करवामां आवे छे तेनुंज फळ सारुं बेसे छे. अरुचिथी करवामां आवती गमे ते क्रियानुं परिणमन सारुं थइ शकतुंज नथी. तेथी चित्तनी प्रसन्नता माटे भय (चित्तनी चंचळतां) द्वेष (अरुची) अने खेद (क्रिया करतां थाकी जवुं ते) दोषने दूर करवाने प्रथम प्रयत्न करवो जोइये. वस्तुनुं स्वरुप यथार्थ समजायाथी अने तेमां पोतानुं मन वेंधायाथी उक्त दोषो सहजमां दूर थइ शके छे. पछी खरी लहेजतथी पाळवामां आवता व्रतोथी आत्माने यथार्थ लाभ थाय छे. आ लोकना के परलोकना सुखने माटे करवामां आवती क्रियाने विष या गरल समान कही छे. क्रियानां फळ हेतु समज्या विना केवळ देखादेखीथी करवामां आवती क्रियाने ज्ञानी पुरुषो अननुष्टान कहे छे. ते ते क्रिया संबंधी फळ हेतु, विगेरेने समजी केवळ कल्याणने माटेज करवामां आवती धर्मक्रियाने तद्हेतु कहे छे, तेमज ज्यारे दृढ अभ्यासथी उक्त क्रिया मन वचन अने कायानी एकताथी अवंचक पणे थाय छे त्यारे तेमां अमृतनी जेवो स्वाद आववाथी ज्ञानी पुरुषो तेने अमृत क्रिया कहे छे; तद्हेतु, अने अमृत क्रियाज आत्माने मोक्षदायी छे, बाकीनी त्रण तो भव भ्रमणकारीज कहेली छे. एटलो अधिकार अति उपयोगी होवाथी प्रसंगोपात कहेवामां आव्यो छे.

द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भाव, अने संघयण विगेरे विचारी स्वशक्तिना प्रमाणमां समज पूर्वक सद्व्रतोने धारण करीने जे तेमनुं अखंड पालन करे छे तेमनुंज जीवित सफळ छे, परंतु जे कंइ पण पूर्वापर विचार कर्या विना विवेक शून्यपणे व्रत लइने विराधे छे तेमनुं जीवित केवळ निष्फळ छे. व्रत खंडीने लुहारनी धम्मणनी जेम जीवनने गाळनार जेवो कोइ कमनशीब नथी. व्रत खंडीने जीवनार करतां व्रतने अखंड राखीने मरनार माणस घणो उत्तम छे, केमके अनेक भव भ्रमण करतां पवित्र व्रत पालननी रुचि थवीज मुश्केल छे तो तेने प्राणान्त सुधी अखंड पालन करवानी प्रबळ कामनानुं तो कहेवुंज शुं?

ग्रहण करेलां पवित्र व्रतोने अखंड पालन करीने परलोक गमन करनार माणसो पोतानी पाछळ अखंड कीर्त्ति अने अमूल्य दृष्टांत मूकता जाय छे, जेने अनुसरीने अनेक आत्महितेच्छक जनो सन्मार्गनुं सारी रीते सेवन करे छे. भरतेश्वर, बाहुबली प्रमुख अनेक सताओना अने ब्राह्मी, सुंदरी प्रमुख अनेक सतीओना एवा उत्तमोत्तम दाखला जगतमां प्रसिद्धज छे.

च्हाय तो स्त्री होय या तो पुरुष होय पण पुरुषार्थ परायणताथीज सद्व्रतोनी समज मेळवीने ते तेमनुं विधिवत् पालन करी शके छे, अने एम विधिवत् व्रतनुं अखंड पालन करीने स्वजीवन

सफळ करे छे. एवी सद्बुद्धि सर्व कोइने जागृत थाओ ? अने व्रत भंग करवा या कराववा संबंधी कुबुद्धिनो सर्वथा अंत आवो एज इष्ट छे.

---

३६ मरण वखते समाधि साचववा खूब लक्ष राखजे.

जीवने जीवित पर्यंत जेवा शुभाशुभ अभ्यासनी आदत होय छे तेवीज तेनी शुभाशुभ असर तेना मरण समये समाधिना संबंधमां थाय छे. एम समजीने शाणा भाइ व्हेनोए जीवित पर्यंत शुभ अभ्यासनीज आदत पाडवी उचित छे. सारां कारण सेववाथी कार्य पण सारुंज थाय छे. एवा निश्चय अने श्रद्धापूर्वक मरण वखते समाधि इच्छनार जनोए जीवित पर्यंत शुद्ध भावनाथी शुभ करणी करवा परायण रहेवुं जरूरनुं छे. सतत लक्षपूर्वक खंतथी सत् करणी करनार सत्पुरुषो अध्यवसायनी विशुद्धिथी अंते समाधियुक्त मरण करी सद्गतिना भागी थाय छे.

जो तुं जन्म मरणना दुःखथी त्रास पाम्यो होय तो श्री वीतराग वचनानुसार निर्दोष धर्मनुं आराधन करीने जेम समाधि मरणनी प्राप्ति थाय तेम खास लक्ष राख. समाधि मरणथीज जीवित पर्यंत करेला धर्मनी सार्थकता थाय छे. गमे तेटला उंडा कूवामांथी जळ काढवाने माटे लांबी दोरी साथे लोटो विगेरे कुवामां नांखतां

दोरीनो अमुक छेडानो भाग हाथमां मजबुत रीते पकडी राखवामा आवे छे अने जो ते जुक्तिथी जाळवी शके छे तो पहेला लोटा साथे अभीष्ट जळ मेळवी शके छे पण जो छेवटना भागमां कंइपण गफलत करे छे तो ते सर्वने गमावी पोताना जानने पण जोखममां नांखे छे, तेम समाधि मेळवी पोतानो जन्म सुधारवाने आखी जिंदगीना मोटा भाग सुधी यत्न कर्या छतां जो छेवटना भागमां गफलत–बेदरकारी करवामां आवे तो पोताना चळचित्तथी ते अभीष्ट समाधिने अंत वखते मेळववा भाग्यशाळी थइ शकतो नथी, परंतु दूषित थयेलां मन, वचन, अने कायाथी उलटी असमाधि पेदा करीने अधोगतिने पामी जन्म मरण जन्य अनंत दुःखनोज भागी थाय छे. माटे राग द्वेषादिक अंतर विकारो जेम निर्मूळ थवा पामे तेम यत्नथी जीवित पर्यंत निष्काम चित्त राखी व्यवहारिक नैतिक अने धार्मिक जीवन गाळवामां आवे अने कदापि पण स्वइष्ट कार्यमां गफलत थवा न पामे तो छेवट अंत समये समाधि प्राप्त थया विना रहे नहिं. एम समजीने कोण विवेकीनर स्वइष्ट कार्यनी उपेक्षा करी स्वच्छंद वर्तनथी संसार परिभ्रमण पसंद करे वारु ? अथवा खरेखरुं तत्त्व रहस्य शास्त्रकारोए कह्युं छे के "जेवी गति एवी मति अने मति एवी गति" आ मार्मिक वचन बहु बहु मनन करवा योग्य छे. अने टुंकाणमां सर्व हितोपदेशना सार रुप छे.

समाधि मुखना कामी जनोए आराधना प्रकरणादिकमां क-

हेलां च्यार शरणां, दुष्कृतनिंदना, सुकृत अनुमोदना सर्व जीव साथे खामणा, संलेखना, पंचाचारनी विशुद्धि तथा नवकार महामंत्रादिकनुं लक्ष पूर्वक स्मरणादिक दश अधिकारो बहु सारी रीते समजवा, आदरवा. अने आराधना अथवा पुन्य प्रकाशना स्तवनथी पण उक्त अधिकार सारी रीते समजी शकाय तेम होवाथी अंत समाधिने इच्छवावाळा भाइ व्हेनोए तेनुं निरंतर श्रवण मनन करीने तेमां रहेला परमार्थनुं परिशीलन करवुं युक्त छे.

गमे तेवा संयोगोमां पोतानुं खरुं निशान नहि चूकनार दृढ अभ्यासी अंते समाधि मरणने पामी अक्षय सुखनो अधिकारी थइ शके छे.

---

३७ आ भव परभव संबंधी भोगाशंसा करीश नहि.

आ लोक अथवा परलोकना सुखनी इच्छाथी करवामां आवती धर्म करणी अल्प फळदायी थाय छे, पण जो तेज करणी केवळ पारमार्थिक मोक्ष सुखने माटेज सहेतुक समजीने विवेकथी करवामां आवी होय तो तेथी मुख्यपणे मोक्षनो अने गौणपणे सामान्यतः स्वर्गादिक सुखनो सहेजे लाभ मळे छेज. मनना परिणाम मुजब सामान्य विशेष फळनी प्राप्ति थाय छे. माटे जेम बने तेम नबळा परिणामने मनमां अवकाश आपवो नहि. कदाच तेवो परिणाम थयो

तो तेने दुर करी देवा घटतो प्रयत्न करवो, अने शुभ भावनाने शीघ्रस्थान आपवुं. खेडुत लोको खेड करी खातर नांखीने जेम धान्यना मोटा पाकने माटे धान्यनां बीज वावे छे, पण केवळ पलाल (घास) ने माटे वावता नथी, छतां धान्यनी निष्पत्ति साथे पलाल पण साथेज पाके छे; तेम मोक्षने माटे करवामां आवती करणीथी प्रसंगोपात स्वर्गादिकनां सुख पण मळे छे, केवळ स्वर्गादिक सुखने माटेज धर्मकरणी करवानी जरुर नथी. छतां तेवां क्षणिक सुखनी बुद्धिथीज जो धर्मकरणी करवामां आवे तो तेनुं फळ पण प्रायः तेटलुंज अल्प मळे छे.

आलोक परलोक संबंधी सुखनी बुद्धिथी मोह अने अज्ञान गर्भित करेली करणी गमे तेवी कठण होय तोपण तेथी प्रायः परिणामे हित थतुं नथी पण उलटुं भारे नुकसान थाय छे. केमके तुच्छ आशंसा पूर्वक करेली कठण क्रियाथी क्वचित् देवगति पण मळे छे, परंतु पाछळथी पूर्व पूण्य क्षयानंतर तेनो अधः पात थया विना रहेतो नथी तेथी ज्ञानी पुरुषोए तेवी विष या गरल क्रियानो मंडूक—चुर्णना न्यायथी निषेध करेलो छे. जेम एक मंडूकी (संमूर्छिम देडकी)ना चूर्णमांथी लाखो नवनवी मंडूकीओ पेदा थाय छे तेम तुच्छ भोगाशंसाथी करेली करणीवडे लाखोगमे नवनवा भोगायतनो (देहो) धारण करी जन्ममरणजन्य अनंत दुःखना अनेकशः भागी थवुं पडे छे. परंतु जेम दग्ध थयेला ते मंडूकीना चूर्णमांथी एक पण नवी

मंडूकी पेदा थइ शकती नथी तेम विवेक पूर्वक भोगाशंसा तजीने निष्कामपणे जो तद्हेतु अने अमृत क्रियाने सेववामां आवे छे तो तेथी अंते भवनो अंत करीने परम समाधिमय मोक्ष सुखनी प्राप्ति थाय छे.

---

३८ स्व कर्तव्य समजीने स्वपर हित साधवा तत्पर रहे.

जे शुभाशय प्रथम स्वहित यथार्थ समजीन आदरे छे, तेमांज अहोनिश सावधान रहे छे, तेज महाशय कालांतरे परहित साधवाने समर्थ थइ शके छे. पण जो पहेलां पोतानुं खरुं हितज शुं छे ते पूरुं जाणतो के आदरतो नथी तो ते परहित शी रीते साधी शकशे? पोते निर्धन छतां अन्यने शी रीते धनाढ्य करी शकशे? पोतेज द- रिआमां डूबतां छतां अन्यने शुं तारी शकशे? माटे स्व हितने यथार्थ समजीने साधनारज परहितने पण परमार्थथी जाणी समजीने साधी शकवानो ए वात निःसंशय सिद्ध छे.

ज्ञानी–विवेकीजनो स्वहितनी पेरे पराहितने पण स्व कर्त- व्यज समजे छे, अने तेथीज तेओ निरभिमानपणे स्वहित समजीनेज परहित करे छे.

तत्त्वदृष्टि महापुरुषो कदापि पण ‘हुं अमुकनुं हित करुंछुं’ ‘मारा विना अमुकनु हित थइ शकशे नहिं’ एवुं कर्तृत्व–अभिमान

लावता नथी. स्वहित अने परहित तेमने मन एक छे, जूदां भासतां नथी, तेथी तेवा मिथ्याभिमानने मनमां आववा अवकाश पण मळतो नथी. खरुं कारण तो ए छे के तेमने तेमनुं खरुं हित यथार्थ समजायुं अने अनुभवायुं छे. तेथी स्वाहितने सहायभूत सर्व सात्त्विक विचार या भावनानेज तेमना मनमां स्थान मळे छे पण तेमां विघ्नभूत बाधक एवा कोइपण क्षुद्र विचार के भावनाने स्थान मळी शकतुंज नथी अने ते तेवा तत्त्व दृष्टि विवेकी जनोने केवळ उचितज छे.

आ उपरथी ए वात सिद्ध थाय छे के स्वपर हितैषीए प्रथम स्वहितज सारी रीते समजीने आदरवुं अने अनुभववुं योग्य छे.

स्वहित पण साधवुं सहेज नथी. केमके ते योग्यतावंतनेज प्राप्त थाय छे.

स्वहित साधवाने योग्यता मेळववा माटे नीचे बतावेला गुणोनो खास अभ्यास करवानी जरुर छे. तेवा सद्गुणो मेळव्या विना बाधकभूत दोषो दूर थताज नथी, जेथी जीव स्वहित साधवाने अशक्त-अयोग्य थाय छे; तेथी प्रथम आत्महितैषीए नीचेनी हकिकत ध्यानमां लेवी जरुरनी छे. तेनुं यथार्थ परिशीलन करवाथी आत्मा जरुर स्वहित साधी शके छे.

१. अक्षुद्र—पारकां छिद्र जोवानी कुटेव त्यजवाथी अने स्व-

दोषने नीरखी सुधारवानी सारी टेव पडवाथी आत्मामां गंभीरता नामे सद्गुण प्रगट थाय छे.

२. रूप निधि–पांचे इंद्रियो परवडी अने देह नीरोगी होवाथी शरीर सौष्टव गुण लाभे छे. विषय लोलुपता तजीने मन अने इंद्रियोने नियममां राखवाथी अने आरोग्यताना नियमोने पण लक्ष पूर्वक पाळवाथी उक्त गुण प्राप्त थइ शके छे. 'शरीर माद्यं खलु धर्म साधनं'–शरीर ए धर्म साधनोमांनुं एक अति अगत्यनुं साधन होवाथी तेनी योग्य संभाळ लेवानी सर्व कोइनी प्रथम फरज छे.

३. सौम्यता–जेम चंद्रने देखी सर्व कोइने शीतळता वळे एवी प्रकृतिनी सहज शीतळता सात्विक विचार, सात्विक भाषण, सात्विक कार्योवडे सहज सिद्ध थाय छे. सहज शीतळ स्वभाववाळा माणसो सर्व कोइने अभिगम्य थाय छे. तेवी ठंडी प्रकृति प्रायः सर्व कोइने प्रिय होवाथी ते सर्वना विश्वासपात्र थइ पडे छे.

४. जनप्रिय–लोक प्रिय गुण सर्व कोइने वल्लभ थवाय एवां सत्कार्य–सुकृत करवाथी अने आलोक परलोक विरुद्ध दुष्कृत तजवाथी प्राप्त थइ शके छे. आ गुणथी माणस धारे एवां मोटां कार्य करी शके छे.

५. अक्रूर–तामसी प्रकृति तजीने क्षमा, नम्रता तथा अनुकंपादिक गुणनो अभ्यास करवाथी क्रूरता–कठोरता दोष दूर थाय

छे. अने हृदयमां, वचनमां, अने कृतिमां सहज कोमळता प्रगट थाय छे.

६. भीरु–धर्मी माणसोनी संगतिथी अथवा धर्म शास्त्रनुं श्रवण मनन करवाथी या तो पूर्वना शुभ संस्कारथी जीवने स्वभाविक रीते पापनो या परभवनो डर लागे छे. कंइ पण अनीति के अन्याय करतां मन झट दइने संकोचाय छे, अने पापथी तरत विरमे छे. उक्त गुणथी पोताना पूज्य वडील जनोनुं मन पण न दूभाय एवी काळजी रखाय छे.

७. अशठ–शठता (छळ प्रपंचादिक कपट वृत्ति) तज्याथी ए गुण प्राप्त थाय छे, सरल स्वभाव धारवाथी स्वव्यवहार पण सरल करी शकाय छे. कपटी माणसोने तो कपट करीने पोतानो दोष गोपववाने माटे बहु वक्र व्यवहार चलाववो पडे छे. सरल स्वभाविने तेम करवानी कंइ जरूर रहेती नथी. केमके सरल स्वभाविनां वचन उपर सर्व कोइने विश्वास आवे छे. कल्याण पण एवा सरल स्वभावीनुंज थाय छे, कपटीनुं थतुं नथी.

८. दाक्षिणतावंत–स्व इच्छा होय या न होय पण कंइक लाभालाभ विचारीने वडीलनी अथवा समुदायनी तीव्र इच्छाने मान आपीने कंइ कार्य करवानी पद्धति लोक मान्य होवाथी तेथी कचित् सारो लाभ पण मळे छे. परंतु उक्त दाक्षिणता कंइक मर्यादासर

होवी जोइये. विवेक विनानी दाक्षिण्यताथी विपरीत परिणाम पण आवे छे ए वात भूलवी जोइती नथी, विवेकथीज स्वपर हित साधी शकाय छे.

९. लज्जालु—उत्तम कूळनी अथवा धर्मनी मर्यादा पाळनार माणसोना परिचयथी या पूर्वना शुभ संस्कारथी लज्जानो गुण लाभी शके छे. ए गुणथी कंइपण खोटुं काम करतां जीव डरे छे अने शुभ कामममां पराणे प्रवृत्ति करवा दोराय छे. एवी लज्जानी दरेकने आवश्यकता छे.

१०. दयालु—क्षमा, सहनशीलता अने दुःखी लोकोनी दाझ दीलमां धरवाथी अथवा नीच निर्दयजनोनो सहवास तजीने उदार आशयोनी संगति करी तेमना जेवा सद्गुणोनो अभ्यास करवाथी सर्व प्रति दयाभाव रहे छे.

११. समदृष्टि—मध्यस्थ—आंधळा राग के द्वेष तजीने निष्पक्षपातपणे सत्यासत्य संबंधी तोल करवानी टेववाळाने ए गुण प्राप्त थइ शके छे.

१२. गुणरागी—गमे तेमां रहेला सद्गुण प्रत्येना साचा प्रेमथीज उक्त गुण प्राप्त थाय छे, गुणरागथी गुणनी अने गुणद्वेषथी दोषनी प्राप्ति थाय छे. निर्गुणना रागथी पण दोषनीज पुष्टि थाय छे केमके केवळ रागअंध दोषने पण गुणज मानी ले छे. अने द्वेष

अंश पण गुणने दोषज मानी ले छे. विवेक शून्यपणे रागादिक करतां उलटुं विपरीत परिणामज आवे छे, माटेज ज्ञानी पुरुषो परीक्षा पूर्वकज सद्गुणना रागी थवानुं फरमावे छे, जेथी सकळ दोषने अनुक्रमे दूर करीने सद्गुण संपन्न थवाय छे.

१३. सत्यवादी—जेने असत्य अहित अप्रिय भाषण हलाहल झेर जेवुं लागे छे, अने सत्य हित अने प्रिय वचन अमृत जेवुं मिष्ट लागे छे तेज परमार्थथी सत्यवादी थइ शके छे. ते सत्यनी खातर प्राण पाथरशे.

१४. सुपक्ष—जेनां सगां संबंधीं निर्मळ बुद्धिनां, मायाळु, धर्मशीळ अने टेकीलां होय तेमज बीजांने पण तेवांज थवा प्रेरणा करता होय ते सुपक्ष (समर्थ पक्ष—बळवाळो) होवाथी सर्व कार्यमां फतेहमंद नीवडे छे.

१५. दीर्घदर्शी—कंइपण कार्य सहसा नहिं करतां तेनुं भावी परिणाम विचारीने विवेकथी करवा योग्य कार्य करे ते दीर्घदर्शी समयज्ञ कहेवाय छे.

१६. विशेषज्ञ—जे खरुं स्वहित शुं छे अने ते शी रीते साध्य थइ शके छे ए तथा गुणदोष, लाभालाभ हिताहित, द्रव्य, क्षेत्र, काळ, अने भावने सारी रीते समजीने बीजाने समजावी शके ते विशेषज्ञ गणाय छे.

१७. क्रमानुगत-शिष्ट सदाचारी सत्पुरुषोना पगले चालनार पोते पण अनुक्रमे सत् चारित्रना परिशीलनथी सारी पंक्तिमां आवी शके छे.

१८. विनयवंत-मद, अहंकारादिक दोषने त्यजीने संत पुरुषोनी सेवाथी या साधुजनोनी हित शिखामणने हृदयमां धरवाथी विनय-नम्रता आवे छे.

१९. कृतजाण-करेला गुणना जाण माणसो पोताना उपकारी माता, पिता, स्वामीके गुर्वादिकना बनी शके तेटला गुणानुवाद करवा चूकता नथी. कृतज्ञ माणस उपकारीना हितने माटे बने तेटलो स्वार्थनो भोग आपे छे.

२०. परहितकारी-सहुने स्वहित व्हालुं छे एम समजीने स्वहितनी पेरे परहित करवामां पण जेने प्रीति छे ते मनथी, वचनथी के कायाथी कोइनुं अहित थाय एवां कार्यथी दूर रहेवानोज अने हित थाय एवांज शुभ कार्यमां जोडावानो प्रयत्न करे छे.

२१. लब्धलक्ष-सर्व बाबतमां जेनी दृष्टि आरपार प्होंची शके छे एवो चकोर पुरुष सुखेथी स्वहित समजीने तेने विवेकथी साधी शके छे. उक्त २१ गुणथी भूषित भव्य स्वहित साधवाने संपूर्ण अधिकारी छे. स्वहित साधवाना अनेक मार्ग पूर्वे प्रसंगे प्रसंगे बताव्या छे. एम जेणे यत्नथी स्वहित-स्व कर्तव्य साध्युं छे तेने परहित पण

सु साध्यज छे. ते परहितने स्वहित–स्व कर्तव्य समजीने सुखे साधी शके छे. पण जे स्वहित–स्व कर्तव्यनेज समजता नथी के सेवता नथी ते बापडा निर्धननी पेरे परहित तो शी रीतेज शाधी शके वारु ?

---

३९ पंच परमेष्टि महामंत्रनुं निरंतर स्मरण कर.

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, अने साधु ए पांच परमेष्टि छे.

जेमणे रागद्वेष अने मोहादिक अंतरंग शत्रुगणनो सर्वथा उच्छेद करी सर्वज्ञ सर्वदर्शी संपूर्ण सहजानंदि अने सर्वशक्तिमान थइ निर्दोष वचनवडे अनेक भव्य जीवोनो उद्धार कर्यो छे ते अरिहंत देव कहेवाय छे. जेमणे सर्व घाती अघाती कर्मोनो सर्वथा अंत करीने आत्माना स्वभाविक अनंत गुणोने प्रगट करी लोकना अग्र भागे स्थिति करी छे ते सिद्ध परमात्माना नामथी ओळखाय छे.

पंचेंद्रिय निग्रह, नवविध ब्रह्मगुप्तिना धारक, च्यार कषायथी मुक्त, पांच महाव्रत युक्त, पंचाचार पाळवाने समर्थ पांच समिति अने त्रण गुप्तिना पालक एम ३६ प्रधान गुणोवडे अलंकृत आचार्य भगवंत होय छे. तेमनां वचन तीर्थंकरनां वचननी पेरे माननीय थाय छे.

सांगोपांग आगमने अर्थ रहस्य युक्त जाणता छता, अन्य शिष्योने पठाववामां कुशळ अने प्रमाद रहित मूळ-उत्तर व्रतने पाळवामां तत्पर छता, शिष्य समूहने धर्मशिक्षा देवामां चतुर एवा भविष्यमां आचार्यपद पामवाने योग्य धर्मगुरु उपाध्यायना नामथी ओळखाय छे.

बाह्यांतर परिग्रहथी मुक्त मुमुक्षु जनो जैन दर्शनमां साधु, श्रमण अने निग्रंथादिना नामथी ओळखाय छे, तेओ अहोनिश प्रमाद रहित धर्मसाधनमां तत्पर छता स्वहित पूर्वक परहित साधे छे. अहिंसा, संयम अने तप लक्षण चारित्र धर्ममां सदा सावधानपणे वर्तता भव्य जीवोने सन्मार्ग बतावे छे.

शुद्ध आत्म धर्मथी अलंकृत होवाथी उक्त पंच परमेष्ठी जगतमां सारभूत छे, जेमां अरिहंत अने सिद्ध शुद्ध देवपदे, आचार्य, उपाध्याय अने सर्व साधुजनो शुद्ध गुरुपदे तेमां सारभूत रहेला दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने तप शुद्ध धर्मपदे वर्ते छे. एवो शुद्ध धर्म दरेक आत्म व्यक्तिमां शक्तिरुपे रहेलो छे. अने तेज शक्तिरुपे रहेलो शुद्धधर्म परमेष्ठी पुरुषोनी पेरे परम पुरुषार्थ योगे प्रगट थइ शके छे. परमेष्ठी पुरुषोने ते प्रगट थयेल छे. आपणा प्रत्येक आत्मामां शक्ति रुपे रहेला ते शुद्ध धर्मने प्रगट करवानी पवित्र बुद्धि-निष्ठाथी जो पूर्वोक्त पंच परमेष्ठि भगवंतनुं तन्मयपणे भजन, स्मरण, रमण, पूजन करवामां आवे तो आपणामां शक्तिरुपे रहेलो शुद्ध दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने

तप लक्षण धर्म अवश्य प्रगटभावने पामे ए वात निःसंशय छे. माटे आपणे शुद्ध देव गुरु अने धर्म संबंधी सद्गुरु समीपे सारी समज मेळवी, तेनुं मनन करी, तेवा पवित्र लक्षथीज जगतमां सारभूत एवा पंच परमेष्ठी महामंत्रनुं अहोनिश रटण करवुं युक्त छे एम पवित्र लक्ष पूर्वक परमेष्टि महामंत्रनुं अहोनिश रटण करतां आपणे पण अंते कीट भ्रमरीना न्यायथी परमेष्ठीरुप थइने अविनाशीपदना अवश्य अधिकारी थइ शकीशुं.

---

४० धर्म रसायणनुं सेवन कर.

इदं शरीरं परिणाम दुर्बलं, पतत्यवश्यं श्लथ सन्धि जर्जरं॥
किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते, निरामयं धर्म
रसायनं पिब ॥ १ ॥

गमे तेटलुं पाळ्युं पोष्युं छतां परिणामे दुर्बळ एवुं आ शरीर, तेना सांधा नरम पडवाथी जाजरुं थयुं छतुं अंते अवश्य (एक दिन) पडवानुंज छे, तो हे मूढ दुर्मति ! तुं शा माटे अनेक जातनां औषध भेषज करीने देहनुं दमन करे छे ? केवळ नीरोगी अने निरुपम एवा धर्म रसायण नुंज तुं अहोनिश पान कर. धर्म रसायणविना कदापि तारा जन्म, जरा अने मृत्युरुपी भाव–रोगोनुं निकंदन थइ शकशेज नहि. जन्म जरा अने मृत्यु एज प्राणीयोना खरेखरा रोग

छे. अने धर्मरसायनवडेज ते दूर थइ शके तेम छे. तो पछी जन्म-मरणजन्य अनंत दुःखथी उद्विग्न थयेला मुमुक्षु जनोए तेनुं पान करवा शा माटे ढील करवी जोइये ? वीरप्रभुए गौतम स्वामीने पण पूर्वे कह्युं छे के गोयम म कर प्रमाद " ए वचन बहु बहु मनन करवा योग्य छे.

आपणा साचा अर्थमां—स्वार्थमां अनादर करवो, स्वहितथी चुकवुं, स्व कर्तव्यथी भ्रष्ट थवुं, अने नहिं करवा योग्य करवाने तत्पर थवुं, तेनुं नाम ज्ञानी पुरुषो प्रमाद कहे छे. टुंकाणमां सर्वज्ञ प्रभुनी अति हितकारी आज्ञानी उपेक्षा करीने स्वच्छंद वर्तन करवुं तेनुं नामज प्रमाद छे. मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथा मळीने प्रमादना मुख्य पांच भेद छे, जे धर्मार्थीजनोए अवश्य परि-हरवा योग्य छे. अप्रमादी पुरुषज धर्मनुं यथार्थ सेवन करी शके छे. प्रमादशील जनो जरुर स्व कर्तव्य—कार्यथी चूके छे.

उपशम श्रेणि उपर आरुढ थयेला, चौद पूर्वधर साधुओ पण प्रमाद वशात् स्वस्थानथी चूकी पतित थाय छे तो बीजानुं ते शुं गजुं ? एम समजी जेम बने तेम प्रमाद स्थानने तजी अप्रमत्त थवुं जोइये. थोडा पण व्रण, रुण, के अग्निनी पेरे प्रमादने पण वधतां वार लागती नथी तेथी ते ज्यां सुधी निरवशेष नष्ट न थाय त्यां सुधी तेनो विश्वास करवो भवभीरु जनोने उचित नथीज.

शुद्ध भावना एज खरुं रसायण छे. केमके तेना विना गमे

तेवी धर्म करणी पण फळीभूत थती नथी अने शुद्ध भावना मात्रथी सर्व करणी सफळ थाय छे. माटे उक्त भावनानो अवश्य अभ्यास करवो जोइये. 'भावना भव नाशिनी'—भावना जन्म मरणनां दुःख मात्रनो अंत करे छे अने अक्षय अनंत सुख मेळवी आपे छे.

मैत्री, मुदिता, करुणा अने मध्यस्थता रुप भावना चतुष्टय परम हितकारी छे. तेमज अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्वादिक द्वादश भावना पण भव भयने हरनारी छे.

शुद्ध भावना रहित क्रिया काचना कटका जेवी होवाथी त्याज्य छे. पण क्रिया रहित शुद्ध भावना तो अमूल्य रत्न जेवी होवाथी सेव्य छे. शुद्ध भावना रहित अंध क्रियाथी अहंकारादिक दोषो प्रभवे छे त्यारे केवळ शुद्ध भावनाथी तो शुद्ध गुणानु रागादिक सद्गुणो प्रगटे छे. शुद्ध भावनावंत कदापि वीतराग देशित सन्मार्गनो अनादर करेज नहिं, एटलुंज नहि पण यथाशक्ति ज्ञान—क्रिया रुप मोक्ष मार्गनो आदर करे छे अने एज खरुं रसायण छे.

शुद्ध भावना युक्त धर्म क्रिया दूधमां साकर जेवी, उज्वळ, शंखमां दूध जेवी अने सुवर्णमां जडेला साचा रत्न जेवी मनोहर थइ पडे छे, अने आत्म कल्याण पण एवी सत्क्रियाथीज साधी शकाय छे तेथी मोक्षार्थी सज्जनोए एवी सत्क्रियानोज खप करवो उचित छे. जेथी शीघ्र स्वमोक्ष थइ शके.

४१ वैराग्य भावथी लक्ष्मी विगेरे क्षणिक पदार्थोनो मोह तजी दे.

अनित्य अने असार क्षण विनाशी पदार्थोमां मोह बांधीने मुग्ध—अज्ञानी जीवो महा दुःखी थाय छे. ममतावडे थयेला मति भ्रमथी मूर्ख जनो अनित्य वस्तुने नित्य, असार—अशुचि वस्तुने सार—शुचि अने पराइ वस्तुने पोतानी मानी तेमां मुंझाइ मरे छे. जो जीवने वस्तु स्वभावनुंज यथार्थ भान थाय तो खोटी वस्तुमां नाहक मुंझाइ मरवानो वखत आवेज नहिं, माटे प्रथम मध्यस्थपणे वस्तु स्वरुप जाणीने विवेकथी बाधकभूत भावोनो त्याग करीने कल्याणकारी मार्गनुंज ग्रहण करवुं जोइये.

संपदो जल तरंग विलोला, यौवनं त्रि चतुराणि दिनानि॥
शारदाभ्रमिव चंचलमायुः, किं धनैः कुरुत धर्म मनिन्द्यम्.

लक्ष्मी जळ तरंगनी जेवी चंचळ छे, यौवन वय शीघ्र चाल्युं जाय छे, अने आयुष्य शरद रुतुना वादळनी जेम अत्यंत अल्पकाळ टके एवुं छे तो अस्थिर धनने माटे आटली दोडधाम करवानी शी जरुर छे? आटला अल्प समयमां बनी शके तेटली त्वराथी अहिंसादिक शुद्ध निर्दोष धर्मनुंज सेवन करवुं खास जरुरनुं छे. केमके सर्व इच्छित वस्तु

धर्मथीज प्राप्त थइ शके छे. शुद्ध धर्मसेवन विना भविष्यमां कंइपण सुखनी आशा राखवी व्यर्थज छे. अने धर्म सेवनथी सर्व प्रकारनु सुख स्वतः प्राप्त थाय छे.

ज्यां सुधी जीव संसारना मोहमय संबंधमांज रच्यो पच्यो रहे छे त्यांसुधी ते मोह मायाना जोरथी संसारना स्वरूपने यथार्थ समज्या विना, स्वहित साधवाने कंइपण शक्तिवान् थइ शकतो नथी. ज्यारे जीवने संसार संबंधी दुःखनो खरो ख्याल आवे छे त्यारेज तेथी छूटवाने कंइक साधननी शोध करे छे, अने भाग्ययोगे सत्संग वडे धर्मनुं स्वरुप समजवाने तेमज समजीने तेने सेववाने ते समर्थ थइ शके छे, संसारनुं स्वरुप विचारीने तेनो खरो ख्याल लाववाने माटे ज्ञानी पुरुषोए अनित्य, अशरणादिक बार भावनाओ शास्त्रमां कही छे तेनु यथार्थ मनन करतां भरत, मरुदेवी, नमि राजर्षि, प्रमुख अनेक भव्य जीवो मुक्तिपदने पाम्या छे. माटे उक्त भावनाओनुं स्वरुप लेश मात्र बताववुं अत्र दुरस्त धार्यु छे.

१. अनित्य—देह, लक्ष्मी अने कुटुंब विगेरे सर्व संयोगिक वस्तुओनो वियोग थया विना रहेवानो नथी. सर्व अंतक काळ सर्वत्र परिभ्रमण करी रह्यो छे. कालने काळनो भय छे एम समजीने शीघ्र स्वहित साधवुं.

२. अशरण—स्वजन देह के लक्ष्मी पैकी कोइपण परभव जतां

जीवने सहायभूत थइ शकतां नथी. देह के कुटुंबने गमे तेटलां पोष्यां छतां अंते आपणां थतां नथी. स्वार्थी नित्य मित्रनी पेरे ते छेवटे छेह दे छे. तेथी जूहार मित्रनी जेवा परम उपकारी धर्मनुंज शरण करवुं योग्य छे.

३. संसार–आप आपणां कर्मानुसारे सर्वे जीवो, नर्क, तिर्यंच मनुष्य अने देव गतिमां गमन करे छे, जेणे जेवुं शुभाशुभ कर्म जेवा भावथी कर्युं होय छे, तेने तेवुं शुभाशुभ फळ तेवी रीते भोगववुंज पडे छे. विविध कर्म वशात् जीवो नटवत् विविध चेष्टाओ करे छे. कर्मने वशवर्ती जीवोनी तेवी विचित्र अवस्था जोइने तत्त्व दृष्टि मुंझाइ जता नथी, कारण के तत्त्व दृष्टि पुरुषो तेनां मूळ कारणने सारी रीते समजता होवाथी मननुं समाधान करी शके छे, अतत्त्व दृष्टि जनो एवी रीते मननुं समाधान करी शकता नथी, तेथीज दुःखमय संसारमां पण रच्या पच्या रहे छे.

४. एकत्व–जीव एकलोज आवे छे अने एकलोज जाय छे. साथे फक्त पुण्य अने पापज रहेवाथी जीव तदनुसारे सुख दुःखने पामे छे. जीव जेवां जेवां कर्म करे छे, तेवां तेवांज आ भवमां के परभवमां फळ भोगवे छे. तेमां कोइ कंइ पण मिथ्या करी शकतुं नथी. छतां आणे मारुं सुधार्युं अथवा आणे मारुं बगाड्युं, एम जीव मुग्धताथी मानी बेसे छे. तथा एकनी उपर राग अने बीजा उपर

द्वेष करीने नाहक दुःख पेदा करे छे, तत्त्वथी जोतां आपणुं सुधारनार के बगाडनार आपणेज छीये.

५. अन्यत्व–देह, लक्ष्मी के कुटुंबने आत्मानी साथे अत्यंत संबंध नथी, फक्त अल्प काळने माटे संयोग संबंध थयेलो छे के जेनो अवश्य वियोग थवानो छे. अरे नित्य मित्र समान देह पण अंते आपणुं थतुं नथी तो अन्यनुं तो कहेवुंज शुं? वळी देह लक्ष्मी विगेरेनो अने आत्मानो स्वभाव भिन्न भिन्न छे. देह, लक्ष्मी विगेरे जड वस्तुओ छे, त्यारे आत्मा चैतन्य युक्त छे. देह विगेरे वस्तुओ क्षण विनाशी छे अने आत्मा तो अचळ अविनाशी छे एम समजी देहादिक संबंधी मिथ्या मोह तजीने निर्मळ ज्ञान, दर्शन, अने चारित्रादिक आत्मानी सहज संपत्ति संप्राप्त करवा प्रयत्न करवो जोइये.

६. अशुचि–आ शरीर मळ मूत्रादिक महा अशुचिथी भरेलुं छे पुरुषने नवद्वारे अने स्त्रीने द्वादश द्वारे अशुचि वहेती रहे छे. तेमज सडन, पडन अने विध्वंसनज जेनो धर्म छे एवा आ जड देहमां कोण विवेकशील मुंझाय? आवा असार अस्थिर अने अशुचिमय देहनी खातर कोण तत्वदृष्टि पुरुष पापनो पोटलो शिरपर उठावे? आवा अशुचिमय देहमां विवेकी हंस तो राचेज नहिं, केवळ निर्विवेकी–भूंड जेवाज राची शके, अने तेनी खातर अनेक पाप करीने पण खुशी थाय.

७ आश्रव–हिंसा, असत्य, अदत्त, अब्रह्म, अने असंतोष प्रमुख तथा विषय कषायादिक संबंधी सर्व विरुद्ध क्रिया आत्माने सहजानंद सुखमां अंतरायभूत होवाथी आश्रव संज्ञाथी ओळखाय छे. कंइक सारा आशयथी मन, वचन, अने कायावडे क्रिया करवाथी पुण्याश्रव अने माठा आशयथी पापाश्रव थाय छे. पुण्याश्रवथी कंइक सुखनी प्रतीति अने पापाश्रवथी दुःखनीज प्रतीति थाय छे. सोनानी के लोढानी बेडी जेवा बंने आश्रवोने विवेकी पुरुष संवर वडे छेदी शके छे.

८ संवर–आलोक के परलोक संबंधी भोगाशंसा तजीने केवळ आत्म कल्याणार्थे शुद्ध चारित्र धर्मनुं सेवन करीने आश्रवनो अटकाव करवो तेनुं नाम संवर छे. गमे तेवा अनुकूळ के प्रतिकूळ परीषहो सहन करवा, प्रवचन मातानुं यथार्थ पालन करवुं. क्षमादिक दशविध यतिधर्मनुं सेवन करवुं. मैत्री, मुदितादिक भावना चतुष्टय अथवा अनित्यादिक प्रस्तुत भावनानुं विवेकथी परिशीलन करवुं, अने सामायकादिक चारित्र मार्गनुं निष्कपटपणे सेवन करवुं ए संवर सर्व सुखकारी छे, एम समजी यथाशक्ति तेमां उद्यम करवो, अथवा तेवा सन्मार्गनी वनती सहाय के अनुमोदना करवीज उचित छे. संवर योगे चिलातिपुत्र दृढप्रहारी अने कंडुराजा जेवा निर्दय जीवोनां पण कल्याण थयां छे. संवर विना कदापि आ दुःखमय संसारनो छेडो पामी शकाय नहिं.

९ निर्जरा—जेथी पूर्व संचित कर्मनो क्षय करी शकाय एटले के आत्माने कर्मथी जुदो पाडी मुक्त करी शकाय तेनुं नाम निर्जरा छे. तेवी निर्जरा समता युक्त तप करवाथी थाय छे. उक्त तपना छ बाह्य अने छ अभ्यंतर मळीने १२ बार भेद छे. विवेकथी करवामां आवतो बाह्य तप अभ्यंतर तपनी पुष्टि करी आत्माने अत्यंत निर्मळ करे छे. तेथी दरेक आत्मार्थी जनोए ते अवश्य आदरवा योग्य छे. अनशन—उपवासादि, ऊनोदरी—अल्प भोजन, वृत्ति संक्षेप—नियमित भोगोपभोग, रस त्याग—अमुक रसनी लोलुपतानो त्याग, कायक्लेश—केश लोच, आतापनादि, अने संलीनता—आसनजय प्रमुख ए बाह्य तपना ६ छ भेद छे. तेमज प्रायश्चित—पापनी आलोचना, विनय—गुणानुराग, वैयावृत्य—सेवा भक्ति, स्वाध्याय, ध्यान, अने काउसग्ग—देहादिक परथी मूर्छानो त्याग ए प्रमाणे अभ्यंतर तपना छ भेद मळी तपना बार भेद कह्या छे. जेम प्रबळ अग्निना तापथी सुवर्णनी शुद्धि थाय छे तेम पूर्वोक्त परम पुरुष प्रणीत तपना सम्यग् आराधनथी आत्मानी विशुद्धि थइ शके छे, एम समजीने उक्त तपनुं सेवन करवा सावधान रहेवुं.

१० लोक स्वभाव—ऊर्ध्व, अधो अने तीर्छा लोकनुं स्वरुप शास्त्रमां जेवुं कहुं छे तेवुं विचारवुं. प्होळा पग करीने अने केडे हाथ दइने ऊभेला पुरुषनी जेवी आकृति संपूर्ण लोकनी कहेली छे. ऊर्ध्व लोकमां चराचर ज्योतिष् चक्र, बार देवलोक, नव ग्रैवेयक,

पांच अनुत्तर विमान तथा सिद्धसीला रहेली छे. अधो लोकमां व्यं-
तर, वाणव्यंतर, १० भुवनपति, तेमज सात नर्क पृथ्वीओ रहेली
छे, अने तीच्छों लोकमां असंख्याता द्वीप तथा असंख्याता समुद्र
जंबुद्वीपनी फरतां वलयाकारे आवी रहेला छे. आ भावनाथी सम-
कितनी दृढता थाय छे.

११ बोधि दुर्लभ—इंद्र के चक्रवर्ती जेवी संपत्ति करतां पण जी-
वने आ संसार चक्रमां भमतां समकित रत्ननी प्राप्ति थवी परम
दुर्लभ छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्मनुं स्वरुप यथार्थ जाणवाथी अने
जाणीने तेने सम्यग् आदरवाथीज सम्यक्त्व गुणनी प्राप्ति थइ शके
छे, समकितवंतनीज सर्व करणी लेखे पडे छे—मोक्ष महाफळने आपे
छे, एम समजीने मोक्षार्थी सज्जनोए प्रथम समकितनीज भावना दृढ
करवानी जरूर छे. शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, अने आस्तिकता
ए पांच समकितनां श्रेष्ट लक्षण छे. समकितवंतनुं ज्ञान यथार्थ
होय छे. तेथी ते हिताहित, लाभालाभ, अने भक्ष्याभक्ष्यादिने यथार्थ
समजे छे.

१२ अरिहंत भाषित धर्म—राग, द्वेष अने मोहादिक सर्व
दोष रहित सर्वज्ञ प्रभुनी सातिशय वाणीथी अनेक जीवोना
हृदगत संशयोनो उच्छेद थइ जाय छे अने तेथी अनेक भव्यो
स्वपरहित साधवाने सन्मुख थाय छे. एकांत हितकारी प्र-

शुनी वाणी भव्य चकोरोने अमृतथी पण मीठी लागे छे तेथी तेनो कदापि अभावो थतोज नथी. पुष्करावर्त मेघनी जेवा प्रभुना हितोपदेशथी भव्य जीवो पोतानुं खरुं हित यथार्थ समजीने सेवी शके छे, अने तेथीज तेओ सर्व पाप क्रियानो अनुक्रमे परीहार करीने निष्पाप एवा मोक्ष मार्गनुं आराधन करवा उजमाळ थाय छे. विश्व जनोने पवित्र शासनना रागी करवानी अपूर्व भावनाथीज अरिहंतपणुं प्राप्त थइ शके छे, अने तेवुं परमपद प्राप्त करीने ते महानुभाव पूर्व भावनानुसारे त्रिभुवनवर्ती जनोने पवित्र हितोपदेश आपी तेमने साक्षात् शासनना रागी करे छे. तेथी सिद्ध थाय छे के पूर्वोक्त सद्भावना आपणी भविष्यनी उन्नतिनां अवंध्य बीजरुप छे. वर्तमान काळमां रसायन शास्त्रीओ पण अनुकूळ भूमिमां वाववा योग्य बीज—वस्तुओनी विविध भावना (संस्कार) दइने वावी ते वडे इच्छित फळने मेळवी शके छे तो सर्वज्ञ सर्वदर्शी—सर्वशक्ति संपन्न—पूर्णानंदी परमात्मा प्रणीत पवित्र भावना भावित जनो स्वपुरुषार्थ योगे केम अभीष्ट फळ मेळवी न शके ? अवश्य मेळवी शकेज. फक्त पूर्वोक्त भावना शुद्ध हृदयथीज भाववी जोइये अने एम थाय तोज ते शुद्ध भावनाना वळथी भव्य जीवो आ भयंकर भव दुःखनो सर्वथा अंत करीने अक्षय सुखने सुखे साधी शके.

४२ सारभूत एवा सद् विवेकनुंज सेवन कर.

'सदसद् विवेचनं विवेकः'

सत्यासत्यनो सम्यग् विचार पूर्वक निर्णय करवो के आतो तत्त्वभूतज छे अने आ अतत्त्वरुप छे. आतो संपूर्णज छे. अने आ अपूर्ण छे. आतो आदरवा योग्यज छे, अने आ तजवा योग्य छे. आतो हितकारीज छे, अने आ अहितकारी छे. आवुं कार्यज उचित छे, अने आवुं अनुचित छे. आमांज लाभ समायेलो छे, आमां नथीज अथवा गेरलाभ छे आतो गुणवानज छे अने आ नथी. अथवा दोषवान् छे, आवी वस्तुओज भक्ष्य छे अने आवी अभक्ष्य छे. आवी वस्तुओज पेय (पीवा योग्य) छे अने आवी अपेय छे. आवा लक्षणवाळा जीवज होय छे, अने आवां लक्षण विनाना अजीवज होय छे. आनुं नामज पुण्य, अने आनुं नाम ते पाप, आनुं नाम ते आश्रव अने आनुं नाम संवर, आवा परिणामथी कर्मनो बंध थाय छे, अने आवा परिणामथी निर्जरा अथवा कर्मक्षय मोक्ष थाय छे. आवी रीते आत्महित संबंधी कंइक बारीकताथी अवलोकन करतां विवेक दीपक प्रगटे छे. जे अनादि अज्ञान अंधकारनो नाश करी नांखे छे अने घटमां समाधिकारक ज्ञान प्रकाशने विस्तारे छे.

अंतर राग, द्वेष, अने मोहादिक महा विकारोने लक्षमां राखीने

जेम निर्विकारता प्राप्त थाय तेम मध्यस्थपणे विचार पूर्वक वर्तवाथी अने समताभावित सत् पुरुषोना सतत समागमथी अनादि अविवेकनो पण अंत आवे छे अने हिताहितनुं यथार्थ भान करावनार विवेकनो उदय थाय छे. जेने विवेकनी खेवना नथी तेने ते प्राप्त पण थतो नथी.

सद्विवेक जागवाथी जीवने सत्य वस्तुनुं यथार्थ भान थतां खोटी असत्य वस्तु उपरथी सहेजे अभाव–अरुचि पेदा थाय छे अने तेम थवाथी साची वस्तु उपर जोइए तेवीं रुचि, प्रीति अने श्रद्धा जागवाथी तेनो सचोट स्वीकार थइ शके छे. अभ्यास अभ्यासने वधारेज छे तेथी विवेकवंत आगळ उपर गुणमां सारो वधी शके छे. विवेक शून्यने एवो संभवज नथी. माटे प्रथम रागद्वेषादिक अंतर विकारोने हठावी मध्यस्थतादिक गुणनो अभ्यास करीने आत्मार्थीजनोए विवेक जगाववानी जरुर छे. श्रीमद् यशोविजयजी महाराजाए यथार्थ कह्युं छे के–रवि दूजो तीजो नयन, अंतर भाव प्रकाश । करो धन्ध सब परिहरी, एक विवेक अभ्यास ॥ अंतरमां प्रकाश करीने पोतानी गुण–संपत्तिने प्रगट बतावनार विवेक बीजो सूर्य अने त्रीजुं लोचन छे. एम समजीने शाणाजनोए ओर उपाधिने तजीने एक विवेकनोज अभ्यास करवो उचित छे. विवेकथी सर्व गुणनी सहजे प्राप्ति थशे, पण प्रथम अविवेकनां कारणो सदंतर दूर करवां जोइये.

४३ धर्मरुपी संबल बने तेटलुं साथे लइ ले.

जीवने भवांतर जतां कोइपण परमार्थथी सहायभूत होय तो ते केवळ धर्मज छे. अने तेथी दरेक कल्याण–अर्थीए ते अवश्य आराधवा योग्यज छे. उक्त धर्म साक्षात् करवाथी, कराववाथी के अनुमोदवाथी आराधी शकाय छे, परंतु शक्ति छतां तेनी उपेक्षा करवाथी अथवा गमे तेवां कल्पित कारणो वडे तेनी मर्यादा उल्लंघवाथी विराधना थाय छे.

जेम दूर गामांतर जतां देहना निर्वाह माटे प्रथमथीज भातानी सगवड करी राखवामां आवे छे तेम भवांतर जतां जीवे जरुर धर्म संबल प्रथमथीज तैयार करी राखवुं जोइये. धर्म संबल विना जीवने भवांतरमां भारे विपत्ति सहन करवी पडे छे. अने धर्म संबल वडे सुखे समाधिये सर्व संपत्ति साधी शकाय छे.

आ भयंकर भवाटवीमां शुद्धाशय युक्त करेलो धर्म एक उत्तमोत्तम भोमिया तरीके भारे उपयोगी थाय छे. यावत् ते क्षेमकुशळे मोक्ष नगरे प्होंचाडी दे छे.

अहिंसा (स्वच्छंदपणे कोइना प्राण नहिं लेवारुप दया), सत्य (हित मित अने प्रिय भाषण), अस्तेय (अनीतिथी कोइनुं कंइपण हरण नहिं करवा रुप प्रमाणिकता), ब्रह्मचर्य (विषय व्यावृत्तिरुप

सदाचार), अने असंगता मूर्च्छारहित पणुं, सहज संतोष, (निःस्पृहता) विगेरे सद्व्रतोनुं सारी रीते सेवन करवाथी सद्गतिनी अवश्य प्राप्ति थाय छे. एम सर्व शास्त्रकारो एके अवाजे कहे छे. आ शिवाय ' अहिंसा परमो धर्मः ' ए मुद्रालेख खास लक्षमां राखीने, मांस, मदिरा, मध, माखण, मूलक–मूळादिक भूमिकंद रिंगण विंगण आदिक कामोद्दीपक अने बहुवीज फळ तथा रात्रिभोजन विगेरे अनेक अभक्ष्य वस्तुओनुं पण शास्त्रकारोए वर्जन करवा भार दइने कह्युं छे. आ प्रमाणे अहिंसादिक महा व्रतोने पुष्टिकारी जे जे नियमावळी शास्त्रकारोए धर्मनी वृद्धि माटे बतावी छे. ते ते लक्षमां लइने दरेक धर्मावलंबी सज्जनोए तेनो यथाशक्ति अमल करवो खास अगत्यनो छे. केमके यथाशक्ति यतनीयं शुभे–स्वपर हितकारी शुभ कार्यमां छती शक्ति नहि गोपवतां यथाशक्ति यत्न करवो ए आपणी फरजज छे.

---

४४ मनुष्य भव फरी फरी मळवो मुश्केल छे, एम समजी शीघ्र स्वहित साधीले.

मनुष्य भवनी दुर्लभता एटला माटे स्वीकारवामां आवी छे के ते वीना कोई पण वीजी गतिमां सम्यग् ज्ञान–क्रियानुं अथवा सम्यग् दर्शन, ज्ञान अने चारित्र रुपी रत्नत्रयीनुं यथार्थ आराधन

करीने कोइ पण जीव कदापि पण ते ज भवमां सर्व घाति-अघाति कर्मनो सर्वथा अंत करीने अक्षय अविनाशी एवुं मोक्ष सुख साधवाने समर्थ थइ शके नहि अने तेथी ज आवो मनुष्य भव देवने पण दुर्लभ कह्यो छे. अर्थात् सम्यग् दृष्टि देवो पण मोक्ष गतिना द्वार रुप मनुष्य भवनी इच्छा करे छे अने तेवो मानव भव पामीने तेने सार्थक करवा समजमां आव्या बाद बनतो प्रयत्न पण करे छे.

तेवो मानव भव साक्षात् पामीने मोक्षार्थी जनोए मोक्ष साधनमां क्षण मात्र पण प्रमाद करवो योग्य नथी. प्रमादज प्राणीयोनो कट्टामां कट्टो दुश्मन छे, जेथी लोको प्राप्त सामग्रीने पण निष्फळ करी नांखे छे.

प्रमादने परवश पडी जे लोको मानवभवने निष्फळ करे छे तेमने आ संसार चक्रमां परिभ्रमण करतां ते पुनः प्राप्त थवो अति दुर्लभ छे.

आथीज उत्तराध्ययन सूत्रमां आ मानवभव दश दृष्टांते दुर्लभ कह्यो छे. एटलुंज नहि पण भगवान् श्री वीरप्रभुए पोताना मुख्य शिष्य श्री गौतम-गणधरने संबोधीने प्रगट रीत कह्युं छे के 'एक क्षणमात्र पण प्रमाद नहि करवो'—आ वाक्य केटलुं बधुं अर्थ सूचक छे? तेमांथी आपणने केटलो बधो बोध लेवानो छे? छतां जो आपणे सुखशील थइने प्रमादाचरण तजशुं नहिं तो छेवट आपणने केटलुं बधुं शोचवुं पडशे? तेनो ख्याल पण आववो अत्यारे मुश्केल छे.

ज्ञानी पुरुषो यथार्थ कहे छे के क्षणिक सुखने माटे लांबा काळनुं सुख खोइ देवुं जोइये नहिं. पण प्रमादने परवश पडेला प्राणीयो भूमज करे छे.

'क्षण लाखेणो जाय'—आ अमूल्य मानवभवनो वखत एळे गुमाववानो नथी. सारां सुकृतोवडे ते शीघ्र सफळ करी लेवानो छे.

धर्महीन मानवनो भव निष्फळ जाय छे अने धर्म युक्तनो ते सफळ थाय छे. धर्महीन माणसो भवान्तरमां भारे दुःखना भागी थाय छे, अने धर्मचूस्त माणसो अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके छे. 'देहे दुःखं महाफलं'—स्वाधीनपणे आत्म कल्याणने माटे देहनुं दमन करवुं बहु हितकारी छे, अन्यथा पराधीनपणे तो दमावुंज पडशे, अने एम करतां पण अभीष्ट सुखनी प्राप्ति थइ शकशे नहिं. स्वाधीनपणे तो देहने दमवाथी यथेष्ट सुख मळी शकशे. 'देहस्य सारं व्रत धारणं च'—यथाशक्ति सद्व्रत धारण करवांज आ मानवदेहनी सार्थकता शास्त्रकार स्वीकारे छे, ते विना तो 'अजागल स्तनस्येव, तस्य जन्म निरर्थकम्'—बकरीना गळामांना आंचळनी पेठे तेनो जन्म मात्र निरर्थकज छे. जेओ केवळ विषयकषायादि प्रमादने वश थइ पोतानो मानवभव व्यर्थ गुमावे छे, तेओ सोनाना थाळमां कस्तूरीने बदले धूळ भरे छे, अमृतनुं पान करवाने बदले तेना वडे पादशोच करे छे, श्रेष्ठ हाथीनी पासे लाकडां

न्हावे छे, अने चिन्तामणिरत्नने कागडाने उडाडवा माटे हाथमांथी फेंकी देछे.—आवी मूर्खाइ करे छे. वळी जे स्वच्छंद वर्तनथी क्षणिक सुखने माटे अमूल्य मानवभवने हारे छे ते मध्य दरियामां एक फलकने माटे तारक वहाणने भागी नांखे छे, एक खींटीने माटे आखा महेलने पाडी नाखे छे, अने एक दोराने माटे मोतीनाहारने तोडी नांखे छे. आम आप डहापण करीने अंते पश्चातापनाज भागी थाय छे. आवो पश्चाताप करवानो प्रसंग न आवे माटे स्वहित समज पूर्वक साधवाने सावधान थइ रहेवुं जोइये. शास्त्रकार योग्य फरमावे छे के ज्यां सुधीमां जरा आवी पीडे नहिं, विविध व्याधिओ वृद्धिगत थाय नहिं, अने इंद्रियोनुं वळ घटे नहिं त्यां सुधीमां वने तेटलुं धर्मसाधन करी लेवुं. पछी परवशपणे साधन करवुं भारे मुश्केल थइ पडशे.

---

४५ पुरुषार्थ वडेज सर्व कार्य सिद्ध थाय छे माटे पुरुषार्थनेज अंगीकार कर.

पुरुषार्थहीन एवा प्रमादी लोकोना मनना विचार मनमांज रही जाय छे. परंतु पुरुषार्थ युक्त प्रमाद रहित पुरुषोना सात्विक विचार जोइने तेनी भाग्यदेवी पण एवाज विचार करे छे, तेथी ते प्रायः सफलज थाय छे.

पुरुषार्थवंतने दुनियामां कंइपण असाध्य नथी.

पुरुषार्थवंतने मिथ्या आडंबर रचवानी जरुर नथी, तेमज तेने तेवो आडंबर प्रिय पण होतो नथी. तेओ करे छे घणुं अने बोले छे थोडुं. तेओ जे कंइ स्वपर हितकारी कार्य करे छे ते फक्त स्वकर्तव्य समजीनेज करे छे. तेथी तेमने स्वोत्कर्ष के परापकर्ष करवाना वक्र व्यवहारमां उतरवुं पडतुं नथी, अने सार पण एज छे.

पुरुषार्थवंतज सत्य धर्मनुं शोधन या दोहन करीने तेनुं यथार्थ सेवन करी शके छे. पुरुषार्थहीन लोको तो अंध श्रद्धाथी केवळ जूनी रुढीने अनुसरीनेज चालवावाळा होय छे, तेथी तेमां कंइ विशेष लाभ मेळवी शकता नथी. पुरुषार्थ विना कोइपण कार्य परिपूर्ण थइ शकतुं नथी. पूर्वोक्त पांचे प्रकारना प्रमादने तजीने सावधानपणे स्वपरहित साधनारज पुरुषार्थवंत कहेवाय छे. अने उक्त प्रमादने पराधीन थइ पडेला लोको पुरुषार्थहीन कहेवाय छे.

पुरुषार्थज माणसनुं खरुं जीवन छे, तेथी पुरुषार्थहीन माणस पशु समानज छे. पुरुषार्थहीन, मनुष्यभव पामीने उलटुं लेवानुं देवुं करे छे.

पुरुषार्थवंत्त पोताना पवित्र वर्तनथी आ भू लोकमां पण दैवी जीवन जीवीने अंते अक्षय सुखना अधिकारी थाय छे.

आपणे धारीये तो पूर्वोक्त प्रमादने तजी खरो पुरुषार्थ धारी आपणा प्रमादी बंधुओने पण पुरुषार्थवंत करी शकीये. पण ते स्व

दृष्टांतथीज साक्षात् रहेणीए रहेवाथीज; नहिं के केवळ लुखी कहेणी मात्रथी...

आपणे धारीये तो आपणे पोतेज सत्य पुरुषार्थथी अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय के साधुपदने साक्षात् पामी शकीये, तेमज तेवां पवित्र पदो पामीने अन्य अधिकारी जीवोने तेवाज करी शकीये. जे जे पूर्वोक्त पवित्र पदोने प्राप्त थया छे ते ते सर्व सत्य पुरुषार्थने साधीनेज; तो आपणे पण पुरुषार्थवडे तेवा केम थइ शकिये नहिं ? पुरुषार्थवडेज पूर्वे अनेक साधु, साध्वी, श्रावक, अने श्राविकाओ प्रसिद्धिमां आव्या छे. तेथी पुर्वोक्त प्रमाद रहित थइने स्व स्व कर्तव्य कर्म करवाने सावधान रहेवुं एज आत्म उन्नतिने माटे प्रथम आवश्यक छे. एज खरो धर्म छे. अने एज सत्य साधन छे.

एवा अप्रमत्त पुरुषार्थवंत पुरुषोज खरेखर स्वपरहित साधी शके छे, पण प्रमादशील एवा पुरुषार्थहीन जनो कंइ हित साधी शकता नथी.

पुरुषार्थवंत गृहस्थ पोतानुं गृहतंत्र, न्याय नीतिने अनुसरी प्रमाणिकपणेज चलावे छे त्यारे पुरुषार्थहीन तथा विरुद्धवर्ती अप्रमाणिकपणेज चलावे छे. पुरुषार्थवंत सुख दुःखमां समभावे रहे छे, त्यारे पुरुषार्थहीन हर्ष–विषाद धारे छे. पुरुषार्थवंत हिंमतथी अने श्रद्धाथी विपत्तिनी सामा थइ लगार पण स्वधर्म कर्तव्यथी चूकता नथी, पण

पुरुषार्थहीन तो तेवे वखते दीनता धारण करीने कर्तव्य भ्रष्टज थाय छे. पुरुषार्थहीन कर्तव्य कर्मनो अनादर करीने सुखशील थइ, अर्थ या कामनोज आदर करे छे, पुरुषार्थवंत तो गमे तेवा संयोगोमां प्रमाद रहित धर्मनेज प्रधान पद आपे छे.

पुरुषार्थवंत साधुज अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने असंगतादिक महाव्रतोने अखंड—अतिचार रहित पाळीने स्व चारित्रने उज्वळ करे छे त्यारे पुरुषार्थहीन साधु तेवां महाव्रत लइने स्वच्छंद वर्तनथी तेमने खंडी विराधी स्वचारित्रने कलंकित करी अंते अधोगतिनाज भागी थाय छे.

पुरुषार्थवंत साधुज विविध प्रकारना अभिग्रहने निःस्पृहताथी अखंड पाळी नाना प्रकारनी लब्धियोने पेदा करे छे, पण तेनो कदापि गेर उपयोग करता नथी. पुरुषार्थहीनमां तेथी विपरीतज जोवामां आवशे.

पुरुषार्थवंत साधुज सम्यग् ज्ञान अने सम्यक् क्रियाथी यथायोग्य सहायथी रत्नत्रयीनुं आराधन करीने अल्प काळमां अक्षय अविनाशी पदने पामे छे. अने पुरुषार्थहीन साधु तो मोक्षना साधन भूत ज्ञानक्रियामांना कोइनो इच्छानुसार उपेक्षा करी रत्नत्रयीने विराधी पूर्वोक्त प्रमादने परवश पडी दीर्घकाळ संसार परिभ्रमणज करे छे.

सत्य पुरुषार्थवंत साधुज छिद्र रहित प्रवहणनी पेरे आ संसार समुद्रने सुखे तरी जइ स्व परनो उद्धार करी शके छे. पुरुषार्थहीन तो पथ्थरनी पेरे स्वपरने डूबावेज छे.

कोइपण मोक्षार्थीए पूर्वोक्त पुरुषार्थवंत पुरुषोनोज आश्रय करवो योग्य छे. केमके तेथी एवो पुरुषार्थ पामवो सुलभ थइ पडेछे.

पुरुषार्थवंत पुरुषनी वृत्ति सिंहनी जेवी अने पुरुषार्थहीननी वृत्ति श्वाननी जेवीज होय छे. पहेलानी वृत्ति उंची अने बीजानी केवळ नीची होय छे.

पुरुषार्थवंत गमे तेवी विषम स्थितिमां पण सिंहनी जेम स्व इष्ट कार्य साधे छे पण पुरुषार्थहीन तेम कदापि करी शकतोज नथी. सिंहने कोइए बाण मार्युं होय तो ते तेनुं उत्पत्ति स्थान शोधीने तेनेज मारे छे. परंतु श्वान तो तेने मारवामां आवेला पाषाण विगेरेनेज काटवा (करडवा) जाय छे.

एवी रीते कंइपण दुःख उत्पन्न थतां पुरुषार्थवंत तेनुं खरुं कारण तपासीने ते कारणनेज दूर करे छे त्यारे पुरुषार्थहीन—कायर माणस तो तेनी कंइपण आगळ पाछळ तपास नहिं करतां ते दुःख उपरज रोष करे छे. अने एम करवाथी कंइ सुख तो मळतुं नथी पण उलटुं दुःखज वृद्धि पामे छे.

सर्वज्ञ-सर्वदर्शी भगवान् कहे छे के कोइ कोइनुं बगाडतुं के सुधारतुं नथी. बीजा तो केवळ निमित्त मात्रज छे. पोतेज करेलां कर्मानुसारे प्राणी दुःख सुखने पामे छे. तेमां अन्य उपर अज्ञानपणे आरोप मूकवो मिथ्या छे. एम समजीने खरा पुरुषार्थवंत पुरुषो प्राप्त दुःखना मूळ कारणभूत कर्मने लक्षमां राखीने तेनेज निर्मूळ करवा प्रयत्न करे छे, अने तेज युक्त छे, छतां कायर अज्ञानी माणसो तेम करी शकता नथी.

पुरुषार्थवंत स्त्री पुरुषज परमार्थभूत एवा मोक्ष मार्गने साधी शके छे अने धर्म एज खरो पुरुषार्थ छे. एम समजी मोक्षार्थी जनोए सर्वज्ञ भाषित धर्मनुं यथाशक्ति आराधन करवा अवश्य उजमाळ रहेवुं युक्त छे.

पूर्व पुन्ययोगे मनुष्य भवादिक शुभ सामग्रीने पामीने अने सद् गुर्वादिकनो विशिष्ट योग पामीने जे स्वहित साधी लेवानी उपेक्षा करे छे तेना पाछळथी केवा हाल थशे? ते संबंधी श्री धनेश्वरसुरी महाराज श्री शत्रुंजय महात्म्यमां आ प्रमाणे कहे छेः—

धर्मेणाधिगतैश्वर्यो, धर्म मेव निहन्ति यः ॥
कथं शुभायति र्भावी, स स्वामिद्रोहपातकी ॥ १ ॥

धर्मना प्रभावेज सर्व संपदाने पाम्या छतां जे नराधम धर्मनोज लोप करे छे ते स्वामीद्रोही पापी भविष्यमां केवी रीते सुखी थइ

शकशे ? आ भवमां पण अत्यंत हितकारी धर्मनी कृपाथीज सर्व सा-हेबी पामीने जो तेज परोपकारी धर्मनो ध्वंस करवामां आवशे तो स्वामीद्रोह करनार ते नीच पापीनुं कल्याण पछी शी रीते थइ शक-शे ? खरुं जोतां एवा पापी धर्म द्रोहीनुं भविष्य सुधरवुं खरेखर दुःशक्यज छे.

जे माणसने आवां हृदय वेधक शास्त्र वचनोथी पोतानां करेलां पापोनो पुरेपुरो पश्चात्ताप थाय छे अने फरी एवां पाप नहिं कर-वानी पवित्र बुद्धिथी सद्गुरु समीपे प्रायश्चित्त (करेलां पापोनी शुद्धि) करवा इच्छा थाय छे. एवा पण योग्य जीव उपर कृपालु धर्म महाराज जरुर कृपा कटाक्ष करे छे. एटले एवा जीवोनो पण उद्धार आवी रीते थइ शके छे.

परंतु पाप करीने खुशी थनारा, अथवा लोक रंजनने माटे फ-क्त मोढेथीज वळापो करनारा अथवा कपट रचनाथी स्वदोषने छुपा-वनारा एवा अयोग्य अने दंभीजनो उपर गुणज्ञ अने गुण पक्ष-पाती धर्म महाराजानी मेहेरबानी भविष्यकाळमां पण कदापि होइ शकेज नहिं.

एम समजी नीच, नादान, अने निर्लज्ज एवा ना लायकजनोनी संगति तथा तेमना अनर्थकारी आचार विचारने तजी दइने, उदार, दयाळु, अने लज्जाळु एवा सुपात्रनीज संगत अथवा तेमना हितकारी

आचार विचारने आदरी आपणे परम उपकारी धर्म महाराजनी कृपाथी प्राप्त करेल सर्व शुभ सामग्रीनी सफळता करी शकीये एवो सत् पुरुषार्थ सेववो एज आपणुं मुख्य कर्तव्य छे. सर्व प्रमाद रहित सत् पुरुषार्थ उपरज आपणी, आपणा साधर्मीओनी, तेमज समस्तजनोनी खरी उन्नतिनो आधार छे. ए वात खुब लक्षमां रा-खीनेज आपणुं व्यवहार तंत्र चलाववुं योग्य छे.

इत्यलम्.

सुमति अने चारित्रराजनो सुखदायक संवाद.

प्रेक्षक भाइयो अने व्हेनो ? आजे हुं तमने एक अतिबोधदायक संवाद संभळाववा इच्छुंछुं तेथी प्रथम तेमां खास उद्देश कराएलां पा-त्रोनी तमने कंइक विशेषे समज आपवी दुरस्त धारुं छुं. अने आशा राखुंछुं के ते सर्व वात तमे लक्षमां राखी तेमांथी एक उत्तम प्रका-रनो बोध ग्रहण करशो.

एकान्त हितबुद्धिथीज प्रेराइने तमने आ बोधदायक प्रबंध संभ-ळाववा मारी खास उत्कंठा थइ आवी छे ते कंइक तमारा भाग्य-नीज भली निशानी होय एम हुं मानुं छुं. हवे हुं मुद्दानी वात तमने जणावुं छुं. दरेक आत्माने पोताना सारा नरसा चरित्र (आचरण) ना प्रमाणमां मतिनुं तारतम्य होयज छे. छतां सामान्य रीते सारां

चरित्रवाळाने मुख्यताए सुमतिनो अने माठां आचरणवाळाने मुख्यताए कुमतिनोज संग होय एम मनाय छे तेथी तेमनो अरसपरस प्रसंगवशात् संवाद थयाज करे छे, तेनी जीज्ञासु भाइ व्हेनोने कंइक झांखी आपवानी बुद्धिथी स्व क्षयोपशमानुसारे आ उल्लेख घडयो छे. वीतराग प्रभुनां पवित्र वचनानुसारे विवेकयुक्त वर्तन करनार सत्चारित्रपात्र पुरुष जगत्मां एक महाराजाथी पण अधिक पूजाय-मनाय छे, तेथी तेवा चारित्रवंतने सत् (साचा) चारित्रराज कहेवामां कंइपण बाध आवतो नथी. पण जेओ वीतराग वचनथी विरुद्ध वर्तन चलावीने दंभ वृत्तिथी स्वदोष गोपववा माटे लोकमां पूजावा-मनावा माटे तथा स्वगौरव वधारवा माटे अहोनिश मथन करी जगत्मां चारित्रवंत कहेवडाववानो दावो राखे छे तेओ तो केवळ नाम-नाज महाराजा कहेवाय छे. एवा दंभी चारित्रराजने होळीना राजा इलोजीनीज उपमा घटी शके छे. आवी हलकी पायरीए पोतानी कुटिलताथी उतरवा करतां सरलताथी सत् चारित्रराजना सेवक थइ रहेवामांज खरी मजा छे. केमके 'सिद्धिः स्याद् रुजुभूतस्य' एवां आगम वचनथी सर्व दंभ रहित-रुजु-सरल पुरुषनीज सिद्धि थाय छे. आवी सिद्धांतनी वातने खास लक्षमां राखीने जगत् प्रसिद्ध स्व स्वामी चारित्रराजनी आगळ उपर विडंबना न थाय एवा पवित्र उद्देशथी सुमति, चारित्रराजने संबोधन करे छे.

सुमति—स्वामीनाथ! हुं आपने लज्जाथी कंइ हितकारी वात-

पण कही शकती नथी तोपण आजे नम्रपणे कंइक कहेवा धारुं छुं तेथी आप खोटुं नहि लगाडतां सार ग्रही मने उपकृत करशो, एवी मारा अंतरनी इच्छा पुर्वक करेली प्रार्थना स्वीकारी मने प्रसंगोपात बे बोल बोलवानी रजा आपशो?

चारित्रराज—अहो सुमति! माराथी आटलो अंतर राखवानुं कंइ कारण नथी, तारे कहेवुं होयतो सुखेथी कहे, साची अने हितकारी वात कहेतां कोनो दिवस फर्यो छे के उलटी रीस चढावशे?

सुमति—स्वामीनाथ! हवे मने कंइक हिम्मत आवी छे तेथी मारा मननी वात कहेवाने कंइक भाग्यशाळी थइ शकीश. नहितो—तो—

चारित्रराज—तुं आज सुधी कहेवानो केम विलंब करी रही हती?

सुमति—स्वामीजी! साचुं कहुं छुं के मारा अंतरमां जेवीने तेवी इच्छा छतां आपने एकान्ते कहेवानी मने जोइए तेवी तकज मळी शकी नथी?

चारित्र०—आज सुधी कहेवानी प्रबळ इच्छा छतां केम तक न मळी शकी? तेनुं कारण हवे संकोच राख्या विना कहे. हुं तारी उपर प्रसन्न छुं.

सुमति—आप मारा स्वामीनाथ मारी उपर सुप्रसन्न थया छो तेथी हुं मारुं अहोभाग्य मानुंछुं. आपनी तेवी प्रसन्नता सदा बनी रहे तेम खरा जीगरथी इच्छुं छुं, पण साचुं कारण कहेतां मन संकोचाय छे.

चारित्र०—सुंदरी ! जराए संकोच राख्या विना खरुं कारण होय ते कहीदे.

सुमति—आज सुधी आप लांबो वखत थयां मारी उपेक्षा करीने मारी सपत्नी (शोक्य) कुमतिनेज वश पड्या हता, ए वात शुं आप आटलामां विसरी गया के जेथी मारे मोढे तेनुं कारण कहेवडावो छो !

चारित्र०—सुमति ! तारा स्थायी समागम विना सर्व कोइ कुमतिने वश पडीने खुवार थाय छे ते तो तने सुविदितज छे.

सुमति—हा पण आपे तो चारित्र० नाम धारीने अने दुनियामां पण जवोने तेवो दमाम राखीने मारी विगोवणा करी तेनुं केम?

चारित्र०—सुंदरी ! तुं जे कहे छे ते सत्य छे, मारी दांभिक वृत्तिने संभारतांज हवे तो मने शरम आवे छे. पण जो तारो समागम थयो न होततो शुं जाणीये मारा शाए हाल थात, हवे पाछी तेवी भूल न थाय माटे अने तारो समागम स्थायी बन्यो रहेशे तो हुं मारुं अहो भाग्य मानीश. हवे तारे जे कांइ हितकारी वात कहे-

वी होय ते खुल्ले मनथी कहे. व्हाली! साची वात कहेतां कंइ पण संकोच राखीश नहि.

सुमति—आपनाथी आवे प्रसंगे अंतरो के संकोच राखवो तेने तो हवे हुं स्वामीद्रोह के आत्मद्रोहज लेखुंछुं. वधारे शुं कहुं?

चारित्र०—सुमति? थोडा वखतना परिचयथी पण मने तारा सरल स्वभावनी खात्री थयेली छे के तुं जे कंइ कहीश ते एकांत हितकारीज हशे तेनी सत्यताने माटे मने संदेह नथी, तेथी तारुं खरुं मंतव्य कहे.

सुमति—में आज सुधी आपनी खरी सेवा बजाववानो लाभ मेळव्योज नथी तेने माटे शोचुंछुं पण हवे खरी सेवा बजाववानी सोनेरी तक हाथ आवेली जाणी मनमां घणोज हर्ष थाय छे ते आपने प्रथम जणावुं छुं.

चारित्र०—मारीज कसूरथी कहोके उपेक्षाथीज तुं माराथी आज सुधी दूर रही अने तेथीज तुं मने सवळे रस्ते दोरवानी तक न साधी शकी तेमां तारो तो तल मात्र पण वांक नथी. वांक मात्र मारा नसीबनोज छे के जेथी हुं छती सामग्रीये तेनो लाभ लेवा अत्यार सुधी भाग्यशाळी थइ शक्यो नहि. ते वातनो विचार करतां बहुज शोच थाय छे पण तेवा शोच मात्रथी शुं सरे? हवे तो जाग्या त्यांथी सवार.

सुमति—आपनुं कल्याण थाओ! खुद आपनो वांक काढवा करतां मारे तो मारी सपत्नि—कुमतिनोज वांक काढवो व्याजबी छे. केमके जो आज सुधी तेणीये आपने भंभेर्या न होत अने माराथी विमुख कर्या न होत तो तो आपे क्यारनाए मारी सन्मुख जोइ मने आवकार आप्यो होत, पण मारी शोक्य स्वाधीनपणे एम थवा देज केम?

चारित्र०—सुमति? तुं तो तारी कुलीनताने उचितज कहे छे पण वांक मात्र मारोज छे. केमके मारुं मन जो मारे हाथ होय तो कुमति बापडी शुं करी शके? हुं पोतेज प्रमादशील होवाथी कुमतिने वश पडी रह्यो हतो.

सुमति—साहेब सहीसलामत रहो! हवे आपे आपनी गति जाणी छे तेथी फरी हुं इच्छुं छुं के आप कुमतिना फंदामां आवशो नहि.

चारित्र०—हवे तो में तेणीने देशवटो देवानोज निश्चय कर्यो छे.

सुमति—कुमतिनी गति एवी विचित्र छे के ते गमे त्यांथी गमे तेवी रीते अंतरमां पेशी जीवती डाकणनी जेम जीवनुं जोखम करे छे. मोटा योगी जनोने पण लाग जोइने छळे छे अने असंस्कारी आत्माने तो क्षणवारमां उथलावीने उंधो वाळे छे आवी तेनी कुटीलता जग जाहेर छे; माटे क्षणवार पण तेनो विश्वास करवो उचित नथीज.

९

चारित्र०—मारामां जेटली पात्रता हशे तेटला तो ते अवश्य फळदायी थशे साथे एवी पण खात्री छे के तारी सतत संगतिथी मारामां पात्रता पण वधती जशे, तथा पात्रताना प्रमाणमां फळनी अधिकता थतीज जाशे.

सुमति—हुं अंतःकरणथी इच्छुं छुं के आपने संपूर्ण पात्रता प्राप्त थाओ, अने आप संपूर्ण सुखमय परमपदना पूर्ण अधिकारी थाओ!

चारित्र०—तारा मुखमांज अमृत वसे छे. केमके तारी साथेना आ वार्ता विनोदमां मने एटलो तो स्वाद आवे छे के तेनी पासे स्वर्गनां सुख पण नहिं जेवां छे. जेने तारो संग थयो नथी तेनुं जीव्युं हुं धूळ जेवुं लेखुं छुं.

सुमति—म्हारी शोक्य-व्हेने जो आपने अनुभव सुखडी चखाडी नहोत तो आपने मारो स्थायी समागम करवानो विचारज क्यांथी थात? केम खरुंने? हुं धारुं छुं के आप तेना स्वभाविक गुणोने स्वप्नमां पण भूलशो नहिं. सारी वस्तुथी संपूर्ण कंटाळ्या विना अमुकमां पूर्ण प्रीति बंधाती नथी.

चारित्र०—कुमतिथी हुं खूब कंटाळ्यो छुं ए निर्विवाद छे, कुमतिना कुसंगवडेज हुं आवी अनुपम सुख-संगतिथी चूक्यो छुं तेथी ते वात हुं स्वप्नमां पण केम भूली शकुं! हशे हवे एक क्षण

पण मने तारो विछोह न पडो, एज मने इष्ट छे. एवी मारी अंतरनी इच्छा फळीभूत थाओ !

सुमति—स्वामीजी ! कुमतिना लांबा वखतना परिचयथी आपनी उपर जे जे विरुद्ध संस्कार वेसी गया होय ते ते सर्वे निर्मूळ थाय तेवो अनुकूळ प्रयत्न आपने प्रथमज सेववानी खास जरुर छे. कुमतिना कुसंगथी उद्भवेला माठा संस्कारोने निर्मूळ करवाना सतत प्रयत्नमां हुं पण सहायभूत थइश.

चारित्र०—केवा क्रमथी मारे उक्त संस्कारोने टाळवानो उपाय करवो जोइये ?

सुमति—वक्ष्यमाण (कहेवाता) क्रमथी तेमनु उन्मूलन करवा यत्न करवो जोइये.

१. क्षुद्रता-दोशदृष्टि तजीने अक्षुद्रता-उदार गुणदृष्टि आदरवी जोइये.

२. रसगृद्धता-विषयलंपटता तजीने हित (पथ्य) अने मित (अल्प) आहारथी शरीरने संतोषी आरोग्य अने शरीर सौष्ठव साचववुं जोइये.

३. क्रोधादिक कषायना त्यागथी अने क्षमादिकना सेवनथी सौम्यतावडे चंद्रनीपेरे शीतळ स्वभावी थावुं जोइये ?

चारित्र०—प्रिये ! तेणीने तिलांजलि देवानो मारो संपूर्ण विचार छे, पण ते पुनः मने छळी न शके एवा समर्थ उपाय तुं जाणती होय ते मने कहे के जेनो अभ्यास करीने हुं पुनः तेणीना पापी पाशमां आवी शकुं नहि, केमके जेम तुं कहे छे तेम प्रतीत छे के कुमतिनो स्वभाव कुटील छे.

सुमति—जे कहेवानी मारी इच्छाज हती तेज बाबतनी आपनी जिज्ञासा थयेली जोइने मारे तो दूधमां साकर भळ्या बराबर थयुं छे.

चारित्र०—खरेखर आवुं उत्तम नाम धरावीने अने दुनिया आगळ आवो खोटो दमाम राखीने खरा चारित्र संबंधी गुण विना केवळ दंभ—मायाथी जीववा करतां तो मरवुंज मने तो हवे बेहतर लागे छे.

सुमति—स्वामीजी ! आप चतुर छो. खरा चारित्रना अर्थी दरेक शख्सने एटली चानक चढ्या विना ते पतित अवस्थाने तजी शकेज नहि.

चारित्र०—पण प्रिये ! जे तुं मने हितकारी वचन कहेवा इच्छे छे ते हवे विलंब कर्या विना कहे, केमके कह्युं छे के 'श्रेय काममां बहु विघ्न आवे छे.'

सुमति—आपनुं कहेवुं यथार्थ छे अने तेथी आप साहेबनी आ-ज्ञाने अनुसरीने हुं मारुं कर्तव्य बजाववाने तत्पर थइछुं. जे जे आ-पने मारी फरज विचारीने कहीश तेनु आप कृपा करीने मनन करता रहेशो.

चारित्र०—प्रिये! तारां अमृत वचननुं हुं आदर पूर्वक पान करीश अने ते वडे मारा त्रिविध तप्त आत्माने शान्त करीश ए नि-श्चे समजजे.

सुमति—आपना आत्माने सर्वथा शान्ति–समाधि मळो! तेमज असमाधिनां खरां कारणोनो क्षय थाओ! अने समाधिनां खरां साधन प्राप्त थाओ।

चारित्र०—मने खात्री थइ छे के तारो स्थायी समागमज सर्व समाधिनु मूळ कारण छे. अने तेथी असमाधिना सकळ कारणोनो स्वतः क्षय थइ जशे.

सुमति—आटला अल्प काळमां पण आपना अप्रतिम प्रेमनी मने जे प्रतीति थइ छे ते मने आपना भविष्यना सुख–सुधारानी संपूर्ण आगाही आपे छे. हवे हुं आपने मारा सद्विचारो रोशन कर-वानी रजा लहुछुं. आशा छे के आपनी हृदयभूमिमां रोपायेला ए सद्विचारो अति अद्भूत फलदायक नीवडशे.

चारित्र०—मारामां जेटली पात्रता हशे तेटला तो ते अवश्य फळदायी थशे साथे एवी पण खात्री छे के तारी सतत संगतिथी मारामां पात्रता पण वधती जशे, तथा पात्रताना प्रमाणमां फळनी अधिकता थतीज जाशे.

सुमति—हुं अंतःकरणथी इच्छुं छुं के आपने संपूर्ण पात्रता प्राप्त थाओ, अने आप संपूर्ण सुखमय परमपदना पूर्ण अधिकारी थाओ!

चारित्र०—तारा मुखमांज अमृत वसे छे. केमके तारी साथेना आ वार्ता विनोदमां मने एटलो तो स्वाद आवे छे के तेनी पासे स्वर्गनां सुख पण नहिं जेवां छे. जेने तारो संग थयो नथी तेनुं जीव्युं हुं धूळ जेवुं लेखुं छुं.

सुमति—म्हारी शोक्य—व्हेने जो आपने अनुभव सुखडी चखाडी नहोत तो आपने मारो स्थायी समागम करवानो विचारज क्यांथी थात? केम खरुंने? हुं धारुं छुं के आप तेना स्वभाविक गुणोने स्वप्नमां पण भूलशो नहिं. सामी वस्तुथी संपूर्ण कंटाळ्या विना अनुकमां पूर्ण प्रीति बंधाती नथी.

चारित्र०—कुमतिथी हुं खूब कंटाळ्यो छुं ए निर्विवाद छे, कुमतिना कुसंगवडेज हुं आवी अनुपम गुरु—संगतिथी चूक्यो छुं तेथी ते वात हुं स्वप्नमां पण केम भूली शकुं! हशे हवे एक क्षण

पण मने तारो विछोह न पडो, एज मने इष्ट छे. एवी मारी अंतरनी इच्छा फळीभूत थाओ!

सुमति—स्वामीजी! कुमतिना लांबा वखतना परिचयथी आपनी उपर जे जे विरुद्ध संस्कार बेसी गया होय ते ते सर्वे निर्मूळ थाय तेवो अनुकूळ प्रयत्न आपने प्रथमज सेववानी खास जरुर छे. कुमतिना कुसंगथी उद्भवेला माठा संस्कारोने निर्मूळ करवाना सतत प्रयत्नमां हुं पण सहायभूत थइश.

चारित्र०—केवा क्रमथी मारे उक्त संस्कारोने टाळवानो उपाय करवो जोइये?

सुमति—वक्ष्यमाण (कहेवाता) क्रमथी तेमनु उन्मूलन करवा यत्न करवो जोइये.

१. क्षुद्रता–दोशदृष्टि तजीने अक्षुद्रता–उदार गुणदृष्टि आदरवी जोइये.

२. रसगृद्धता–विषयलंपटता तजीने हित (पथ्य) अने मित (अल्प) आहारथी शरीरने संतोषी आरोग्य अने शरीर सौष्ठव साचववुं जोइये.

३. क्रोधादिक कषायना त्यागथी अने क्षमादिकना सेवनथी सौम्यतावडे चंद्रनीपेरे शीतळ स्वभावी थावुं जोइये?

जेथी कोइने स्व संगतिथी अभावो थवानो कदापि प्रसंग आवे नहि.

४. सर्व लोक विरूद्ध तजीने स्व पर हितकारी कार्य करवा वडे लोकप्रिय थवुं जोइये.

५. मननी कठोरता तजी कोमळता आदरवी जोइये.

६. लोक अपवादथी तथा पापथी बीवुं जोइये. वडीलनुं मन पण न दुभाववुं जोइये.

७. सर्व दंभ-मायाने मूकीने निर्दंभी-निर्मायी-सरल स्वभावी थवुं जोइये.

८. आपणी इच्छा नहिं छतां वडीलनु मन प्रसन्न राखवाने दाक्षिणता करवी जोइये.

९. स्वच्छंदता तजीने लज्जा राखवी जोइये. निर्मर्यादपणुं तजीने लज्जा मर्यादा सेववी जोइये.

१०. निर्दयता तजीने दयाद्रता आदरवी जोइये. सर्व उपर अमीनी नजरथी जोवुं जोइये. द्वेष, मत्सर, इर्ष्यादिकने दूर करवा जोइये.

११. पक्षपात बुद्धिने तजीने निष्पक्षपातपणु आदरवुं जोइये.

१२. सद्गुणी मात्र उपर राग धरवो जोइये. सद्गुण रागी थइ रहेवुं जोइये.

१३. प्राणान्त कष्ट आव्ये छते पण असत् भाषण नज करवुं जोइये. सत्यनी खातर प्राण अर्पण करवा जोइये, एकांत सत्यप्रिय थवुं जोइये.

१४. स्वसंबंधी वर्ग पण धर्मनी तालीम लही सबळ थाय तेम करवुं जोइये. स्वपक्ष धर्मसाधन विमुख न रहे तेनी योग्य काळजी राखवी जोइये. अथवा आत्मसाधन सन्मुख थयेला स्वसंबंधी वर्गनीज योग्य सहाय लेवी जोइये.

१५. टुंकी दृष्टि तजीने करवामां आवता दरेक कार्यनुं केवुं परिणाम आवशे तेनो पुख्त विचार करी शकाय एवी दीर्घ दृष्टि राखवी जोइये. एकाएक वगर विचार्युं कंइ पण साहस खेडवुं नाहि जोइये.

१६. हुं कोण छुं ? मारी स्थिति केवी छे ? मारी फरज शी छे ? मारी कसूर केटली छे ? ते कसूर सुधारवानो उपाय कयो छे ? तेमज आसपासना संयोगो केवा अनुकूळ के प्रतिकूळ छे ? तेमांथी मारे शी रीते पसार थइ

जवुं जोइये? ए आदि संबंधी विशेष जाणपणुं मेळववुं जोइये.

१७. एवो अनुभव मेळववाने शिष्ट जनोनुं सेवन करवुं जोइये.

१८. गुण विशिष्ट एवा शिष्ट जनोनो यथायोग्य विनय करवो जोइये.

१९. उपकारीनो उपकार कदापि भूलवो नहि जोइये. लाग आवे तो तेनो योग्य बदलो वाळवा पण चूकवुं नहि जोइये. एवी कृतज्ञता आदरी परम उपकारी–निष्कारण बंधुभूत धर्मनो कदापि पण अनादर न ज करवो जोइये, किं तु धर्मनी खातर स्व प्राणार्पण करवुं जोइये.

२०. बनी शके तेटलुं परहित करवा तत्पर रहेवुं जोइये. परतु हित करतां आपणुंज हित थाय छे एवो दृढ निश्चय करी राखवो जोइये.

२१. सर्व उपयोगी बाबतमां कुशळता मेळववी जोइये, अने जरूर जणातां कोइ पण बाबत अभ्यासना बळथी अल्प प्रयासे साधी शकावी जोइये. एवी निपुणता कहो के कार्य–दक्षता प्राप्त थइ जवी जोइये. कुमतिना कुसंगथी पडेला माठा संस्कारोने हठाववा उक्त २१ उपायो पैकी

सघळां के बनी शके तेटला योजवाने हुं आपने नम्र-
पणे विनंति करुं छुं.

चारित्र०—अहो सुमति ! दुर्मतिने दूर करी दुष्ट संस्कारोने दळी नाखवा समर्थ सद्बोध धारा वर्षाववाथी तें तो तारुं सुमति नाम सार्थक कर्युं छे.

सुमति—स्व स्वामी सेवामां तन मन अने वचननो अनन्य भावे उपयोग करवो एज खरी पतिव्रताने उचित छे. तेवी पवित्र फरजो हुं जेटले अंशे अदा करी शकुं तेटले अंशे हुं पोताने कृतार्थ मानुं छुं. पण जे तेथी विरुद्धवर्ती स्वस्वामीने अवळो उपदेश दइने अवळे रस्तेज दोरी जाय छे, तेवी स्वामीने संतापनारी कुमति स्त्री-ने तो हुं स्वामीद्रोही के आत्मद्रोही मानुं छुं.

चारित्र०—खरेखर तारी जेवी सुशीळा अने कुमति जेवी कु-शीळा कोइकज नारी हशे ? अहो ! जेओ बापडा सदाय कुमतिनाज पासमां पडया छे तेमने तो स्वप्नमां पण आवो सदुपदेश सांभळवा-नो अवकाश क्यांथी मळे ? अरे ! एतो बापडा जीवता पण मुवा बराबरज तो !

सुमति—ज्यां सुधी कुमतिनो पल्लो पकडी राखे छे त्यां सुधी सर्व कोइ एवीज दुर्दशाने प्राप्त थाय छे. ज्यारे तेनो कुसंग तजे छे

त्यारेज ते कंइपण तत्त्वथी सुख पामे छे. त्यां सुधी तो ते मूर्छित-प्रायज रहे छे.

चारित्र०—तुं आवी शाणी अनें सोभागी छतां केवळ कुमतिनी कुटीलताथी कदर्थना पामता पामर प्राणीयोनो केम उद्धार करती नथी? अहो एकान्त दुःखमांज डुबकी मारी रहेला तेवा अनाथ जीवोनो उद्धार करतां तने केवो अपूर्व लाभ थाय?

सुमति—आपनी वात सत्य छे. पण अन्य तो निमित्त मात्र छे, पोतानो पुरुषार्थज खरो काम लागे छे. स्व पुरुषार्थज इष्ट सिद्धिमां प्रबळ कारणरुप छे. ते विना स्वेष्ट सिद्धि नथी. आवा सबबथीज लोकमां पण कहेवत प्रचलित छे के 'आप समान बळ नहिं अने मेघ समान जळ नहिं.' एम समजीने सर्व कोइये कुमतिनी कुटीलताथी थता अनेक गेरफायदाओनो विचार करीने तेनो कुसंग तजवा उद्यम करवो जोइये.

चारित्र०—ए कुमतिनो कुसंग तजवानो उद्यम करवा ते बापडाओने शी रीते अवकाश मळे? केमके तदनुकूळ उद्यम कर्या विना कदापि तेना कुसंगनो अंत आवी शकतो नथी. माटे केवो संयोग पामीने ते कुसंग टळे ए मने कहे.

सुमति—कुमतिना कुसंगथी विविध विडंबना युक्त जन्म मरण-जन्य अनंत दुःखने सही अकाम निर्जरावडे जीवने क्वचित् सत्समा-

गम योगे पूर्वे में आपने जेवो उपाय क्रम बताव्यो छे तेवोज क्रम प्राप्त थाय-समज पूर्वक तेनो स्वीकार थाय-त्यारेज जीव कुमतिनो संग तजवाने शक्तिवान् बने, ते विना कदापि ते तेनो संग तजी शके नहि.

चारित्र०—त्यारे उपर बतावेलो उपाय क्रम जाणवा मात्रथी कंइ वळे नहिं शुं? समज पूर्वक तेनो स्वीकार करवाथीज इष्ट कार्यनी सफळता थाय शुं?

सुमति—खरेखर उक्त क्रमनो सारी रीते आदर करवाथीज इष्ट कार्यनी सिद्धि थइ शके छे, पण तेना जाणवा मात्रथी कंइ इष्ट सिद्धि थइ शकती नथी.

चारित्र—शास्त्रमां ज्ञाननीज मुख्यता कही छे तेनुं केम?

सुमति—ते वात सत्य छे पण तेनो अंतर हेतु ए छे के स्व कर्तव्य कार्यने प्रथम सारी रीते जाणी-समजीने सेव्युं होय तो तेथी शीघ्र शुभ फळनी प्राप्ति थइ शके छे. बिलकुल समज्या विना करेली अंधकरणी तो उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे समजीने स्व कर्तव्य करवाथीज सिद्धि छे.

चारित्र०—अन्य धर्मावलंबी लोको तो ज्ञान मात्रथी पण सिद्धि माने छे?

सुमति—तेओनी तेवी मान्यता मिथ्या छे, तरतां आवडतुं होय

पण तरवानी अनुकूल क्रिया कर्या विना सामे तीरे जइ शकातुं नथी ज तथा भूख लाग्ये छते भक्षण क्रिया कर्या विना शान्ति थती नथी, तेम खरा चारित्रना अर्थीजनोने पण शुद्ध चारित्रनी अनुकूल क्रिया करवानी खास जरुर छे जेम बे चक्र विना गाडी चालती नथी तथा बे पांख विना पक्षी उडी शकतुं नथी तेम सम्यग् ज्ञान अने क्रिया विना कार्यसिद्धि थइ शकती नथी. आथी आपने समजायुं हशे के सम्यग् क्रिया (सद्वर्तन) विनानुं एकलुं ज्ञान लूलुं-पांगळुं छे. अने सम्यग् ज्ञान (विवेक) विनानी केवळ क्रिया पण आंधळी छे, माटे मोक्षार्थीजनोए ते बंनेनी साथेज सहाय लेवी जोइए.

चारित्र०—हवे मने समजायुं के केवळ लूखी कथनी मात्रथी कार्य सरवानुं नथी. ज्यारे कथनी प्रमाणे सरस करणी थशे त्यारेज कल्याण थवानुं छे.

सुमति—आपनी आवी सहेतुक श्रद्धाथी हुं बहु खुशी थाउंछुं, अने इच्छुं छुं के आपने बतावेलो उपायक्रम हवे सफळताने पामशे. परंतु कुमतिनो संग सर्वथा वारवानो अने अक्षय सुखना अवंध्य कारणभूत सत्य चारित्र धर्मनी योग्यता पामवानो जे उपाय क्रम में आपने वात्सल्य भावथी बताव्यो छे तेनो पूर्ण प्रीतिथी आदर करवामां आप लगार पण आळस करशो नहिं एवी मारी विनंति छे.

चारित्र०—माराज स्वार्थनी खातर केवळ परमार्थ दावे बतावेला सत्यमार्गथी हुं हवे चुकीश नहिं, तुं पण तेमां सहायभूत थया करशें तो ते मार्गनुं सेवन करवुं मने वहुं सुलटुं पडशे.

सुमति—आपने समयोचित सहाय करवी ए मारी पवित्र फरज छे, एम हुं अंतःकरणथी लेखुं छुं, तेथी हुं समयोचित सहाय करवी रहीश.

चारित्र—ज्यारे तुं मारे माटे आटली वधी लागणी धरावे छे त्यारे हुं हवेथी सन्मार्ग सेवनमां प्रमाद नाहि करुं, तारी समयोचित सहाय छतां सन्मार्ग सेवनमां उपेक्षा करे तेना पूरा कमनसीवज.

सुमति—आपने वतावेलो सन्मार्ग सेवननो क्रम जेओ वेदरकारीथी आदरताज नथी तेओ कदापि सत्य चारित्रना अधिकारी थइ शकताज नथी. परंतु तेनो योग्य आदर करनारा तो तेना अनुक्रमे अधिकारी थइ शके छेज. माटे कदापि तेमां बेदरकारी करवीज नहिं.

चारित्र०—उपरला सद् उपायने सेव्यावाद आत्माने शुं शुं करवुं अवशिष्ट (वाकी) रहे छे ? अने उक्त उपायथी आत्माने शो साक्षात् लाभ थाय छे ?

सुमति—उक्त उपायना यथार्थ सेवन कर्या बाद पण आत्माने करवानुं बहुज वाकी रहे छे. आथीतो हृदय—भूमिकानी शुद्धि थायछे.

हृदय चोख्खुं-स्वच्छ थया बाद तेमां चारित्र गुणना आधारभूत सद् विवेक प्रगटे छे. आ सद् विवेकनुं बीजुं नाम समकित या तत्त्व-श्रद्धा छे. हृदय-भूमि शुद्ध थया बादज तेमां चारित्र-महेलनो सद्विवेक या समकित रुपी पायो नंखाय छे. तेना विना चारित्र-महेल टकी शकतोज नथी.

चारित्र०—उक्त रीते हृदय शुद्धि कर्याबाद जे सद्विवेक या समकित पामवुं इष्ट छे तेनुं स्वरुप अने लक्षण जाणवानी मने अभिलाषा थइ छे, तेथी प्रथम संक्षेप मात्र तेनु स्वरुप अने लक्षण कथन करो.

सुमति—'सदसद्विवेचनंविवेकः' तत्त्वातत्त्वनी जेवडे यथार्थ समज पडे, गुण, दोष, हिताहित, कृत्याकृत्य, भक्ष्याभक्ष्य, अने पेयापेय विगेरेनी जेथी यथार्थ ओळखाण थाय, देव, गुरु अने धर्म संबंधी जेथी संपूर्ण निश्चय थाय, तेवो निर्णय-निर्धार कर्याबाद खोटी बाबतमां कदापि मुंझावाय नहि अने सत्य वस्तुनी खातर प्राण अर्पण करवा पण तैयार थवाय; आ उपरांत उपशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा अने आस्तिकता ए पांच, समकितनां खास लक्षण छे ए लक्षणथी समकितनी खात्री थइ शके छे. ज्यांसुधी उपशमादिक लक्षण अंतरमां प्रगट थयेलां देखाय नहिं त्यांसुधी सद् विवेक या समकित प्रगट थयानी खात्री थइ शकती नथी. तेथी पूर्वला क्रमथी हृदय शुद्धि कर्याबाद सद् विवेक या समकित रत्नना अर्थी जनोए

उक्त उपशमादि गुणनो अभ्यास करवानी आवश्यकता छे. केमके कारणथी कार्य सिद्धि थायज छे एवो अचळ सिद्धांत छे.

चारित्र०—संक्षेपथी नाम मात्र कहेलां उपशमादिक लक्षणोनुं कंइक स्वरुप समजवानी मारी इच्छा छे ते हुं धारुं छुं के तमे सफळ करशो.

चारित्रराजनो स्वहित प्रत्ये विशेष आदर थयेलो जाणी सुमति तेनुं समाधान करे छे.

सुमति—आपनी आवी अपूर्व जिज्ञासा थयेली जाणीने हुं विशेषे खुशी थइ छुं. अने उक्त पांचे लक्षणोनु अनुक्रमे स्वरुप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखवा कृपा करशो. केमके ए पांचे लक्षणथी लक्षित थयेलुं समकित रत्नज सकळ गुणोमां सारभूत एटले आधारभूत छे.

चारित्र०—हुं सावधानपणे समकितनां पांचे लक्षणनुं स्वरुप सांभळवाने सन्मुख थयेलो छुं. तेथी हवे तमे तेनुं निरुपण करो.

सुमति—उक्त पांचे लक्षणमां प्रधानभूत उपशमनु स्वरुप आ प्रमाणे छे. अपराधीनु पण अहित करवा मनथी पण प्रवृत्ति थाय नहि एवी रीते क्रोधादि कषायोने अटकावी दीधा होय; साध्य दृष्टिथी सामानु अंतरथी अहित नहिं करवानी बुद्धिथी तेने योग्य शिक्षा

पण कराय, किंतु क्लिष्ट भावथी तो मन, वचन के कायानी प्रवृत्ति तेनुं अहित करवा माटे थायज नहिं ते शम अथवा उपशम कहेवायछे.

यतः—अपराधीशुं पण नवी चित्त थकी, चिंतविये प्रतिकूल सुगुणनर.

चारित्र०—खरेखर उपशमनु आवुं अद्भूत स्वरुप मनन करवा जेवुंज छे. तेमां केवी अद्भूत क्षमा रहेली छे. हवे बीजा संवेगनु स्वरुप कहो.

सुमति—संसार संबंधी क्षणिक सुखने दुःख रुपज लेखाय अने तेवा कल्पित सुखमां मग्न नहि थातां केवळ मोक्ष सुखनीज चाहना बनी रहे. यथाशक्ति अनुकुळ साधनवडे स्वभाविक सुख प्राप्त करवा प्रयत्न कराय अने प्रतिकूळ कारणोथी डरतां रहेवाय तेनु नाम संवेग छे.

यतः—"सुरनर सुख ते दुःख करी लेखवे, वंछे शिवसुख एक चतुरनर."

चारित्र०—अहो संवेगनु स्वरुप पण अत्यंत हृदयहारक छे ते अक्षय सुखमां अथवा अक्षय सुखना साधनमां केवी रति करवा अने क्षणिक सुखमां के क्षणिक सुखनां साधनमां केवी उदासीनता करवा बोधे छे. अहो! सत्य मार्ग दर्शकनी बलिहारी छे! हवे त्रीजा निर्वेदनुं कंइक स्वरुप कहो?

सुमति—जेम कोइने केदमांथी क्यारे छूटुं अथवा नरक स्थानमांथी क्यारे नीसरुं एवी स्वभाविक इच्छा प्रवर्ते, तेम आ जन्म मरणनां प्रत्यक्ष दुःखथी कंटाळी तेथी सर्वथा मुक्त थवानी बुद्धिथी पवित्र धर्म-करणी करवा स्वभाविक रीते प्रेराय ते निर्वेद नामे त्रीजुं लक्षण छे.

"यतः—नारक चारक सम भव उभग्यो, तारक जाणीनें धर्म सुगुणनर;
चाहे नीकळवुं निर्वेदते, त्रीजुं लक्षण मर्म सुगुणनर."

चारित्र०—अहा! आ निर्वेदनुं लक्षण विषय लंपट अने कठोर मनवाळाने पण वैराग्य पेदा करवाने समर्थ छे. तेथी चिर परिचित एवा विषय भोग उपर तेनुं अंतर स्वरुप विचारतां स्वभाविक रीते तिरस्कार छुटे छे. परम उदासीन विना एवुं स्वरुप कोण प्रतिपादन करी शके वारु? हवे अनुकंपानुं कंइक स्वरुप बतावो.

सुमति—दुःखीनुं दुःख दीलमां धरीने तेनुं वारण करवा यथाशक्ति उद्यम करवो, धर्महीन या पतित जीवोने यथायोग्य सहाय आपीने धर्ममां जोडवा, तेमनी लगारे उपेक्षा नहि करतां जेम धर्मनी उन्नति थाय तेम स्व शक्ति अनुसारे प्रयत्न करवो, ते अनुकंपा कहेवाय छे. यतः—"द्रव्य थकी दुःखियानी जे दया, धर्महीणानीरे

भाव, सुगुण नर; चोथुं लक्षण अनुकंपा कही, निज शक्ते मन लाव सुगुण नर; श्रीजिन भाषित वचन विचारीये॥४॥

चारित्र०—अहो! आ लक्षणतो जगत् मात्रनो उद्धार करवा समर्थ छे. तेमां दर्शावेली दयालुता केवी उत्तम छे? एवी उत्तम अने निपुण दयाथीज जीवनुं कल्याण थइ शके छे. केवळ दया दया पोकारवाथी कदापि कंइ पण वळवानुं नथी. अहो आ दुनियामां धर्मनुं बानुं काढीने पोतानो तुच्छ स्वार्थ साधवाने सेंकडो जीवोनो जान लेवा वाळा केटला बधा दीसे छे. ते बधा हवे तो मने धर्म—ठगज मालम पडे छे. अहो दीन अनाथ एवा ते बापडाओना परलोकमां शा हाल थशे? उपरनुं अनुकंपानुं लक्षण तो मने अभिनव अमृत जेवुं, नवुं जीवन आपनारुं लागे छे. हवे अवशिष्ट रहेलुं आस्तिक्य केवा प्रकारनुं जोइये ते कंइक समजावो.

सुमति—राग, द्वेष, अने मोहादिक दोष समूहथी सर्वथा मुक्त अने अनंत शक्ति संपन्न सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्री जिनेश्वर प्रभु प्रणीत जीव अजीवादिक तत्त्वोनुं स्वरुप समजीने तेनुं यथार्थ श्रद्धान करवुं. गमे तेवी कु—युक्ति कोइ करे तो पण शुद्ध तत्त्व मार्गथी कदापि डगवुं नहिं. आवा तत्त्वाग्रह अथवा तत्त्व श्रद्धानथी कुमतिनो सर्वथा क्षय थइ जाय छे.

यतः—"जे जिन भाष्युं ते नहि अन्यथा, एवो जे दृढ रंग; सुगुणनर;

ते आस्तिकता लक्षण पांचमुं, करे कुमतिनो ए भंग
सुगुण० "

चारित्र०—अहा! प्राणप्रिये! सुमति! आ लक्षण तो आडो आंकज छे. आवा परमात्माना वचनमांज प्रतीति राखवी, ते विनाना कपोळ कल्पित वचनोनो विश्वास न ज करवो ए खरा परीक्षकनुं काम छे केम?

सुमति—मोटा मोटा गणाता पण अंध श्रद्धाळु खरी तत्त्व परीक्षामां पास थइ शकता नथी. तेमने मिथ्यात्वनुं मोटुं आवरण आडुं आवतुं होवुं जोइये, नहिं तो डाही डमरी वातो करी जगतने रंजन करनारा छतां तेओ शुद्ध तत्त्व परीक्षामां केम पसार न थइ शके? एज तेमनी अंध श्रद्धानी प्रबळ निशानी छे के साक्षात् साची वस्तु तजीने खोटीनेज झाले छे. शुद्ध देवगुरु अने धर्म संबंधी परिक्षामां पण अंध श्रद्धाळु मोटा भूलावामां पडे छे. तेथीज ते रागद्वेष अने मोहादि दोष युक्तने देव तरीके स्वीकारे छे. लोभी लालची अने असंबद्धभाषीने गुरु तरिके स्वीकारे छे. अने उक्त नायकोना कथेला मार्गने धर्म तरीके स्वीकारे छे. देवगुरु अने धर्म जेवा श्रेष्ट तत्त्वमां आवी गंभीर भूलने करनारा केवळ अंध-श्रद्धाळुज कहेवाय माटे तेमनुं खरुं स्वरूप जाणवुं जरुरनुं छे.

चारित्र०—तो मारा हितनी खातर शुद्ध देव गुरु अने धर्मनुं

कंइक स्वरुप समजावशो तो मने अने मारा जेवा बीजा जीज्ञासुने पण कंइक लाभ थाशे.

सुमति—प्रथम हुं शुद्ध देवनुं संक्षेपथी स्वरुप कहुं छुं ते आप लक्षमां राखशो. जेनां नेत्र युगळ शान्तरसमां निमग्न होय, वदन (मुखारवींद) सुप्रसन्न होय, उत्संग (खोळो) कामिनीना संगथी शून्य होय, तेमज हस्तयुगळ पण शस्त्रवर्जित होय तोज तेने तेवी प्रमाण–मुद्राथी देवाधिदेव मानी शकाय. तात्पर्यके जेनामां राग, द्वेष, अने मोह सर्वथा विलय पाम्या छे तेथी उक्त दोषोनी कंइपण निशानी देखाती नथी एवा आप्त–महापुरुषनेज देवाधिदेव तरीके मानी शकाय. आ शिवाय उक्त महादेवने ओळखवाना अनेक साधन शास्त्रमां कह्यां छे. विशेष रुचि जीवे ते सर्वनो त्यांथी निर्धार करी लेवो.

चारित्र०—अहो ! आवुं अद्भूत देवनुं स्वरुप कोइकज विरला जाणता हशे, अने कदाच कोइ जाणता हशे तोपण कुळाचार कहो के कदाग्रहने तजीने कोइकज तेनो यथार्थ आदर करता हशे. वहोळो भाग तो गतानुगतिक होवाथी स्व कुलाचारनेज वळगी रहेवामां सार माने छे. एवा बापडा अज्ञान लोको शुद्ध देवने क्यारे ओळखी शकशे ? तेमने ते ओळखावे पण कोण ? खरेखर ते बापडा हतभाग्य छे तेथीज तेओ एवी करुणाजनक स्थितिमां पड्या रहे छे. हवे शुद्ध गुरुनुं स्वरुप कहो.

सुमति—जे अहिंसादिक पांच महाव्रतोने धारण करे छे, रात्री

भोजन सर्वथा तजे छे, निःस्पृहपणे अन्य योग्य अधिकारी जनोने धर्मो-पदेश दे छे, रायने अने रंकने समान लेखे छे, नारीने नागणी तुल्य लेखी दूर तजे छे, सुवर्ण अने पथ्थरने समान लेखे छे, निंदा–स्तुति सांभळीने मनमां हर्ष–शोक लावता नथी, चंद्रनी जेवा शीतळ स्वभावी छे, सायरनी जेवा गंभीर छे, मेरुनी जेवा निश्चळ छे, भारंडनी जेवा प्रमाद रहित छे, अने कमळनी जेवा निर्लेप छे; जेथी राग द्वेष अने मोहादिक अंतरंग शत्रुओने जीतवाने पूर्वोक्त महादेवना वचनानुसारे पुरुषार्थ फोरव्या करे छे. एवा प्रवहणनी जेम स्व परने तारवा समर्थ सद्गुरु होय छे, एवा शुद्ध गुरुमहाराजनुं मोक्षार्थी जनोए अवश्य शरण लेवुं योग्य छे.

चारित्र०—अहो प्राणवल्लभा ! सुमति ! सद्गुरुनु आवुं यथार्थ स्वरुप सांभळीने लांवा वखतनो लागु पडेलो मारो मद–ज्वर शान्त थइ गयो छे. हवे मारां पडळ खूल्यां. शुद्ध चारित्र पात्र सद्गुरु आवाज होय ते यथार्थ जाणवाथी मारो आगलो भ्रम भागी गयो छे, अने हुं हवे खुल्लेखुल्लुं कही देउं छुं के हुं तो मात्र नामनोज चारित्रराज छुं. अहो सुमति ! जो मने तारो समागम थयो न होत तो आ अनादि मायानो पडदो शी रीते दूर थइ शकत अने ते पडदो दूर थया विना मारा शा हाल थात ? हुं दंभवृत्तिथी मुग्ध जनोने ठगीने केवो दुःखी थात ? अरे मायावी एवा मारा मिथ्यालंबनथी केटलो बधो अनर्थ थात ? हुं कहुं छुं के तारुं कल्याण थजो !

तुं कल्प कोटी काळ सुधी जीवती रहेजो! अने तारा सत्समागमथी क्रोडो जीवोनुं कल्याण थाजो! हवे अनुकूळताए मने शुद्ध धर्मनु स्वरुप समजाववा श्रम लेजो.

सुमति—तमारी प्रबळ तत्त्व-जिज्ञासाथी हुं अत्यंत खुशी थइ छुं. अने आपनी इच्छा अनुसारे शुद्ध धर्म तत्त्वनु स्वरुप समजाववाने यथामति उद्यम करीश. मने आशा छे के ते सर्व सावधानपणे सांभळी तेमांथी सार खेंची, तेनो यथाशक्ति आदर करीने आप मारो श्रम सफळ करशो.

चारित्र०—हुं ते सर्व सावधानताथी सांभळी तेनो सार लइ यथाशक्ति आदर करवा चूकीश नहिं. तेथी हवे निःसंशयपणे धर्म तत्त्वनुं स्वरुप समजाववाने सन्मुख थाओ!

सुमति—"अहिंसा परमो धर्मः" ए सर्व सामान्य वचन छे. ए वचन जेटलुं व्यापक छे. तेटलुंज गंभीर छे. सर्व सामान्य लोको तेनुं यथार्थ स्वरुप समजी शकता नथी. तेथीज तेओ तेमां क्वचित् भारे स्खलना पामे छे. अथवा तेनो यथार्थ लाभ लही शकता नथी. 'नहिंसा—अहिंसा.' अर्थात् दया एटले कोइने दुःख नहिं देवुं एटलोज तेनो सामान्य अर्थ केटलाक करे छे. परंतु ते करतां घणीज वधारे अर्थ-गंभीरता तेमां रहेली छे ते नीचेनी वातथी आपने रोशन थशे—"प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा."

अर्थात् कोइ पण प्रकारना प्रमादवाळा मन, वचन, के कायाना व्यापारथी कोइ पण वखते कोइ पण संयोगमां आपणा के पारका कोइना प्राणनो नाश करवो ते हिंसानो अर्थ छे. तेवी हिंसाथी दूर रहेवुं-दूर रहेवा अनुकूळ प्रयत्न सेववो तेनु नाम अहिंसा छे. एवी निपुण अहिंसा, 'संयम' वडे साधी शकाय छे. अने एवो संयम, सर्वज्ञदर्शित इच्छा निरोधरुपी तपथीज साध्य थाय छे, माटेज सिद्धान्तकारे सूत्रमां धर्मनुं आवुं स्वरुप बताव्युं छे के

धम्मो मंगल मुक्किठं, अहिंसा संजमो तवो;
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो.

(दशवैकालिक)

तेनो परमार्थ एवो छे के-अहिंसा संजम अने तप छे लक्षण जेनुं एवो धर्म उत्कृष्ट मंगलरुप छे. जेनुं मन महा मंगलमय धर्ममां सदा वर्त्या करे छे. तेने देव दानवो पण नमस्कार करे छे. "दुर्गतिमां पडतां प्राणीने झीली लइने सद्गतिमां स्थापन करे तेज खरो धर्म छे." अहिंसा, संजम अने तप, ए तेनुं असाधारण लक्षण छे. तेथीज अहिंसादिकनुं सविशेष स्वरुप समजवानी खास जरुर छे.

चारित्र०—परम पवित्र धर्मना अंगभूत उक्त अहिंसादिकनुं सहज विशेष स्वरुप जाणवानी मने पण अभिलाषा थइ छे, तेथी हवे ते समजावो.

सुमति—प्रथम हुं आपने 'अहिंसा' नुं कंइक सविशेष स्वरूप समजावुं छुं. में आपने पहेलां पण जणाव्युं छे के 'प्रमत्त योगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा' तेथी तेमां कहेला प्रमत्तयोग शी रीते थाय ते पण जाणवुं जोइये. 'मद्य' (Intoxication) विषय (sensual desires) कषाय (Wrath arrogance etc) निद्रा (Idleness) अने विकथा (false gossips) वडे 'राग द्वेष युक्त कलुषित मन वचन अने कायानुं प्रवर्तन थाय ते प्रमत्त योग कहेवाय. एवा प्रमत्तयोगथी आत्मा पोताना कर्तव्यथी भ्रष्ट थाय छे. तेथी ते शास्त्र संबंधी विहित मार्गनो लोप करे छे. शास्त्रनो विहित मार्ग मूळ रुपमां आवो छे के—

मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्टवत्;
आत्मवत् सर्व भूतेषु, यः पश्यति स पश्यति.

परस्त्रीने पोतानी माता तुल्य लेखवे, परद्रव्यने धुळना ढेफां जेवुं लेखवे अने सर्व प्राणी वर्गने आत्म समान लेखवे तेज खरो ज्ञानी—विवेकी के शास्त्र श्रद्धालु छे, प्रमत्तयोगथी कोइ पण प्राणी आवा पवित्र मार्गथी पतित थाय छे, अने स्वपरने भारे नुकसान करे छे, तेनुं खरुं नाम हिंसा छे. एवी हिंसाथी पापनी परंपरा वधती जाय छे अने तेथी संसार—संतति वधे छे. आथी पोताने तथा परने अधोगतिनुं वारंवार कारण बने छे. एवी दुःखदायक हिंसाथी दूर

रहेवुं अने पूर्वोक्त प्रमत्त योगने तजीने अप्रमत्तपणे शास्त्रविहित मार्गेज चालीने स्वपरनुं एकांत हित थाय एवी अनुकूल प्रवृत्तिज सेववी ते अहिंसा कहेवाय छे. आवी साची अहिंसाज सर्व भयहरी अभयकरी अने कल्याणकारी कही शकाय.

चारित्र०—खरेखर उक्त स्वरुपवाळी अहिंसाज सर्व दुःख हरनारी होवाथी परम सुखदायी अने सर्व कल्याणने करनारी होवाथी उत्कृष्ट मंगळरुप छे. आवी अघहर अहिंसाज जगत मात्रने सेवन करवा योग्य छे. हवे उक्त अहिंसाने उपष्टंभकारी संयमनुं कंइक स्वरूप समजावशो.

सुमति—"संयमनं संयमः" स्वच्छंदपणे चालता आत्मानो निग्रह करवो, तेने खोटा मार्गथी निवर्तावी साचा मार्गमां जोडवो ते संयम कहेवाय छे. हिंसा, असत्य, अदत्त, अब्रह्म तथा मूर्छा (परिग्रह) नो सर्वथा के देशथी (जेटले अंशे बने तेटले अंशे) त्याग करी अहिंसादि ५ महाव्रतोनो अने तथाप्रकारनी शक्ति न होय तो ५ अणुव्रतोनो स्वीकार करी तेमनो यथार्थ आदर–निर्वाह करवो, स्वेच्छा मुजब वर्तती स्पर्शनेंद्रिय विगेरे पांचे इंद्रियोनो निग्रह करवो, क्रोधादिक कषाय चतुष्कनो जय करवो अने मन, वचन, कायारूप योगत्रयनी पाप प्रवृत्तिनो त्याग करीने तेमनी गोपना–गुप्ति करवी. ए प्रमाणे संयमनां १७ भेद कह्या छे.

ए सर्वनो अंतर आशय अहिंसानी पुष्टि करवानो होय छे तेथी सत्यादिक सर्वे महाव्रतो, इंद्रिय निग्रह, कषाय जय, विगेरे ते अहिंसानाज सहायक या उपसहायक कहेवा योग्य छे.

चारित्र०—उक्त संयमना अधिकारी कोण कोण छे? ते कंइक समजावो.

सुमति—हिंसादिक अव्रतोनो सर्वथा त्याग करीने अहिंसादिक महाव्रतोनो सर्वथा स्वीकार करवारुप सर्व संयमना अधिकारी साधु मुनिराज छे. अने अंशमात्र उक्त व्रतोनुं सेवन करवाथी देश संयमना अधिकारी तो श्रमणोपासक-श्रावक होयछे.

चारित्र०—सर्व (सर्वांशें) संयम लेवानो शो क्रम छे? सर्व संयम ग्रहण कर्या बाद कदाच कर्मवशात् ते बराबर पळी न शके तो तेनो शो उपाय छे ते बतावो!

सुमति—पूर्वे बतावेला अक्षुद्रतादिक गुणना अभ्यासवडे हृदयनी शुद्धि करी, सद्गुरु योगे सद्विवेक या समकित पामवाथी चतुर्थ गुण स्थानक प्राप्त थाय छे. त्यारबाद शंका कंखादिक दूषण टाळीने, शुद्ध देव गुरु संघ साधर्मी विगेरे पूज्य वर्गनी यथोचित भक्तिरुप भूषण धारीने, पूर्वोक्त शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, अने आस्तिक्य रुप लक्षण लक्षित समकित-रत्नने मन, वचन, तथा कायानी शुद्धिथी अजवाळी-शुद्ध करीने सद् अभ्यासना बळथी

देश-संयमी श्रावकनी सीमाये (हदे) पहोंची शकाय छे. ते देश--विरति गुण स्थानक पांचमुं गणाय छे. तेमां पांच अणुव्रत ३ गुण व्रत अने ४ शिक्षाव्रतनो समावेश थइ जाय छे. दृढ वैरागी श्रावक सद्‌गुरु योगे श्रावकनी ११ पडिमा (प्रतिमा) वहेछे. परंतु पूर्वोक्त व्रतने धारण कर्या पहेलां तेमांना दरेकनो अभ्यास करी जोवे छे, जेथी तेनुं पालन करवुं कंइक वधारे सुतर पडे छे. श्रावक योग्य व्रत अने पडिमाना शुभ अभ्यासथी अनुक्रमे 'सर्व संयमनो' अधिकार प्राप्त थाय छे. पांच महाव्रतादिकनो एमां समावेश थाय छे. ए गुण स्थानक छठुं 'प्रमत्त' नामे ओळखाय छे. लीधेलां महाव्रत विगेरे जो सावधानपणे साचवी तेमनी शुद्धि अने पुष्टि करवामां आवे छे तो परिणामनी विशुद्धिथी अप्रमत्त नामे सातमुं गुण स्थानक प्राप्त थइ शके छे पण जो उक्त महाव्रतादिकनी उपेक्षा करी स्वच्छंद वर्तन करवामां आवे छे तो परिणामनी मलीनताथी पतित अवस्थाने पामी छेवट मिथ्यात्व नामना प्रथम गुण स्थानके जवुं पडे छे, तेथीज दीर्घदृष्टि थइने जेनो सुखेथी निर्वाह थाय तेवां व्रत ग्रहण करवामां आवे तो तेथी पतित थवानो प्रायः प्रसंग आवे नहि. "स्व स्व शक्ति मुजब बनी शके तेटली धर्म करणी कपट रहितज करवानी जिनेश्वर भगवाननी आज्ञा छे." एवी अखंड आज्ञानुं उल्लंघन करवाथी हानीज थाय छे. तेथी उक्त आज्ञानुं आराधन करवामांज सर्व हित समायेलुं छे. कदाचित् सरल भावथी सर्व संयम आदर्या बाद

तेनो यथायोग्य निर्वाह करवानी ताकात जणाय नहि तो शुद्ध बुद्धि थी सद्‌गुरु समीपें खरी हकीकत जाहेर करीने गुरु महाराज परमार्थ दृष्टिथी जे हितकारी मार्ग बतावे तेनुं निर्दंभपणे सेवन करवामांज खरुं हित रहेलुं छे. दंभ युक्त सर्व संयम करतां दंभ रहित देश-संयम (अणुव्रतादिक) नुं पालन करवुं वधारे हितकारी छे. तेथी गुरु महाराज तेम करवा के बीजी उचित नीति आदरवा कहे ते आत्मार्थी जनने अवश्य अंगीकार करवा योग्य छे. केमके सद्‌गुरु महाराज आपणुं एकांत हित इच्छनाराज होय छे.

चारित्र०—उक्त संयमनुं स्वरुप अने तत्संबंधी करेलो खुलासो मने तो अत्यंत हितकारी थवा संभव रहे छे. अहो आवा सम्यग् ज्ञान विनानुं तो केवळ अंधारुंज छे. अहो प्राणप्रिये! तारी निःस्वार्थ वात्सल्यतानां शां वखाण करुं? अहो तारी अनहद करुणा? तेनो बदलो हुं शी रीते वाळी शकीश?

सुमति—आपना प्रतिनी मारी पवित्र फरज अदा करतां हुं कंइ अधिक करती नथी. गुण ग्राहक बुद्धिथीज आपने एम भासतुं हशे. गमे तेम होय पण आ सर्व श्रेयः सूचकज छे.

चारित्र०—प्राण प्रिये! खरुं कहुं छुं के अंतरमां तत्त्व प्रकाश थवाथी अने अंध श्रद्धा नष्ट थवाथी जाणे हुं कंइक अपूर्व जीवनज पाम्यो होउं एम मने तो जणाय छे. हवे मने शुद्ध संयम सेवन कर-

वानी पूर्ण अभिलाषा वर्ते छे. एवी मारी उच्च अभिलाषा सफळ थाय माटे सर्वज्ञ प्रभुनी कृपा साथे तारी सतत सहाय मागुं छुं.

सुमति—माराथी बनी शके ते सर्व सहाय समर्पवा हुं सेवामां सदा तत्पर छुं अने खरा जीगरथी इच्छुं छुं के आपनी आवी उच्च अभिलाषा शीघ्र फलीभूत थाओ !

चारित्र०—प्रिये ! तारी सत्संगतिथी हुं दिनप्रतिदिन अपूर्व आनंद अनुभवतो जाउं छुं तेथी मने खात्री थाय छे के मारी उच्च अभिलाषा एक दिवसे सफळ थाशेज ! हाल तो मने धर्मना पवित्र अंगभूत अवशिष्ट रहेला तपनु स्वरुप जाणवानी प्रबळ इच्छा वर्ते छे. तेथी तेनु कंइक विशेष स्वरुप समजावीने समाधान करवुं घटेछे.

सुमति—जेथी पूर्व संचित कर्ममळ दग्ध थइने क्षय पामे तेनु नाम तप छे. अनादि अज्ञानना योगथी विविध विषयमां भटकता मननो अने इंद्रियोनो निरोध करी सहज स्वभावमां स्थित थावुं तेज खरो तप छे. ते तपना ६ बाह्य अने ६ अभ्यंतर मळीने १२ भेद छे, जे खास लक्षमां राखवा जेवा छे. आत्म विशुद्धि करवाना कामी जनोने ते सर्वे अत्यंत हितकारी छे. तेमांथी प्रथम ६ बाह्यभेदनु किंचित् स्वरुप कहुं छुं.

१. अनशन—सर्व प्रकारना अन्न पाणी विगेरे भोज्य पदार्थोनो अमुक वखत सुधी अथवा कायमना माटे त्याग करीने सहज संतोष राखवो ते.

२. ऊणोदरी (औनोदर्य) भोजननो अमुक भाग जाणी जोइने ओछो खावो. निद्रा-तंद्रादिकना जय माटे जाणी जोइने ऊणुं रहेवुं अथवा संतोष सुखनी अभिवृद्धि माटे जरूर जेटला आहारमां पण कमी करता जवुं. पोंणा, अर्धा अने छेवट पा भागना भोजनथी निर्वाह करी लेवो ते.

३. वृत्तिसंक्षेप-भोजन करती वखते वापरवानी वस्तुओनुं प्रमाण करवुं, अमुक चीजोथीज चलावी लेवुं, तेमज एक के बे वखत नियमसर वावरवुं.

४. रसत्याग-षट्रस भोजनमांथी जेटला रसनो त्याग थइ शके तेटलानो करवो. खाटो, खारो, तीखो, मीठो, कडवो, अने कषायलो, एवा षट् रस छे. तेमज दूध, दहीं, घी, तेल, गोळ, अने तळेलु पकवान्न ए षट् विकृति-विगइयो छे. तेमांथी जेटली तजाय तेटली तजीने बाकीथी संतोष राखवो.

५. कायक्लेश-ठंडी रुतुमां टाढ सहन करवी, ग्रीष्म रुतुमां ताप सहन करवो, अने वर्षारुतुमां स्थिर आसनथी रही ज्ञान ध्यान तपजपमां मशगूळ रहेवुं. केशनो लोच करवो तथा भूमी शय्यादिक कष्ट स्वाधीनपणे खुशीथी सहन

करवुं एवुं विचारीने के 'देहे दुखं महा फलम्' देहने दमवामां बहु फळ छे. समजीने सहनशीळता राखवामां आवशे तो आगळ उपर ते बहु लाभकारी थाशे. स्वेच्छाए सुखलंपट थवाथी पोताना बंने भव बगडे छे.

६. संलीनता—आसननो जय करवा अंगोपांग संकोचीने स्थिर आसने वेसवुं. आ प्रमाणे समजीने पूर्वोक्त बाह्य तपनुं सेवन करनार अभ्यंतर तपनी पुष्टि करे छे.

चारित्र०—ए बाह्य तप शरीरनी आरोग्यता माटे पण बहु उपयोगी लागे छे. उक्त तप विविध व्याधिओनो संहार करवाने काळ जेवो लागे छे. ए उपरांत तेनुं विधिवत् सेवन करवाथी जे अभ्यंतर तपनी वृद्धि थाय छे तेनुं कंइक स्वरुप मने समजावो.

सुमति—प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, (वेयावच्च) स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग (काउस्सग्ग) एवा अभ्यंतर तपना ६ भेद छे. अंतर आत्माने अत्यंत उपकारी होवाथी ते अभ्यंतर तपना नामथी ओळखाय छे. तेमनुं कंइक स्वरुप आपनी तेवी जिज्ञासाथी कहुं छुं ते आप खास ध्यानमां राखी लेशो.

१. जाणतां के अजाणतां जे अपराध थयो होय ते गुरुमहाराजने निवेदी निःशल्य थया बाद गुरु महाराज तेनुं

निवारण करवा जे शिक्षा आपे ते बराबर पाळवी तेनुं नाम प्रायश्चित समजवुं. थयेला अपराध संबंधी पोताना मनमां पण पूर्ण पश्चाताप करी, फरी तेवो अपराध बीजी वार थइ न जाय तेवी पुरती संभाळ राखवी जोइए.

२. सद्गुणी अथवा अधिक गुणीजनो साथे भक्ति, बहुमानादि उचित आचरण करवुं ते विनय कहेवाय छे. गुण स्तुति, अवगुणनी उपेक्षा, अने आशातनानो त्याग करवो ए सर्व विनयनाज अंगभूत छे. विनय, अनेक दुर्धर शत्रुओने पण नमावे छे. वळी जिन, अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, साधर्मीभाइ, अने चैत्य (जिनमुद्रा या जिनमंदिर) विगेरे पुज्य वर्ग उपर पूर्ण प्रेम राखवो ए विनयनुं प्रबळ अंग छे.

३. बाळ, ग्लान, वृद्ध, तपस्वी, संघ, साधर्मीने, बनती सहाय आपवी, तेमनी अवसरे अवसरे संभाळ लेवी, निःस्वार्थपणे तेमनी सेवा बजाववी ते वैयावच्च कहेवाय छे.

४. अभिनव शास्त्रनी वाचना, तेमां पडेला संदेहना समाधान माटे गुरुने पृच्छना, भणेलुं विस्मृत थइ न जाय माटे तेनी परावर्तना—पुनरावृत्ति करवी, तेमां समायेला गंभीर अर्थनुं चिंतवन करवुं ते अनुप्रेक्षा अने निश्चित—संदेह

विनानी धर्मकथावडे अन्य आत्मार्थीजनोने योग्य अवलंबन देवारुप पांचप्रकारना स्वाध्यायथी आत्माने अत्यंत उपकार थतो होवाथी ज्ञानी पुरुषोए तेने अभ्यंतर तपरुप लेख्यो छे.

५ अप्रशस्त अने प्रशस्त अथवा शुभ अने अशुभ अथवा शुद्ध अने अशुद्ध एवा मुख्यपणे ध्यानना वे भेद छे. आर्त अने रौद्र ए बे अप्रशस्त तथा धर्म अने शुक्ल ए वे प्रशस्त ध्यानना भेद छे. कोइ पण वस्तुमां चित्तनुं एकाग्रपणुं थवु ते ध्यान कहेवाय छे. तेथी जो शुभवस्तुमां चित्त परोवायुं होय तो शुभ ध्यान अने अशुभ वस्तुमां चित्त परोवायुं होय तो अशुभ ध्यान कहेवाय छे. मलीन विचारवाळुं ध्यान अशुद्ध कहेवाय छे अने निर्मळ विचारवाळुं ध्यान शुद्ध कहेवाय छे. 'मनुष्योने वंध अने मोक्षनुं मुख्य कारण मनज छे.' एम जे कहेवाय छे ते आवा शुभाशुभ ध्यानने लइनेज समजवानुं छे. क्षणवारमां प्रसन्नचंद्र राजर्षिए जे सातमी नर्कनां दळीयां मेळव्यां अने पाछां विखेरी नांख्या ते तथा भरत महाराजाए क्षणवारमां आरीसो अवलोकतां केवळ ज्ञान प्राप्त कर्युं ते सर्व ध्याननोज महिमा छे.

६. देह उपरनो सर्व मोह तजीने अने मन वचनने पण नियममां राखीने एकाग्रपणे–निश्चळ थइ आत्माने अरिहंत सिद्ध संबंधी शुद्ध उपयोगमां जोडी देवो ते कायोत्सर्ग नामे अभ्यंतर तप कहेवाय छे. आवा कायोत्सर्गथी अनेक महात्माओ अक्षय सुखने पाम्या छे, अने अनेक स्वर्गना अधिकारी थया छे; तेथी दरेक मोक्षार्थी जने तेनो अवश्य अभ्यास करवो योग्य छे. अभ्यास करतां करतां अधिकार वधतो जाय छे. तेथी गमे तेवुं कठिन कार्य पण सुलभ थइ पडे छे अने आत्माने अनंत लाभ प्राप्त थइ शके छे.

चारित्र०—प्राणप्रिये! आ तारी अमृत वाणीनुं में अत्यंत रुचीथी पान कर्युं छे. तेथी मने पण आवा अनुपम धर्मनी प्राप्तिद्वारा अंते अक्षय सुखनी प्राप्ति थशेज एम आ मारुं अंतःकरण साक्षी भरेछे.

सुमति—प्राणप्रिय! आ आपनी प्रौढ वाणी खरेखर शुभ अर्थ–सूचक छे. ते सर्वांशे सफळताने पामो! अने आप अपूर्व पुरुषार्थयोगे मारी स्वामिनी शिव–सुंदरीना शीघ्र अधिकारी थाओ! एवी अंतरथी दुवा दउं छुं:

चारित्र०—सुमति! हुं साचेसाचुं कहुं छुं के धर्मनुं आवुं अपूर्व स्वरुप समजी, तेनुं गंभीर महात्म्य मनमां भावी, हवे हुं शुद्ध

धर्म सेवन द्वारा स्वनाम सार्थक करवाने माराथी बनतुं साहस खेडवा बाकी राखीश नहि. तारी समयोचित किंमती सहायथी हुं मारी धारणामां अवश्य फतेहमंद नीवडीश.

सुमति—तथास्तु ! किंतु आपनो पवित्र हेतु संपूर्ण सिद्ध करवाने सबळ सहायभूत पूर्वोक्त धर्मनुं निश्चय अने व्यवहारथी स्वरुप कंइक बारीकीथी समजी लेवानी आपने जरुर छे.

चारित्र०—व्यवहार धर्म अने निश्चय धर्मनो मुख्य शो तफावत छे अने तेथी शो उपकार थइ शके छे ?

सुमति—व्यवहार धर्म साधन छे, अने निश्चय धर्म साध्य छे. शुद्ध-निश्चय धर्म साक्षात् प्राप्त करवाने व्यवहार धर्म पुष्ट कारणभूत छे. व्यवहार साधन विना निश्चय साधी शकाय नहिं.

चारित्र०—पूर्वे बतावेलुं धर्मनुं स्वरुप मुख्यताथी केवा प्रकारनुं छे ?

सुमति—धर्मनुं पूर्वोक्त स्वरुप मुख्यताथी व्यवहारनी अपेक्षाये कहेलुं छे तेथी तेमां निश्चयनुं स्वरुप केवळ गौणपणेज रह्युं छे.

चारित्र—त्यारे हवे मने निश्चय धर्मनुं कंइक स्वरुप समजावो.

सुमति—सर्वथा कर्म कलंक रहित निर्मळ ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्य (शक्ति) रुप आत्मानो सहज (निरुपाधिक) स्वभाव

एज निश्चय धर्म छे. सत्ता रुपे तो ते सदा आत्मामां स्थित रहेलोज छे.

चारित्र—सत्ता रुपे रहेलो ते धर्म आत्माने उपकारी केम थइ शकतो नथी अने ते क्यारे अने शी रीते आत्माने उपकारी थइ शके छे ते समजावो?

सुमति—आत्मा अनादि कर्म कलंकथी कलंकित थयेलो होवाथी सत्ता मात्र रहेलो धर्म आत्माने सहायभूत थइ शकतो नथी. ज्यारे पूर्वोक्त व्यवहार धर्मनुं रुचि पूर्वक सेवन करवामां आवे छे त्यारे परिणामनी विशुद्धिथी जेटले जेटले अंशे कर्म मळना हठवाथी आत्म स्वभाव उज्वल थाय छे तेटले तेटले अंशें प्रगट थयेला सत्तागत धर्मथी आत्माने सहज उपगार थायज छे. यावत् शुद्ध व्यवहार धर्मना संपूर्ण बळथी ज्यारे घनघाति कर्म मळनो क्षय थइ जाय छे, त्यारे तो अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र अने अनंत वीर्य रुप सहज अनंत चतुष्टयी प्रगटे छे. तेथी आत्मा सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, संपूर्ण सुखी अने सर्व शक्तिवंत थाय छे.

चारित्र०—व्यवहार धर्म क्यां सुधी कही शकाय छे ते समजावो?

सुमति—ज्यां सुधी पूर्वे कहेला पांचे प्रमादना परिहार वडे सम्यग् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्रनी सहायथी राग, द्वेष अने मोहादि

दुष्ट दोषोनो सर्वथा क्षय थाय नहि त्यां सुधी तेमनो संपूर्ण क्षय करवा माटे काळजी पूर्वक जे जे धर्म करणी करवामां आवे ते ते सर्व व्यवहार करणीमांज लेखाय छे. परंतु एटलो विशेष (तफावत) छे के जेम जेम आत्मा पूर्वोक्त दोषोनो क्षय करवाने विशेषे सन्मुख थतो जाय छे तेम तेम सहज सन्मुख भावे सेवन करवामां आवतो ते व्यवहार शुद्ध, शुद्धतर, अने शुद्धतम कहेवाय छे.

चारित्र०—पूर्वोक्त निश्चय अने व्यवहार धर्मनुं कंइक वधारे स्फुट थाय तेम समजावो ?

सुमति—अनादि कर्म संयोगथी प्रभवता राग द्वेषादिकने पूर्वोक्त अहिंसा संयम अने तप रुप धर्मनी सहायथी दूर करीने आत्माना स्वाभाविक ज्ञानादिक गुणोने प्रगट करी तेमनुं रक्षण करवुं. पूर्वोक्त प्रमाद योगे तेमनुं विराधन थवा न देवुं तेज निश्चय धर्म छे. सत्तागत रहेला आत्माना स्वभाविक गुणोने ढांकी देनारा कर्म आवरणो ने हठाववाने अनुकूळ जे जे सदाचरण सेववुं पडे ते ते सर्व व्यवहार धर्म कहेवाय छे. आथी स्फुट समजाशे के व्यवहार मार्गनुं विवेकथी सेवन करवुं ए निश्चय धर्म सिद्ध करवानुं अवंध्य (अमोघ) साधन छे. एटले के व्यवहार कारण रुप छे अने निश्चय कार्य रुप अथवा फळ रुप छे.

चारित्र०—उक्त स्वरुपनुं समर्थन करवा मुग्धे समजी शकाय एवुं कोइ पद्यात्मक प्रमाण टांकी देखाडो ?

सुमति—महोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी उक्त वातनुं आ प्रमाणे समर्थन करे छे.—

"जेम निर्मलतारे रतन स्फटिक तणी, तेम ए जीव स्वभाव;
ते जिन वीरे रे धर्म प्रकाशियो, प्रबल कषाय अभाव.
श्री सीमंधर साहिब सांभळो० १

जेम ते राते फूले रातडुं, श्याम फूलथीरे श्याम;
पुण्य पापथी रे तेम जग जीवने, राग द्वेष परिणाम.
श्री सीमंधर० २

धर्म न कहिये रे निश्चय तेहने, जेह विभाव वड व्याधि;
पहेले अंगेरे एणी पेरे भाखियुं, कर्मे होय उपाधि.
श्री सीमंधर० ३

जे जे अंशेरे निरुपाधिकपणुं, ते ते जाणोरे धर्म;
सम्यग् दृष्टिरे गुणठाणा थकी, जाव लहे शिव शर्म.
श्री सीमंधर० ४

एम जाणीनेरे ज्ञान दशा भजी, रहीये आप स्वरूप;

पर परिणतिथीरे धर्म न छंडीये, नवि पडिये भव कूप.
श्री सीमंधर साहिब सांभलो० ५"

आवी रीते बन्ने मार्गनुं योग्य समर्थन करीने उभयनुं आराधन करवा आ प्रमाणे कहेलुं छे.

"निश्चय दृष्टि हृदय धरीजी, पाले जे व्यवहार ;
पुण्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार. सोभागी
जिन सीमंधर सुणो वात!"

आम टुंकाणमां उक्त महापुरुषे जणाव्युं छे के निश्चयने पामवा इच्छनारे तेनेज हृदयमां स्थापीने-तेना सन्मुखज दृष्टि राखीने विवेक पूर्वक व्यवहार मार्गनुं सेवन करता रहेवुं. एम करवाथीज अंते साध्य सिद्धि-भवसमुद्रनो अंत आवी शकशे. ते विना भवभ्रमणनो कदापि अंत आवी शकशे नहिं. एम समजीने अक्षय सुखना अर्थी सर्वे भाइ व्हेनोए स्फटिक रत्न जेवो निर्मळ आत्म स्वभाव प्रगट करवाना परम पवित्र-उद्देशथी तेमां बाधकभूत राग, द्वेष अने मोहादिक कर्म-मळ जेम दूर थाय तेम उपयोग राखी सर्वज्ञभाषित अहिंसा, संयम अने तप लक्षण धर्मनुं सदा यत्नथी सेवन करवुंज उचित छे. आप-श्रीनुं पण एथीज कल्याण थवानुं निश्चित छे.

धर्म रत्ननी प्राप्तिने माटे अवश्य प्राप्त करवा योग्य गुणो अथवा धर्मनी खरी कुंची.

'जेम चिंतामणी रत्न भाग्यहीन जीवोने मळवुं मुस्केल छे तेम अक्षुद्रतादिक उत्तम गुणरहित जनोने पण धर्मरत्न मळवुं मुश्केलज छे.'

'अक्षुद्रतादिक एकवीश गुणोवडे युक्त जीवने जिनमतमां धर्म रत्नने योग्य कहेलो छे. माटे ते गुणोने उपार्जवा धर्माभिलाषीजनोए जरुर यत्न करवो घटे छे.' उक्त वातनुं समर्थन करता छता श्रीमद् यशोविजयजी महाराज आ प्रमाणे कथे छे—

"एकवीश गुण परिणमे, जास चित्त नित्यमेव;
धर्म रत्नकी योग्यता, तास कहे तुं देव." १

उक्त एकवीश गुणोनी नोंध आ प्रमाणे आपेल छे के—

"क्षुद्र नहिं वळी रुपनिधि, सौम्य जनप्रिय धन्न;
क्रूर नहिं भीरु वळी, अशठ सुदक्खिन्न. २
लज्जालुओ दयालुओ, सोम दिट्ठि मज्झथ्थ;
गुणरागी सतकथ्थ, सुपख्ख दीर्घदर्शी अथ्थ. ३
विशेषज्ञ वृद्धानुगत, विनयवंत कृत जाण;
परहितकारी लब्ध लक्ष, एम एकवीश प्रमाण. ४

गुणगुणीनो कथंचित् अभेद संबंध होवाथीज उपर गुणने बदले गुणीनुं निरुपण कर्युं छे. अर्थात् धर्म रत्नने योग्य आवा गुणी थवुंज जोइये. केवा गुणी थवुं जोइये ? तेनुं उपर मुजब प्रथम संक्षिप्त वर्णन करीने पछी कंइक ते संबंधी विशेष वर्णन करवाने बनतो प्रयत्न करशुं.

१. क्षुद्र नहिं एटले अक्षुद्र, गंभीर आशयवाळो, सूक्ष्म रीते वस्तुतत्त्वनो विचार करवाने शक्ति धरावनार समर्थ जीव विशेष धर्म रत्नने पामी शके.

२. रुपनिधि एटले प्रशस्त रुपवाळो, पांचे इंद्रियो जेने स्पष्ट रीते प्राप्त थयेल छे एवो अर्थात् शरीर संबंधी सुंदर आकृतिने धारनार आत्मा.

३. सौम्य एटले स्वभावेज पापदोष रहित, शीतळ स्वभाववान् आत्मा.

४. जनप्रिय एटले सदा सदाचारने सेवनार लोकप्रिय आत्मा.

५. क्रूर नहिं एटले क्रूरता या निष्ठूरतावडे जेनुं मन मलीन थयुं नथी एवो अक्लिष्ट याने प्रसन्न चित्तयुक्त शांत आत्मा.

६. भीरु एटले आलोक संबंधी तथा परलोक संबंधी अपायथी डरवावाळो अर्थात् अपवादभीरु तेमज पापभीरु होवाथी वधी

रीते संभाळीने चालनार, उभय लोक विरुद्ध कार्यनो अवश्य परिहार करनार.

७. अशठ एटले छळ प्रपंचवडे परने पासमां नाखवाथी दूर रहेनार.

८. सुदक्खिन्न एटले शुभ दाक्षिणतावंत, उचित प्रार्थनानो भंग नहिं करवावाळो, समय उचितवर्ती सामानुं दील प्रसन्न करनार.

९. लज्जालुओ एटले लज्जाशील, अकार्य वर्जी सत्कार्यमां सहेजे जोडाइ शके एवो मर्यादाशील पुरुष.

१०. दयालुओ एटले सर्व कोइ प्राणी वर्ग उपर अनुकंपा राखनार.

११. सोमदिट्ठि—मज्झत्थ एटले राग द्वेष रहित निष्पक्षपातपणे वस्तुतत्त्वने यथार्थ रीते ओळखी मध्यस्थताथी दोषने दूर करनार.

१२. गुण रागी एटले सद्‌गुणीनोज पक्ष करनार, गुणनोज पक्ष लेनार.

१३. सत्कथ्थ एटले एकांत हितकारी एवी धर्मकथा जेने प्रिय छे एवो.

१४. सुपक्ख एटले सुशील अने सानुकूळ छे कुटुंब जेनुं एवो जाडाबळियो.

१५. दीर्घदर्शी एटले प्रथमथी सारी रीते विचार करीने परिणामे जेमां लाभ समायो होय एवा शुभ कार्यनेज करवावाळो.

१६. विशेषज्ञ एटले पक्षपात रहितपणे गुण दोष, हित अहित, कार्य अकार्य, उचित अनुचित, भक्ष अभक्ष्य, पेय अपेय, गम्य अगम्य विगेरे विशेष वातनो जाण.

१७. वृद्धानुगत एटले परिपक्व बुद्धिवाळा अनुभवी पुरुषोने अनुसरी चालनार, नहिं के जेम आव्युं तेम उच्छृंखलपणे इच्छा मुजब काम करनार.

१८. विनयवंत एटले गुणाधिकनुं उचित गौरव साचवनार सुविनीत.

१९. कृत जाण एटले बीजाए करेला गुणने कदापि नहिं विसरी जनार.

२०. परहितकारी एटले स्वतः स्वार्थ विना परोपकार करवामां तत्पर, दाक्षिणतावंत तो ज्यारे तेने कोइ प्रेरणा अथवा प्रार्थना करे त्यारे परोपकार करे अने आतो पोताना आत्मानीज प्रेरणाथी स्व कर्तव्य समजीनेज कोइनी कंइ पण अपेक्षा राख्या विनाज परोपकार कर्या करे एवा उत्तम स्वभावने स्वभाविक रीते धारनार भव्य.

२१. लब्ध लक्ष एटले कोइ पण कार्यने सुखे साधी शके एवो कार्य दक्ष.

हवे उपर कहेला २१ गुणोनुं कंइक सहेतुक ब्यान करवानो उपक्रम करवामां आवे छे. जेम शुद्ध करायेला वस्त्र उपरज रंग जोइये एवो बराबर-चढी शके छे परंतु अशुद्ध एवा मलीन वस्त्र उपर रंग चढी शकतो नथी तेमज उपर कहेला गुण विनाना मलीन आत्माने धर्मनो रंग लागतोज नथी. उपर कहेला गुणोवडे विशुद्ध थयेला आत्मानेज धर्मनो रंग चढे छे. वळी जेम खडबचरडी[1] अने पालीस कर्या विनानी [2]भींत उपर चित्र आवेहूब उठतुं नथी परंतु घठारी मठारीने साफ करेली सरखी भींत उपर चित्र जोइये एवुं आबेहुब उठी नीकळे छे तेम उपर कहेला गुणोना संस्कार विनाना असंस्कृत हृदय उपर धर्मनुं चित्र बराबर पडी शकतुं नथी पण उक्त गुणोथी संस्कारित हृदय उपर सत्य धर्मनुं चित्र बराबर खीली उठे छे. उक्त गुणोनी प्राप्तिद्वारा भव्य आत्मा सत्य धर्मनो उत्तमोत्तम लाभ पामी शके छे एथी उपर कहेला सद्गुणोनो खास अभ्यास करवानी अत्यावश्यकता स्वतः सिद्ध थाय छे, अने तेथीज ते गुण संबंधी बनी शके तेटली समज लेवी पण जरुरनी छे. एमांज जीवनुं खरुं हित समायेलुं छे.

१ Rough. २ Unpolished.

१ "क्षुद्र स्वभाववाळो अगंभीर अने उछांछळो होवाथी धर्मने साधी शकतो नथी. ते नथी तो करी शकतो स्वहित के नथी करी शकतो परहित; स्वपरहित साधवानी तेनामां योग्यताज नथी. तेथी स्वपरहित साधवाने अक्षुद्र स्वभावी एवो गंभीर अने ठरेल प्रकृतिवाळोज योग्य अने समर्थ होइ शके छे.

२ हीन अंगोपांगवाळो, नबळा संघयणवाळो, तथा इंद्रियोमां खोडवाळो स्वपरहित साधवाने असमर्थ होवाथी धर्मने अयोग्य कह्यो छे. केमके धर्म साधवामां तेनी खास अपेक्षा रहे छे. ते विना धर्म साधनमां घणीज अडचण आवे छे. तेथी संपूर्ण अंगोपांगवाळो, पांचे इंद्रिय पूरेपुरी पामेलो अने उत्तम संघयणवाळो सुंदर आकृतिवंत प्राणी धर्मने योग्य कह्यो छे. एवी शुभ सामग्रीवाळो जीव शासननी शोभा वधारी शके छे अने सर्वज्ञ भगवाने भाखेला धर्मने सम्यक् पाळी शके छे.

३ प्रकृतिथीज शांत स्वभाववाळो जीव प्रायः पापकर्ममां प्रवृत्ति करतोज नथी अने सुखे समागम करी शकाय एवा शीळा स्वभावने लीधे अन्य आकळा जीवोने पण समाधिनुं कारण थइ शके छे. अर्थात् आकरी प्रकृतिवाळा पण शीळा स्वभाववाळा सज्जनोना समागमथी ठंडी प्रकृतिना थइ जाय छे. तेथी ठंडी प्रकृतिवाळा प्राणी सुखे स्वपरहित साधी शके छे परंतु आकळी प्रकृतिवाळा तेम करवाने असमर्थ होवाथी धर्म साधवाने अयोग्य कह्या छे.

४ दान विनय अने निर्मळ आचारने सेवनार माणस सर्व जनोने प्रिय थइ शके छे अने ते आलोक विरुद्ध तथा परलोक विरुद्ध कार्यने स्वभाविक रीतेज तजनार होवाथी सम्यग् दृष्टि जीवोने पण मोक्षमार्गमां वहुमान उपजावनार थइ पडे छे. सदाचार सेवी लोकप्रिय पुरुष पोतानी पवित्र कहेणी करणीथी अन्य जनोने पण अनुकरणीय थइ पडे छे, तेवी रीते इच्छा मुजव वर्तो अतडो रहेनार माणस कंइ पण विशेष स्वपरहित साधी शकतो नथी.

५ क्रूर माणस क्लिष्ट परिणामथी पोतानुंज हित साधवाने अशक्त छतो परनुं हित शी रीते साधी शके? तेथी ते धर्मरत्नने अयोग्य समजवो. सम परिणामने धारण करनार एवो अनुकंपावान–अक्रूर आत्माज मोक्षमार्ग साधवाने अधिकारी होइ शके छे.

६ आलोक संबंधी तथा परलोक संबंधी दुःखनी विचारणा करनार पाप कर्ममां प्रवृत्ति करतो नथी अने लोकापवादथी पण डरतो रहे छे एवो भवभीरु माणसज धर्मरत्नने योग्य होइ शके छे. परंतु जे निर्भयपणे–लोकापवादनो पण भय राख्या विना स्वच्छंद वर्तन करे छे ते धर्मरत्नने योग्य नथीज.

७ अशठ माणस कोइनी वंचना करतो नथी तेथी ते विश्वासपात्र अने प्रशंसापात्र बनेछे. वळी ते पोताना सद्भावथी उद्यम करेछे तेथी ते धर्मरत्नने योग्य ठरे छे. कपटी माणस तो पर वंचनाथी पो-

ताना कुटिल स्वभावने लइ परने अप्रीतिपात्र बने छे तेमज स्वहितथी पण चूके छे माटे ते धर्मने माटे अयोग्य छे.

८ सुदाक्षिणतावंत पोतानुं कार्य तजी बनी शके तेटलो बीजानो उपगार करतो रहे छे तेथी तेनुं वचन सहु कोइ मान्य राखे छे तेमज सहु कोइ तेने अनुसरीने चाले छे. आवा स्वभावथी सहेजे स्वपरहित साधी शकाय छे तेथी ते धर्मरत्नने योग्य छे. जेनामां ए गुण नथी ते स्वार्थसाधक अथवा आपमतलबीयाना उपनामथी निंदापात्र थाय छे माटे ते धर्मरत्नने अयोग्य ठरे छे.

९ लज्जाशील माणस लगारे पण अकार्य करतां डरे छे तेथी ते अकार्यने दूर तजी सदाचारने सेवतो रहे छे तेमज अंगीकार करेला शुभ कार्यने ते कोइ रीते तजी शकतो नथी. तेथी ते सद्धर्मने योग्य गणाय छे. लज्जाहीन तो कंइपण अकार्य करतां डरतो नथी तेथी ते अशुभ आचारने अनायासे सेवतो रहे छे. गमे तेवा उत्तम कुळमां उत्पन्न थया छतां ते कुळ मर्यादाने तजी देता वार करतो नथी तेथी लज्जाहीन धर्म रत्नने अयोग्य छे.

१० दया ए धर्मनुं मूळ छे अने दयाने अनुसरीनेज सर्व सद्अनुष्ठान प्रवर्ते छे एम जिन-आगममां सिद्धांत रुपे कहेलुं छे तेथीज सर्वज्ञ भाषित सत्य धर्मनुं यथार्थ आराधन करवाने दयाळु होवानी खास जरुर छे अर्थात् दयाळुज धर्म रत्नने योग्य छे. दयाहीन कोइ

रीते धर्मने योग्य नथी केमके तेवा निर्दय परिणामवाळानुं सर्व अनुष्ठान निष्फळ थाय छे.

११ मध्यस्थ एटले पक्षपात रहित एवो सौम्य दृष्टि पुरुष राग द्वेष दूर तजीने शांत चित्तथी धर्म विचारने यथास्थित सांभळे छे अने गुणनो स्वीकार तथा दोषनो त्याग करेछे माटे ते धर्मने लायक छे. परंतु पक्षपात युक्त बुद्धिवाळो माणस अंध श्रद्धाथी वस्तुतत्त्वनो यथास्थित विचारज करी शकतो नथी तो पछी गुणनो आदर अने दोषनो त्याग शी रीते करी शके? तेथी पक्षपात बुद्धिथी एकांत खेंचताण करी बेसनार धर्म रत्नने योग्य नथीज.

१२ गुणरागी माणस गुणवंतनुं बहु मान करे छे, निर्गुणनी उपेक्षा करेछे, सद्गुणनो संग्रह करे छे अने संप्राप्त गुणने सारी रीते साचवी राखे छे. प्राप्त थयेला गुणोने दोषित करतो नथी. तेथी ते धर्मने योग्य छे. निर्गुण माणस तो बीजा गुणवंतने पण पोतानी जेवा लेखे छे तेथी ते नथी तो करतो तेमनी उपर राग के नथी करतो गुण उपर राग. परंतु उलटो गुणद्वेषी होइ सद्गुणनो पण अनादर करे छे अने आत्म गुणने मलीन करी नांखे छे माटे ते धर्म रत्नने माटे अयोग्यज छे.

१३ विकथा करवाना अभ्यासवडे कलुषित मनवाळो माणस विवेक रत्नने खोइ दइछे अने धर्ममां तो विवेकनी खास जरुर छे. तेथी

धर्मार्थी माणसे सत्य प्रिय थवानो अने सत्य-हितकारी वातनेज कहेवानो अथवा सांभळवानो ढाळ राखवो जोइये. आवा सत्यप्रिय अने सत्यभाषक जीवथी स्वपरनुं हित सहेजे थाय छे तेथी तेवा गुणवाळाज धर्मरत्नने योग्य छे. विकथावंतथी उभयने हानि पहोंचे छे तेथी ते अयोग्य छे.

१४ जेनो परिवार अनुकूळ वर्तनारो, धर्मशील अने सदाचारने सेववावाळो होय एवो जाडावळियो माणस निर्विघ्नपणे धर्मसाधन करी शके छे. पूर्वोक्त स्वभाववाळा कुटुंबथी धर्मसाधनमां कंइ पण अंतराय आववानो संभव रहेतो नथी केमके एवुं सानुकूळ कुटुंब तो धर्मसाधनमां जोइये तेवी सहाय दइ शके छे. तेथी धर्मशील अने सदाचारवाळा अनुकूळ परिवारवाळो धर्मने दीपाववाने योग्य गणाय छे तेवो प्रतिकूळ आचार विचारवाळा परिवारवाळो योग्य गणातो नथी, केमके तेथी तो धर्म मार्गमां वखतोवखत विघ्न उभा थाय छे. माटे शुद्ध अने समर्थपक्षनी पण खास जरुर छे.

१५ दीर्घदर्शी माणस पूर्वापरनो अथवा लाभालाभनो विचार करी जेनुं परिणाम सारुंज आववानो संभव होय, जेमां लाभ वधारे अने क्लेश अल्प होय अने जे घणा माणसोने प्रशंसनीय होय तेवां कामनोज आरंभ करेछे. तेवा दीर्घदर्शीजनो धर्म रत्नने योग्य छे.

केमके ते विचारशील अने विवेकवंत होवाथी सफळ प्रवृत्तिने करनारा होय छे. ते कंइपण वगर विचार्युं नहि बनी शके एवुं असाध्य कार्य सहसा आरंभताज नथी. जे कार्य सुखे साधी शकाय एवुं मालम पडे तेनोज ते विवेकथी आदर करेछे. सहसाकारी बहुधा असाध्य कार्य करवा मंडी जाय छे अने तेमां निष्फळ नीवडवाथी ते पश्चातापनो भागी थाय छे तेथी ते धर्मरत्नने लायक ठरतो नथी.

१६ विशेषज्ञ पुरुष वस्तुओना गुण दोषने पक्षपात रहितपणे पिछानी शके छे तेथी प्रायः तेवा माणसज उत्तम धर्मना अधिकारी कह्या छे. जे अज्ञानतावडे हिताहित, कृत्याकृत्य, धर्माधर्म, भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय के गुणदोष संबंधी बिलकुल अज्ञात छे ते धर्मने अयोग्यज छे. केमके जे पोतानुं हित शुं छे तेटलुं समजता पण नथी ते शी रीते स्वहित साधी शकशे ? अने स्वहित साधवाने पण असमर्थ होवाथी परहितनुं तो कहेवुंज शुं ? तेथी पशुना जेवा अज्ञान अने अविवेकी जनो धर्मने माटे अयोग्य छे.

१७ परिपक्व बुद्धिवाळा अर्थात् सद्विवेकादिक गुण संपन्न एवा वृद्ध पुरुषो पापाचारमां प्रवृत्ति करताज नथी. एम होवाथी तेवा वृद्धने अनुसरीने चालनार पण पापाचारथी दूरज रहे छे केमके जीवोने सोवत प्रमाणे गुण आवे छे. कहेवत छे के ' जेवी सोवत तेवी तेवी असर. ' तेवा शिष्ट पुरुषोने अनुसारे चालनार धर्मरत्नने योग्य

थाय छे परंतु स्वच्छंदे चालनार माणस कदापि धर्मने योग्य थइ शकतो नथी. केमके ते सदाचारथी तो प्रायः विमुख रहे छे.

१८ सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सर्व सद्गुणोनुं मूळ विनय छे, अने ते सद्गुणो वडेज खरुं सुख मेळवी शकाय छे. माटेज जैनशाशनमां विनयवंत–विनीतने वखाण्यो छे. लौकिकमां पण कहेवाय छे के ' वनो (विनय) वेरीने पण वश करे. ' तो पछी शास्त्रोक्त नीति मुजब विनयनो अभ्यास करवामां आवे तो तेना फळनुं तो कहेवुंज शुं? विनयथी सर्व इष्टनी प्राप्ति थाय छे. तेथी इष्टसुखना अभिलाषी जनोए अवश्य विनयनुं सेवन करवुंज जोइये. अविनीत माणस धर्मनो अधिकारी नथीज. केमके ते तेनी असभ्य वृत्तिथी कंइ पण सद्गुण पेदा करी शकतो नथी, अने उलटो ठेकाणे ठेकाणे क्लेशनो भागी थाय छे.

१९ कृतज्ञ पुरुष धर्मगुरुने तत्त्वबुद्धिथी परोपकारी जाणीने तेनुं बहुमान करे छे. तेथी सम्यग् ज्ञान दर्शनादिक सद्गुणोनि वृद्धि थाय छे तेथी कृतज्ञ माणसज धर्मरत्नने लायक छे. कृतज्ञ माणस उपर सामान्य उपगार कर्यो होय तो तेने पण ते भूलतो नथी तो असाधारण उपगारने करनार उपगारीने तो ते भूलेज केम? कृतघ्न माणस उपगारीए करेला उपगारने विसरी जइ तेनो उलटो अपवाद करवा तत्पर थइ जाय छे. दूध पाइने उछेरेला सापनी जेम कृतघ्न नुकसान करे छे माटे ते धर्मने योग्य नथी.

२० धन्य कृत पुन्य एवो परहितकारी पुरुष धर्मनुं खरुं रहस्य सारी रीते समजी प्राप्त करीने निस्पृह चित्त छतो पोताना पूर्ण पुरुषार्थयोगे अन्य जनोने पण सन्मार्गमां जोडी दे छे. अर्थात् धर्मनुं खरुं रहस्य जाणनार अने निस्पृहपणे पोतानुं छतुं वीर्य फोरवनार एवा परहितकारी पुरुषोनीज बलिहारी छे. तेवा धन्य पुरुषो स्वपरनुं हित विशेषे साधी शके छे. तेवा भाग्यशाळी भव्यो धर्मने सारी रीते दीपावी शके छे तेथी ते धर्मरत्नने अधिक लायक छे. केवळ स्वार्थ वृत्तिवाळाथी तेवो स्वपर उपगार संभवतो नथी. तेथी निःस्वार्थ वृत्ति राखवानी खास जरुर छे. निःस्वार्थी जनो परोपकारने पोताना शुद्ध स्वार्थथी भिन्न समजता नथी. अर्थात् परोपकारने पोतानुं खास कर्तव्य समजीने कोइनी प्रेरणा विना स्वभाविक रीतेज सेवे छे.

२१ लब्ध लक्ष पुरुष सकळ धर्मकार्यने सुखे समजी शके छे अने ते दक्ष--चंचळ तथा सुखे केळवी शकाय एवो होवाथी थोडा वखतमांज सर्व उत्तम कलामां पारगामी थइ शके छे. आवो कार्य दक्ष पुरुष धर्मरत्नने लायक होइ शके छे. परंतु अकुशळ, अशिक्षणीय अने मंद परिणामी तेमज अति परिणामी जनो धर्मने लायक थइ शकता नथी. केमके तेमनी नजर सापेक्षपणे सर्वत्र फरी वळती नथी. तेथी तेओ सत्य धर्मथी बाहेर रह्या करे छे, अर्थात् धर्मना खरा रहस्यने पामी शकताज नथी. माटे धर्मार्थी जनोए कार्यदक्ष अने कर्तव्य परायण थवानी पण पूरी जरुर छे."

आ प्रमाणे ए एकवीश गुणोनुं कंइक सहेतुक वर्णन 'धर्मप्रकरण' ग्रंथने अनुसारे करवामां आव्युं छे. ए उपर वर्णवेला गुणो जेमणे संप्राप्त कर्या छे ते भाग्यशाळी भव्य जनो धर्मरत्नने लायक थाय छे. ए एकवीश गुण संपूर्ण जेमने प्राप्त थया छे ते उत्कृष्ट रीते लायक छे. चतुर्थ भागे न्यून गुणवाळा भव्य मध्यम रीत्या लायक छे अने अर्धा भागथी न्यून गुणवाळा भव्यो जघन्य भागे लायक छे. परंतु तेथी पण न्यून गुणवाळा होय तेतो दरिद्रप्राय—अयोग्य समजवाना छे. एम समजीने सर्वज्ञ भाषित शुद्ध धर्मना अभिलाषी जनोए जेम बने तेम उक्त गुणोमां विशेषे आदर करवो योग्य छे. कारण के पवित्र चित्त पण शुद्ध भूमिमांज शोभे छे अने भूमि—शुद्धि उक्त गुणोवडेज थाय छे.

उक्त गुण भूपित भव्य सत्त्वोए शुद्ध धर्मनी प्राप्ति माटे शुद्ध संयमधारी सद्‌गुरु पासे शुश्रुषा पूर्वक धर्मनुं स्वरुप सांभळवा अने तेनुं मनन करवा साथे यथाशक्ति तेनुं परिशीलन करवाने प्रयत्न सेववो जोइये. ते धर्म मुख्यपणे बे प्रकारनो छे. देशविरति धर्म अने सर्व विरति धर्म. देशविरति धर्मना अधिकारी गृहस्थ लोक होइ शके छे अने सर्व विरति धर्मना अधिकारी साधु मुनिराज होइ शके छे. स्थूल थकी हिंसा, असत्य, अदत्त, मैथुननो त्याग अने परिग्रहनुं प्रमाण करवारुप पांच अणुव्रत, दिग् विरमण, भोगोपभोग विरमण अने अनर्थदंड विरमणरुप त्रण गुणव्रत तथा सामायक, देशावगासिक, पौ-

षध अने अतिथि संविभागरुप द्वादशव्रत गृहस्थ (श्रावक) ने होइ शके छे. साधु मुनिराजनें तो सर्वथा हिंसा, असत्य, अदत्त, अब्रह्म तथा परिग्रहना परिहारथी अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अने असंगतारुप पांच महाव्रतो पाळवा साथे रात्रीभोजननो सर्वथा त्याग करवानो होय छे. (विवेकवंत गृहस्थ पण रात्रीभोजननो त्यागज करे छे,) ते उपरांत साधु मुनिराजने नीचेनी दश शिक्षा संपूर्ण रीते पाळवानी होय छे अने गृहस्थने वनी शके तेटला प्रमाणमां ते पाळवानी होय छे.

‘धर्मनी दश शिक्षा’

१ क्षमा—अपराधि जीवोनुं अंतःकरणथी पण अहित नहि इच्छतां जेम स्वपरहित थइ शके तेम सहनशीलता पूर्वक उचित प्रवृत्ति या निवृत्ति करवी अने जिनेश्वर प्रभुना पवित्र वचननो तेवो मर्म समजीने अथवा आत्मानो एवोज धर्म समजीने सहज सहनशीलता धारवो ते.

२ मृदुता—जातिमद, कुळमद, वळमद, प्रज्ञामद, तपमद, रुपमद, लाभमद अने ऐश्वर्यमदनुं स्वरुप सारी रीते समजी तेथी थती हानिने विचारी ते संवंधी मिथ्याभिमान तजीने नम्रता याने लघुता धारण करवी. गुणगुणीनो द्रव्य भावथी विनय साचववो, तेमनी उ-

चित सेवा चाकरी करवी तेमनुं अपमान करवाथी सदंतर दूर रहेवुं विगेरे नम्रताना नियमो ध्यानमां राखीने स्वपरनी परमार्थथी उन्नति थाय एवो सतत ख्याल राखी रहेवुं ते.

३ सरलता—सर्व प्रकारनी माया तजी निष्कपट थइ रहेणी कहेणी एक सरखी पवित्र राखवी. जेम मन, वचन अने कायानी पवित्रता सचवाय, अन्य जनोने सत्यनी प्रतीति थाय तेम प्रयत्नथी स्व उपयोग साध्य राखीने व्यवहार करवो ते.

४ संतोष—विषय तृष्णानो त्याग करी, ते माटे थता संकल्प विकल्पोने शमावी दइ, तुष्ट वृत्तिने धारण करी, स्थिर चित्तथी सम्यग् दर्शन ज्ञान अने चारित्ररुप रत्नत्रयीनुं सेवन करवुं तेमज सर्व पाप उपाधिथी निवर्तवुं ते.

५ तप—मन अने इंद्रियोना विकार दूर करवा तेमज पूर्व कर्मनो क्षय करवा समता पूर्वक बाह्य अने अभ्यंतर तपनुं सेवन करवुं. उपवास आदिक बाह्य तप समजीने समता पूर्वक करवाथी ज्ञान ध्यान प्रमुख अभ्यंतर तपनी पुष्टिने माटेज थाय छे. तेथी ते अवश्य करवा योग्यज छे. तपथी आत्मा कंचनना जेवो निर्मळ थाय छे.

६. संयम—विषय कषायादिक प्रमादमां प्रवर्तता आत्माने नियममां राखवा यम नियमनुं पालन करवुं, इंद्रियोनुं दमन करवुं, कषायनो त्याग करवो अने मन वचन कायाने बनता काबुमां राखवा ते.

७ सत्य—सहुने प्रिय अने हितकर थाय एवुंज वचन विचारीने अवसर उचित बोलवुं, जेथी धर्मने कोइ रीते बाधक न आवे ते.

८ शौच—मन वचन अने कायानी पवित्रता जाळववाने बनतो प्रयत्न सेव्या करवो. प्रमाणिकपणेज वर्तवुं, सर्व जीवने आत्म समान लेखवा. कोइनी साथे अंशमां पण वैर विरोध राखवो नहि. सहुने मित्रवत् लेखवा, तेमने बनती सहाय आपवी अने गुणवंतने देखी मनमां प्रमुदित थवुं, पापी उपर पण द्वेष न करवो ते.

९ निष्परिग्रहता—जेथी मूर्छा उत्पन्न थाय एवी कोइपण वस्तुनो संग्रह नहि करवो. परिग्रहने अनर्थकारी जाणी तेनाथी दूर रहेवुं, कमलनी पेरे निर्लेपपणुं धारवुं. परस्पृहाने तजी निस्पृहपणुं आदरवुं.

१० ब्रह्मचर्य—निर्मळ मन वचन अने कायाथी किंपाकनी जेवा परिणामे दुःखदायक विषयरसनो त्याग करी निर्विषयपणुं याने निर्विकारपणुं आदरवुं. विवेक रहित पशुना जेवी कामक्रीडा तजी सुशीलपणुं सेववुं. लज्जाहीन एवी मैथुन क्रीडानो त्याग करी आत्मरति धारवी ते. आ दशविध धर्मशिक्षानुं शुद्ध श्रद्धापूर्वक सेवन करवाथी कोइ पण जीवनुं सहजमां कल्याण थइ शके छे. माटे तेनुं यथाविध सेवन करवानी अति आवश्यकता छे. सम्यग्दर्शन ज्ञान अने चारित्र एज मोक्षनो खरो मार्ग छे.

॥ अथ परमातम छत्रीशी. ॥

परम देव परमातमा परम ज्योति जगदीस ॥ परमभाव उरआनकें प्रणमत हुं नीस दीस ॥ १ ॥ एक ज्युं चेतन द्रव्य है. तामें तीन प्रकार ॥ बहिरातम अंतर कह्यो, परमातम पद सार ॥ २ ॥ बहिरातम ताकुं कहै, लखे न ब्रह्म स्वरुप ॥ मगन रहे परद्रव्य है, मिथ्यावंत अनूप ॥ ३ ॥ अंतर आतमा जीव सो, सम्यक् दृष्टि होय ॥ चोथै अरु फुनि बारमै, गुणथानक लों सोय ॥ ४ ॥ परमातम परब्रह्मकों, प्रगटयो शुद्ध स्वभाव ॥ लोकालोक प्रमाण सब, झलके तिनमें आय ॥ बाहिर आतम भाव तज, अंतर आतमा होय ॥ परमातम पद भजतु है, परमातम वहे सोय ॥ ६ ॥ परमातम सोइ आतमा, अवर न दुजो कोइ ॥ परमातमकुं ध्यावते, एह परमातम होय ॥ ७ ॥ परमातम परब्रह्म है, परम ज्योति जगदीस ॥ परसु भिन्न निहारीये, जोइ अलख सोइ इस ॥ ८ ॥ जे परमातम सिद्ध मैं, सोहि आतमा माहिं ॥ मोह मयल इग लगी रह्यो, तामे सूझत नांहि ॥ ९ ॥ मोह मयल रागादिके, जा छिन कीजे नास ॥ ता छिन एह परमातमा, आपहि लहे प्रकास ॥ १० ॥ आतम सो परमातमा, परमात सोइ सिद्ध ॥ विचकी दुविधा मीट गइ, प्रगट भइ निज रिद्ध ॥ ११ ॥ मेंहि सिद्ध परमातमा, मेंहि आतमराम ॥ मेंहि ग्याता गेयको, चेतन मेरो नाम ॥ १२ ॥ मेंहि अनंत सुखको धनी, सुखमें मोहि सोहाय ॥ अविनासी आणंदमय, सोऽहं त्रिभुवन

राय ॥ १३ ॥ सुद्ध हमारो रुपहें, शोभित सिद्ध समान ॥ गुण अनंत करी संयुत, चिदानंद भगवान ॥ १४ ॥ जेसो सिवपें तहिवें वसें, तेसो या तनमांहि ॥ निश्चय दृष्टि निहारतां, फेर रंच कछुं नांहि ॥ १५ ॥ करमनकें संजोग ते, भए तीन प्रकार ॥ एक आतमा द्रव्यकुं, करम नटावण हार ॥ १६ ॥ कर्म संघातें अनादिके, जोर न कछु बसाय ॥ पाइ कला विवेककी, राग द्वेष छिन जाय ॥१७॥ [२]करमनकी जर राग हे, राग जरे जर जाय ॥ परम होत परमातमा, भाइ सुगम उपाय ॥ १८ ॥ काहेकुं भटकत फीरे, सिद्ध होनकें काज ॥ राग द्वेषकुं त्याग दे, भाइ सुगम इलाज ॥ १९ ॥ परमातम पदको धनि, रंग भयो विललाय ॥ राग द्वेषकी प्रीति सौ, जनम अकारथ[३] जाय ॥ २० ॥ राग द्वेषकी प्रीति तुम, भुले करो जन रंच ॥ परमातमपद ढांकके, तुमहि किये तिरयंच ॥ २१ ॥ जप तप संजम सव भले, राग द्वेष यौ नाहि ॥ राग द्वेष जो जागते, ए सव भये ज्युं नाहिं ॥ २२ ॥ राग द्वेषके नासते, परमातम परकास ॥ राग द्वेषके भासते, परमातम पद नास ॥ २३ ॥ जो परमातम पद चहें, तो तुम राग निवार ॥ देखी संजोग स्वामीको, अपने हिये विचार ॥२४॥ लाख वातकी वात इह, जोकु देइ वताय ॥ जो परमातम पद चहे,

१ जेम सिद्ध भगवान सिद्धक्षेत्रमां विराजे छे. २ कर्मनुं मूळ राग छे, राग गये छते निमूळ थये छते कर्मनो अंत आववानो छे अने त्यारेज परमात्मपद प्राप्त थवानुं छे. ३ निष्फळ

राग द्वेष तज भाइ ॥ २५ ॥ राग द्वेष त्याग विनु, परमातम पद नाहिं ॥ कोटि कोटि जप तप करे, सब अकारथ जाय ॥ २६ ॥ दोष आतमाकुं इह, राग द्वेषको संग ॥ जेसे पास मजीठमें, वस्त्र और हि रंग ॥ २७ ॥ तेसे आतम द्रव्यकुं, राग द्वेषके पास ॥ कर्म रंग लागत रहे, कैसे लहे प्रकाश ॥ २८ ॥ इण कर मनको जीतवो, कठीन वात हे वीर ॥ जर[1] खोदे विनुं नहि मिटें, दुष्ट जात वे पीर[2] ॥ २९ ॥ [3]लल्लोपतो के कीयो, ए मिटवे के नाहि ॥ ध्यान अगनी परकाशके, होम देहि ते मांहि ॥ ३० ॥ ज्युं दारु के गंजकुं, नर नहि शके उठाय ॥ तनक[4] आग संजोग ते, छिन एकमें उड जाय ॥ ३१ ॥ देह सहित परमातमा, एह अचरीजकी वात ॥ राग द्वेषके त्याग ते, करम शक्ति जरी जात ॥ ३२ ॥ परमातम के भेद द्वय, निकल सगल परवान ॥ सुख अनंतमें एकसे कहेवे के द्वय थाय ॥ ३३ ॥ भाइ एह परमातमा, सोहं तुममें याहि ॥ अपणि भक्ति संभारके लिखा वग देतांहि ॥ ३४ ॥ राग द्वेष कुं त्यागके, धरी परमातम ध्यान ॥ युं पावे सुख सास्वत, भाइ इम कल्यान ॥ ३५ ॥ परमातम छत्रीसी को, पढियो प्रीति संभार ॥ चिदानंद तुम प्रति लखी आतम के उद्धार ॥ ३६ ॥ इति.

---

१ मूळ. २ पीड, आपदा. ३ ललोपतो कर्ये, खेद मात्र धारवाथी कंइ वळवानुं नथी, ते माटे तो प्रवळ पुरुषार्थनी जरुर छे. ४ तणखो, अल्प मात्र.

अथ श्री अमृतवेलीनी सज्झाय.

चेतन ज्ञान अजुवालीयें, टालीयें मोह संतापरे, चित्त डमडोलतुं वालीयें, पालीयें सहज गुण आपरे ॥ चे० ॥ १ ॥ उपशम अमृत रस पीजीयें, कीजीयें साधु गुणगानरे, [1]अधमवयणें नवि खीजीयें, दीजीयें सज्जनने मानरे. ॥ चे० ॥ २ ॥ क्रोध [2]अनुबंध नवि राखीयें भाखीयें वयण मुखे साचरे; समकित रत्न रुचि जोडीयें, छोडीयें कुमति मति काचरे ॥ चे० ॥ ३ ॥ शुद्ध परिणामने कारणें, चारनां शरण धरें चित्तरे, प्रथम तिहां शरण अरिहंतनुं, जेह जगदीश जग [3]मित्तरे ॥ चे० ॥ ४ ॥ जे समोसरणमां [4]राजतां, भांजतां भविक संदेहरे; धर्मना वचन वरसे सदा, पुष्करावर्त्त जिम मेहरे ॥ चे० ॥ ॥ ५ ॥ शरण बीजुं भजे सिद्धनुं, जे करे कर्म [5]चकचूररे; भोगवे राज शिवनगरनुं, ज्ञान आनंद भरपुररे ॥ चे० ॥ ६ ॥ साधुनुं शरण त्रीजुं धरे, जेह साधे शिव पंथरे; मूल उत्तर गुण जे वर्या, भवतर्या भाव [6]निग्रंथरे ॥ चे० ॥ ७ ॥ शरण चोथुं करे धर्मनुं, जेहमां [7]वर दया भावरे, जे सुखहेतु जिनवर कह्युं, पापजल तारवा नावरे ॥चे० ८ ॥ चारनां शरण ए पडिवजे, वली भजे भावना शुद्धरे; [8]दुरित सवि आपणां निंदिये, जेम होये संवर वृद्धिरे ॥ चे० ॥ ९ ॥ इहभव

१ नीच, २ परंपरा, ३ मित्र, ४ शोभतां, ५ क्षय, ६ साधु, ७ प्रधान, ८ दुष्कर्म.

परभव आचर्यां, पाप अधिकरण मिथ्यातरे; जेह जिनाशातनादिक घणां, निंदिये तेह गुण घातरे ॥ चे० ॥ १० ॥ गुरुतणां वचन ते अवगणी, गुंथिया आप मत जालरे, वहुपरे लोकने भोलव्यां, निंदिये तेह जंजालरे ॥ चे० ॥ ११ ॥ जेह हिंसा करी आकरी, जेह बोल्या [1]मृषावादरे, जेह परधन हरी हरखीयां, कीधलो काम उन्मादरे ॥ चे० ॥ १२ ॥ जेह धन धान्य मूर्छा धरी, सेविया चार कषायरे; रागने द्वेषने वश हुआ, जे कीयो कलह उपायरे ॥ चे० ॥ १३ ॥ जूठ जे आल परने दियां, जे कर्यां [2]पिशुनता पापरे, रति अरति निंद माया मृषा, वलिय मिथ्यात्व संतापरे ॥ चे० ॥ १४ ॥ पाप जे एहवां सेवीयां, तेह निंदिये त्रीहुं कालरे, सुकृत अनुमोदना कीजियें, जिम होये कर्म विसरालरे ॥ चे० ॥ १५ ॥ विश्व उपगार जे जिन करे, सार जिन नाम संयोगरे, ते गुण तास अनुमोदिये, पुण्य अनुबंध शुभ योगरे ॥ चे० ॥ १६ ॥ सिद्धनी सिद्धता कर्मना, क्षय थकी उपनी जेहरे, जेह आचार आचार्यनो, [3]चरण वन सिंचवा मेहरे ॥ चे० ॥ १७ ॥ जेह [4]उवझायनो गुण भलो, सूत्र सज्झाय परिणामरे, साधुनी जे वळी साधुता, मूल उत्तर गुण धामरे ॥ चे० ॥ १८ ॥ जेह विरति देश श्रावक तणी, जे समकित सदाचाररे; समकित द्रष्टि सुरनर तणी, तेह अनुमोदिये साररे ॥ चे० ॥ १९ ॥ अन्यमां पण दयादिक गुणा, जेह जीन वचन अनुसाररे; सर्व ते

---

१ असत्य वचन, २ चाडीयापणुं, ३ चारित्र, ४ उपाध्याय.

चित्त अनुमोदियें, समकित बीज निरधाररे ॥ चे० ॥ २० ॥ पा नवी तीव्र भावे करी, जेहने नवी भव रागरे; उचित स्थिति जे सेवे सदा, तेह अनुमोदवा लागरे ॥ चे० ॥ २१ ॥ थोडलो पण गु परतणो, सांभळी हर्ष मन आणरे; दोप लव पण निज देखतां, निज गुण निज आतमा जाणरे ॥ चे० ॥ २२ ॥ उचित व्यवहार अव- लंबने, एम करी स्थिर परिणामरे; भावियें शुद्ध नय भावना, [1]पा- वनाशय तणुं ठामरे ॥ चे० ॥ २३ ॥ देह दमन वचन पुद्गळ थ- की, कर्मथी भिन्न तुज रुपरे; अक्षय अकलंक छे जीवनुं, ज्ञान आनंद स्वरुपरे ॥ चे० ॥ २४ ॥ कर्मथी कल्पना उपजे, पवनथी जेम जल- धि वेलरे; रुप प्रगटे सहज आपणुं, देखतां द्राष्टि स्थिर मेलरे ॥ चे० ॥ २५ ॥ धारतां धर्मनी धारणा, मारतां मोह वड चोररे; ज्ञान रुची वेल विस्तारतां, वारतां कर्मनुं जोररे ॥ चे० ॥ २६ ॥ राग विष दोष उतारतां, जारतां द्वेष रस शेषरे; पूर्व मुनि वचन संभारतां, [2]सारतां कर्म निःशेषरे ॥ चे० ॥ २७ ॥ देखीयें मार्ग शिव नगर- नो, जे उदासिन परिणामरे; तेह अणछोडतां चालियें, पामियें जीम परम धामरे ॥ चे० ॥ २८ ॥ श्री नय विजय गुरु शिष्यनी, शिख- डी अमृतवेलरे; एह जे चतुर नर आदरे, ते लहे सुयश रंगरेलरे ॥ ॥ चे० ॥ २९ ॥

॥ इति श्री हितशिक्षा सज्झाय समास ॥

१ पवित्र इरादो, २ नाश करता.
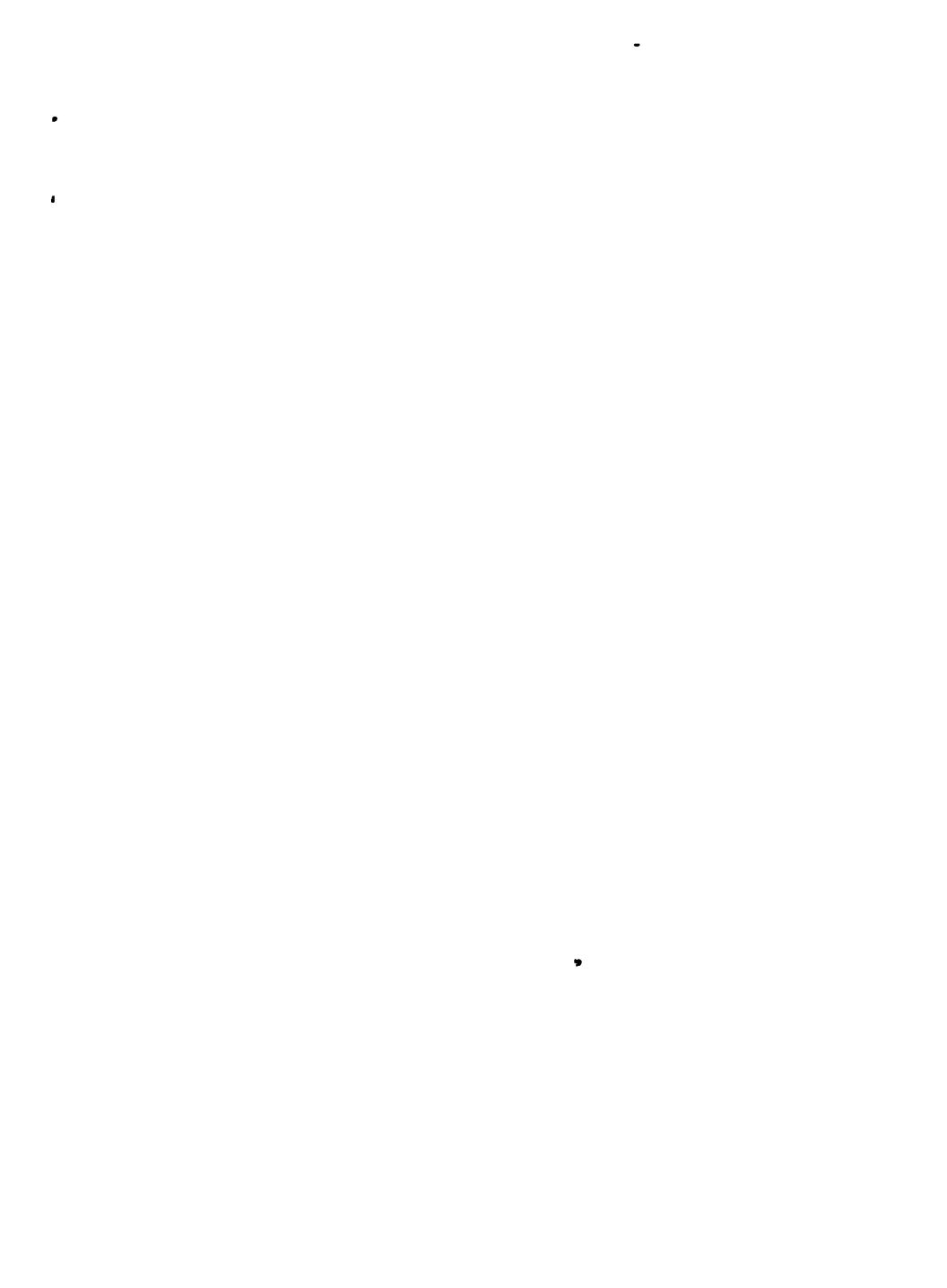
श्री जैन हितोपदेश भाग त्रीजो.

मंगलाचरण रुप.

श्री हेमचंद्राचार्य विरचित श्री महावीरजिन स्तोत्र सारांश.

---

१. अध्यात्म वेदीने पण पराकाष्टिथी प्राप्य विद्वानोने पण वचन अगोचर अने चर्म चक्षुने प्रगट न देखाय एवा श्री वर्धमान प्रभुनी स्तुति करवा प्रयत्न करुंछुं.

२. हे प्रभु तारी स्तुति करवा योगीजनो पण असमर्थ छे; तो मारा जेवानुं तो केहवुंज शुं ? परंतु गुणानुराग तो तेओनी पेरे मारे पण निश्चल छे. आवो निश्चय करीने तारी स्तुति करतो हुं पोते मूर्ख छतां अपराधी ठरतो नथी.

३. गंभीर अर्थवाळी श्री सिद्धसेन सूरिनी रचेली स्तुतियो क्यां ? अने आ अणकेळवायेली स्तुति क्यां ? तथापि हस्ति नायकना पंथे चालनारो तेनो बाळ गतिमां स्खलना पामतो छतो शोचवा योग्य नथी. केमके ते स्वपितानाज पगोते पगले चालनारो होवाथी अंते पितानी पवित्र पदवी प्राप्त करी शकेज छे.

४. हे जिनेंद्र विविध उपायोवडे आप जे दुष्ट दोषोने दूर करी

१३. छतां जे आ लोको आपना सर्वोत्तम शासननो अनादर करे छे; यातो तेमां गेरविश्वास धारे छे; ते दुषमा काळनो दोष छे, अथवा तो ते तेमना खरेखर उदय प्राप्त थयेला अशुभ कर्मनोज दोष छे.

१४. हजारो गमे वर्षो सुधी तप करो, तथा युगनायुग सुधी योगनी उपासना करो, तोपण आपना पवित्र मार्गने पकड्या विना मोक्षनी इच्छा राखता छतां ते बापडा मोक्षने पामता नथी. माटे मोक्षार्थी सज्जनोए शुद्ध तत्त्वने सम्यग् समजी तेनोज आदर करवो युक्त छे. शुद्ध तत्त्वने बराबर ओळखीने तेनो पूर्ण प्रेमथी स्वीकार करी तेमांज तन्मय थइ रहेनार अवश्य मोक्षने पामी शके छे. आपनी पवित्र भक्तिथी भव्य जनोने दिव्य चक्षुवडे अविरुद्ध मार्गनुं यथार्थ भान तथा प्रतीति थाओ ! तथास्तु ! !

ज्ञानसार सूत्र रहस्य-प्रस्तावना.

जे सहज स्वरूप साधवाने जेवा लक्षथी जिनेश्वर देवे जिन-मतानुयायी जनोने स्व स्व योग्यतानुसारे धर्म साधन करवा फरमाव्युं छे तेनुं संक्षेपथी पण निचोलरूपे स्वरूप आ ग्रंथ उपरथी वारीकीथी जोतां समजाशे. तेथी तत्त्व गवेषी जनोज आ ग्रंथना अधिकारी छे.

आ ग्रंथमां जूदा जूदा ३२ अगत्यना विषयो सबल युक्ति पूर्वक समजाववामां आव्या छे. ते ते विषयोनुं मध्यस्थताथी मनन करतां कोइपण भव्यात्मा विषय-कामनादिकथी व्यावृत्त थइ सहेजे निवृत्ति मार्गे चढे एवुं तेमां सामर्थ्य छे. रागादिक अंतरंग वैरी मात्रनो जय करनार जिनेश्वर देव आत्म कल्याणार्थीओने केवो सन्मार्ग उपदिशे छे, ते आवा ग्रंथथी सहेजे समजी शकाय छे. आ ग्रंथ तत्त्वज्ञाननो एक नमूनो छे. यद्यपि जैनदर्शनमां तत्त्वज्ञान संबंधी सेंकडो ग्रंथो विद्यमान छे, तोपण ते सर्वेमां जे कंइ वक्तव्य छे तेनुं अत्र दोहनरूपे

कथन करेलुं छे, एम उक्त ग्रंथना नाम तथा तद् अंतर्गत विषयो उपरथी समजी शकाय छे. आ विषयोनुं स्वरूप एकाएक तेना सारा संस्कार विना वांचवा मात्रथी समजी शकाय एम नथी माटे तेनुं मनन करवा अने तेम करी जरुर जणाय त्यां गुरु गम्य लही समजवा दरेक कल्याणार्थीने प्रथम भलामण छे. निश्चय अने व्यवहार ए बंने मार्ग जिनोपदिष्ट छे. व्यवहार मार्गे थइने निश्चय मार्ग साधी शकाय छे. शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्रमां एकता पामी—तन्मय थइ जवुं ए निश्चय मार्ग छे. अथवा विभावने वमी—परस्पृहाने तजी स्वभाव रमणी थवुं, स्वरूपस्थ थइ रहेवुं, तेज निश्चय मार्ग छे; तेने पमाडनार व्यवहार मार्ग छे. ते व्यवहारनी उपेक्षा करनार उभय भ्रष्ट थायछे, जे माटे आ ग्रंथकारज अन्य स्थळे कहे छे के—

निश्चय दृष्टि हृदय धरीजी, जे पाले व्यवहार ॥
पुन्यवंत ते पामशेजी, भव समुद्रनो पार.
॥ मन मोहन जिनजी० ॥

आ अपूर्व ग्रंथना आदर पूर्वक अभ्यासथी भव्यात्माओ अक्षय सुखना अधिकारी थाओ ! एम इच्छी आ प्रस्तावना पूर्ण करुं छुं.

लेखक स्वपर हितकांक्षी,
कर्पूरविजयजी.

श्री जैनहितोपदेश भाग ३ जो.

॥ ज्ञानसार सूत्र ॥

रहस्यार्थ साथे.

१ पूर्णता—अष्टक.

ऐंद्र श्री सुख मग्नेन ॥ लीलालग्नमिवाखिलम् ॥
सच्चिदानंदपूर्णेन ॥ पूर्णं जगदवेक्ष्यते ॥ १ ॥
पूर्णता या परोपाधेः ॥ सा याचितक मंडनं ॥
या तु स्वाभाविकी सैव ॥ जात्यरत्न विभानिभा ॥२॥
अवास्तवी विकल्पैः स्यात् ॥ पूर्णताब्धे रिवोर्मिभिः ॥
पूर्णानंदस्तु भगवाँ ॥ स्तिमितो दधि सन्निभः ॥ ३ ॥
जागर्त्ति ज्ञान दृष्टि श्चेत् ॥ तृष्णा कृष्णाऽहिजांगुली ॥
पूर्णानंदस्य तत्किंस्या ॥ द्दैन्य वृश्चिक वेदना ॥ ४ ॥
पूर्यन्ते येन कृपणा ॥ स्तदुपेक्षैव पूर्णता ॥
पूर्णानंद सुधा स्निग्धा, दृष्टिरेषा मनीषिणाम् ॥५॥

अपूर्णः पूर्णतामेति, पूर्यमाणस्तु हीयते ॥
पूर्णानंद स्वभावोऽयं ॥ जगदद्भुत दायकः ॥ ६ ॥

परस्वत्व कृतोन्माथा ॥ भूनाथा न्यूनते क्षिणः ॥
स्वस्वत्व सुख पूर्णस्य ॥ न्यूनता न हरे रपि ॥ ७ ॥
कृष्णेपक्षे परिक्षीणे ॥ शुक्ले च समुदंचाति ॥
द्योतते सकला ध्यक्षा ॥ पूर्णानन्द विधोः कला ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. इंद्रनी साहेबी जेवा सुखमां मग्न थयेलो जीव जेम जगत मात्रने सुखमय देखे छे तेम सहज आत्मसुखथी पूर्ण पण जगत मात्रने पूर्णज देखे छे; जेम संपूर्ण सुखी सर्वने सुखमय देखे छे, तेम सहजानंद पूर्ण दृष्टि पण सर्वने पूर्णज देखे छे. अथवा आत्मानी सहज संपत्ति संबंधी स्वभाविक सुखमां मग्न थयेल शुद्ध-ज्ञानानंदी पुरुष, आ समस्त जगतने इंद्र-जाल तुल्य कल्पित क्षणिक पुद्गलिक सुखमां मग्न थइ रहेल देखी, तेथी उदासीन-विरक्त थइ रहे छे. कल्पित पुद्गलिक पूर्णतानो परिहार करनार प्राणी सहज आत्मिक पूर्णता पामी शके छे.

२. परउपाधिवाळी पूर्णता कोइना याची लावेला घरेणा जेवी

छे अने स्वभाविक पूर्णता तो जातिवंत रत्ननी कांति जेवी छे. उपाधिमय खोटी मानी लीधेली पूर्णता चिर स्थायि नहि होवाथी क्षणिक छे, अने खरी आत्मिक पूर्णता तो चिर स्थायी होवाथी अविहड छे. पहेलीने पुंठ देवाथी बीजी खरी पूर्णता पामी शकाय छे.

३. समुद्रमां मोजांनी जेम विकल्प तरंगथी मानेली पूर्णता खोटी छे अने तेवा विकल्प रहित खरी पूर्णतावाला सहजानंदी सत्पुरुष तो शान्त महासागर जेवाज निश्चल होय छे. खोटी पूर्णता तोफानी समुद्र जेवी हालकलोलवाली छे तेथी विश्वास राखवा योग्य नथी अने खरी पूर्णता तो शान्त महासागर जेवी निश्चल होवाथी सर्वदा विश्वासपात्र तथा आदरवा योग्यज छे पूर्ण अधिकारीनेज ते प्राप्त थाय छे.

४. तृष्णारूपी कालानागनु झेर कापवा जांगुली मंत्र जेवी ज्ञानदृष्टी जेने जागी छे एवा पूर्णानंदी पुरुषने दीनतारूपी वींछीडानी वेदना शा हीसाबमां छे? खरी वात छे के जेणे तृष्णाने समूलगी छेदी नांखी छे तेने परनी दीनता करवानु कांइपण प्रयोजन रहुं नथी, तृष्णाना तरंगमां तणातानेज परनी दीनता करवी पडे छे.

५. कृपण लोको जेनाथी संतोष माने छे एवी पुद्गलीक वस्तुओनी उपेक्षा करवी तेज साची पूर्णता छे. विवेकी पंडितनी दृष्टि पूर्ण आनंद अमृतथी भरेली होय छे. एवा स्वाभाविक सुखथी कृपण लोको केवल कमनसीब रहे छे.

यस्य दृष्टिः कृपा वृष्टि, र्गिरः शमसुधा किरः ॥
तस्मै नमः शुभ ज्ञान, ध्यान मग्नाय योगिने ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. पुद्गलानंदीपणुं तजी दइ पांचे इंद्रियो उपर काबु मेलवी पोताना मनने समाधिमां स्थापी केवल ज्ञानामृतनुंज सेवन करनार पुरुष स्वभाव मग्न थयो कहेवाय छे. ज्यां सुधी जीव पोताना मन तथा इंद्रियोने पोतेज वश छे त्यां सुधी ते विभावमां मग्न छे. विभावनो त्याग करनार स्वभावने पामी अनुक्रमे तेमां मग्न थइ शके छे माटे मन तथा इंद्रियोने वंश करवा प्रमाद रहित पवित्र ज्ञानामृतनुंज सेवन करवा अहोनिश उजमाल थइ रहेवुं युक्त छे.

२ ज्ञानामृतना सागर एवा परब्रह्म—परमात्म स्वरुपमां जे मग्न थयेल छे तेने बीजी बाबत हलाहल झेर जेवी लागे छे. जेणे क्षीर समुद्रना जलनुं पान कर्युं होय तेने खारा जलथी तृप्ति केम वळे? जेणे शान्तरसनुं पान कर्युं तेने विषयरस केम गमे?

३. सहजानंद सुखमां मग्न अने जगत स्वरुपने जोनारने परभावनुं करवापणुं घटतुं नथी. तेने तो फक्त सर्वभावमां साक्षीपणुंज होवुं घटे छे. सर्व परभावमां तटस्थपणुं त्यजीने कर्त्तापणुं करवा जतां

स्वभाव हानि थाय छे माटे मोक्षार्थी जीवने सर्वत्र कर्तृत्व अभिमान सर्वथा त्यजी तटस्थपणुंज आदरवुं युक्त छे.

४. परब्रह्ममां मग्न थयेल महापुरुषने पुद्गल संबंधी कथाज प्रिय लागती नथी. तो अनर्थकारी सुवर्णादिक द्रव्यनो संचय के मनोहर स्त्रीयोमां आसक्ति तो होयज शानी ? स्वरुप सुखमां मग्न थयेलने कनक के कामिनी व्हालां लागतांज नथी.

५. जेम जेम दीक्षानो पर्याय वधतो जाय छे तेम तेम साधु पुरुषने चित्तसमाधिमां वधारो थतोज जाय छे एम भगवती सूत्रादिकमां कह्युं छे ते आवा स्वरुप मग्न साधुओमांज घटमान थाय छे. कह्युं छे के १२ बार मासनी दीक्षावाला मुनि अनुत्तर विमानवासी देवना सुखने उल्लंघी जाय छे. ते देव करतां पण आवा मुनि अधिक सुखी होय छे. कारण के दीक्षा वृद्धिथी तेमनी लेश्याशुद्धि थती जाय छे. अने निर्मल लेश्या योगे चित्तनी अधिक प्रसन्नता होय छे, जेथी स्वभाविक सुखमां वधारो थतो जाय छे. १२ मासमां आटलुं सुख थाय छे तो अधिकाऽधिक दीक्षा पर्यायनुं तो कहेवुंज शुं ? प्रबल शान्त वाहितावडे केवल निजस्वरूपमां मग्न थइ रहे छे.

६ ज्ञानामृतमां मग्न थयेलाने जे सुख संभवे छे ते मुखथी कही शकाय तेवुं नथी. प्रियानुं प्रेमालिंगन के चंदननो रस तेवी शीतलतानुं सुख आपी शकेज नहिं. केमके प्रथमनुं सुख सत्य स्वभाविक

६. उपाधिथी रहित पुरुषज सहज पूर्णता पामे छे; पण उपाधिग्रस्त तो तेथी रहितज रहे छे, एवो पूर्णानंदनो सहज स्वभाव जगतने आश्चर्यकारक लागे छे.

७. परने पोतानुं मानवारूप मोहथी उन्मत थएला पृथ्वीपतियो न्युनतानेज देखे छे, गमे तेटली संपत्तिथी संतोष पामताज नथी अने आत्माना स्वभाविक ज्ञानादिक गुण रत्नोनेज पोताना गणी पूर्ण सुख पामेला पुर्णानंदी पुरुष तो इंद्र करतां कोइ रीते न्युन नथीज पुर्णानंदी पुरुप सदा सहजानंदमां मग्नज रहे छे.

८ जेम कृष्णपक्षनो क्षय थये छते अने शुक्लपक्षनो उदय थये छते चंद्रमानी कला सर्व देखे तेवी रीते खीलवा मांडे छे, तेम सर्व पुद्गल परावर्त्तननो अंत थये छते अने चरम पुद्गल परावर्तन मात्र शेष रह्ये छते असत् क्रियाना त्याग पूर्वक सत् क्रियारुचि जागृत थतां सहजानन्द कलानी अनुक्रमे अभिवृद्धिद्वारा अंते पूर्णानंदचंद्र प्रगटे छे.

पूर्णानंदी पुरुप चंद्रनी पेरे साक्षात् स्वभाविक सुख—चंद्रिकाने अनुभवी अनेक भव्य चकोरोने आनंददायक थइ शके छे. भव्य चकोरो पूर्णानंद चंद्रना वचनामृतनुं पान करी करीने पुष्ट बनी आनंद मग्न थइ जाय छे.

॥ २ ॥ मग्नता—अष्टक. ॥

प्रत्याहृत्येंद्रिय व्यूहं ॥ समाधाय मनो निजम् ॥
दधच्चिन्मात्र विश्रांतिं मग्न इत्यभिधीयते ॥ १ ॥
यस्य ज्ञान सुधासिंधौ, परब्रह्मणि मग्नता ॥
विषयांतर संचार, स्तस्य हालाहलोपमः ॥ २ ॥
स्वभाव सुख मग्नस्य, जगत्तत्त्वावलोकिनः ॥
कर्तृत्वं नान्य भावानां, साक्षित्वमवशिष्यते ॥ ३ ॥
परब्रह्मणि मग्नस्य, श्लथा पौद्गलिकी कथा ॥
कामी चामी करोन्मादाः, स्फारा दारादराः क्च ॥ ४ ॥
तेजो लेश्या विवृद्धिर्या, साधोः पर्याय वृद्धितः ॥
भाषिता भगवत्यादौ, सेत्थं भूतस्य युज्यते ॥ ५ ॥
ज्ञान मग्नस्य यच्छर्म, तद्वक्तुं नैव शक्यते ॥
नोपमेयं प्रियः श्लेषै, र्नापि तच्चंदनद्रवैः ॥ ६ ॥
शम शैत्य पुषो यस्य, विप्रुषोपि महाकथा ॥
किं स्तुमो ज्ञान पीयूषे, तत्र सर्वांग मग्नता ॥ ७ ॥

यस्य दृष्टिः कृपा वृष्टि, र्गिरः शमसुधा किरः ॥
तस्मै नमः शुभ ज्ञान, ध्यान मग्नाय योगिने ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. पुद्गलानंदीपणुं तजी दइ पांचे इंद्रियो उपर काबु मेळवी पोताना मनने समाधिमां स्थापी केवल ज्ञानामृतनुंज सेवन करनार पुरुष स्वभाव मग्न थयो कहेवाय छे. ज्यां सुधी जीव पोताना मन तथा इंद्रियोने पोतेज वश छे त्यां सुधी ते विभावमां मग्न छे. विभावनो त्याग करनार स्वभावने पामी अनुक्रमे तेमां मग्न थइ शके छे माटे मन तथा इंद्रियोने वश करवा प्रमाद रहित पवित्र ज्ञानामृतनुंज सेवन करवा अहोनिश उजमाळ थइ रहेवुं युक्त छे.

२. ज्ञानामृतना सागर एवा परब्रह्म—परमात्म स्वरुपमां जे मग्न थयेल छे तेने बीजी बाबत हलाहल झेर जेवी लागे छे. जेणे क्षीर समुद्रना जळनुं पान कर्युं होय तेने खारा जळथी तृप्ति केम वळे? जेणे शान्तरसनुं पान कर्युं तेने विषयरस केम गमे?

३. सहजानंद सुखमां मग्न अने जगत स्वरुपने जोनारने परभावनुं करवापणुं घटतुं नथी. तेने तो फक्त सर्वभावमां साक्षीपणुंज होवुं घटे छे. सर्व परभावमां तटस्थपणुं त्यजीने कर्त्तापणुं करवा जतां

स्वभाव हानि थाय छे माटे मोक्षार्थी जीवने सर्वत्र कर्तृत्व अभिमान सर्वथा त्यजी तटस्थपणुंज आदरवुं युक्त छे.

४. परब्रह्ममां मग्न थयेल महापुरुषने पुद्गल संबंधी कथाज प्रिय लागती नथी. तो अनर्थकारी सुवर्णादिक द्रव्यनो संचय के मनोहर स्त्रीयोमां आसक्ति तो होयज शानी ? स्वरुप सुखमां मग्न थयेलने कनक के कामिनी व्हालां लागतांज नथी.

५. जेम जेम दीक्षानो पर्याय वधतो जाय छे तेम तेम साधु पुरुषने चित्तसमाधिमां वधारो थतोज जाय छे एम भगवती सूत्रादिकमां कह्युं छे ते आवा स्वरुप मग्न साधुओमांज घटमान थाय छे. कह्युं छे के १२ बार मासनी दीक्षावाला मुनि अनुत्तर विमानवासी देवना सुखने उल्लंघी जाय छे. ते देव करतां पण आवा मुनि अधिक सुखी होय छे. कारण के दीक्षा वृद्धिथी तेमनी लेश्याशुद्धि थती जाय छे. अने निर्मल लेश्या योगे चित्तनी अधिक प्रसन्नता होय छे, जेथी स्वभाविक सुखमां वधारो थतो जाय छे. १२ मासमां आटलुं सुख थाय छे तो अधिकाऽधिक दीक्षा पर्यायनुं तो कहेवुंज शुं ? प्रबल शान्त वाहितावडे केवल निजस्वरूपमां मग्न थइ रहे छे.

६ ज्ञानामृतमां मग्न थयेलाने जे सुख संभवे छे ते मुखथी कही शकाय तेवुं नथी. प्रियानुं प्रेमालिंगन के चंदननो रस तेवी शीतलतानुं सुख आपी शकेज नहिं. केमके प्रथमनुं सुख सत्य स्वभाविक

अने अतींद्रिय छे अने मियादिकनुं सुख क्षणिक कृत्रिम अने इंद्रिय गोचर होवाथी विभाविक अने असत्य भ्रमात्मक छे.

७. सहज स्वभाविक शीतलताने पुष्टि करनार ज्ञानामृतना लेश मात्रनुं सुख अपार छे. तो तेमां सर्वांशे निमग्न थइ रहेनार महापुरुषना महिमानुं तो कहेवुंज शुं ?

८. जेनी दृष्टिमांथी करुणारस वर्षी रह्यो छे अने जेनां वचन समतारुपी अमृतनुं सिंचन कर्या करे छे एवा शुभ ज्ञान अने ध्यानमां मग्न थयेला महापुरुषने नमस्कार ! जेनी दृष्टिमां करुणा भरेली छे, तेमज जेनी वाणी अमृत जेवी मीठी अने शीतल छे, तेने नमस्कार !

॥ ३ ॥ स्थिरता—अष्टक ॥

वत्स किं चंचल स्वांतो, भ्रांत्वा भ्रांत्वा विषीदसि ॥
निधिं स्व सन्निधावेव, स्थिरता दर्शयिष्यति ॥ १ ॥
ज्ञान दुग्धं विनश्येत, लोभ विक्षोभ कूर्चकैः ॥
आम्ल द्रव्यादिवाऽस्थैर्या, दिति मत्वा स्थिरो भव ॥२॥
अस्थिरे हृदये चित्रा; वाग्नेत्राकार गोपना ॥
पुंश्चल्या इव कल्याण, कारिणी न प्रकीर्तिता ॥ ३ ॥

अंतर्गतं महाशल्य, मस्थैर्यं यदि नोध्धृतम् ॥
क्रियौषधस्य को दोष, स्तदा गुण मयच्छतः ॥ ४ ॥
स्थिरता वाङ्मनः काये, र्येषा मंगां गितां गता ॥
योगिनः समशीलास्ते, ग्रामेऽरण्ये दिवा निशि ॥ ५ ॥
स्थैर्य रत्न प्रदीपश्चे, द्दीप्रः संकल्पदीपजैः ॥
तद्विकल्पैरलं धूमै, रलं धूमैस्तथाश्रवैः ॥ ६ ॥
उदीरयिष्यसि स्वांता, दस्थैर्य पवनं यदि ॥
समावे धर्म मेघस्य, घटां विघटयिष्यसि ॥ ७ ॥
चारित्रं स्थिरता रूप, मतः सिद्धेष्वपीष्यते ॥
यतं तां यतयो वश्य, मस्या एव प्रसिद्धये ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. स्थिरता आदर्या विना स्वभाविक सुख संप्राप्त थतुं नथी. संपूर्ण स्थिरताना वलेज स्वभाव मग्न थाय छे अने एवा स्वरुप मग्न महापुरुषज पूर्णानंद पामी शके छे. ते विना तो जीव ज्यां त्यां सुखनी भ्रांतिथी मात्र भम्याज करे छे माटे गुरुमहाराज शिष्यने स्थिरता आदरवा उपदेश आपे छे के हे वत्स, तुं अस्थिर चित्तथी अनेक

स्थले भटकी भटकीने शा माटे खेद धारण करे छे? फकत अस्थिरतानु सेवन करवाथी तने सर्व समृद्धि तारा घटमांज देखाशे. स्थिरता विना अनंत गुणनिधान स्व समीपे छतां देखी शकातो नथी.

२. जेम खटाशथी दूध फाटी जइ विनाश पामे छे. तेम अस्थिरता योगे थता अनेक संकल्प विकल्पोथी ज्ञान गुण क्षोभ पामी विनाश पामे छे. अने स्थिरता योगे ज्ञान गुणनी वृद्धि थाय छे एम समजीने तुं स्थिर था.

३. चित्त अस्थिर छते करवामां आवती अनेक प्रकारनी क्रिया कल्याणकारी थती नथी. जेम व्यभिचारिणी स्त्री चतुराइ भरेलां वचन बोले छे. अने घुंमटो ताणीने चाले छे छतां अवळी चालथी तेवी चेष्टा तेणीने हितकारी नथी. तेम चपल चित्तवाळानी पण विविध क्रिया आश्रयी जाणवुं. पतिव्रता स्त्रीनी पवित्र आशयवाळी क्रियानी पेरे स्थिरतावंतनी सर्व उचित क्रिया लेखे पडे छे.

४. ज्यां सुधी अस्थिरतारुपी अंतरनु भारे शल्य उद्धर्युं नथी त्यां सुधी गमे तेवी उत्तम क्रिया पण यथेष्ट फल आपी शकशे नहीं. जेम शरीरनी शुद्धि कर्या बाद लीधेलुं औषध तत्काल गुण करी शके छे. तेम अस्थिरता वाळाना अनुष्टान आश्रयी पण समजवुं.

५. जेमने मन वचन अने कायावडे संपूर्ण स्थिरता व्यापी गइ छे तेवा योगी पुरुषोने गाममां के वनमां दिवसमां के रात्रिमां सम-

भाव वर्ते छे. जेमने सर्वांगे स्थिरता थइ छे तेवा महापुरुषने सर्वत्र समपरिणामज वर्ते छे. खरुं कल्याण पण तेमनुंज थाय छे.

६. जो घटमां एक स्थिरता प्रगटे तो अनेक प्रकारना मलीन संकल्प विकल्प स्वतः उपशमे. केमके मलीन संकल्प विकल्पो अस्थिर मनमांज प्रभवे छे. जेम देदीप्यमान रत्ननो दीपक महेलमां प्रगट्यो होय, तो धूमाडावडे मंदिरने श्याम करी नांखे एवा कृत्रिम दीवा करवानुं प्रयोजनज न रहे, तेम जो मनमंदिरमां एक स्थिरता गुण प्रगट थाय तो तेमां अन्यथा उठता अनेक प्रकारना संकल्प विकल्प स्वयं उपशम पामे अने आत्मानी सहज ज्ञान ज्योति स्थायीपणे प्रसरे जेथी सर्व भावने हस्तामलकनी पेरे देखी शकाय.

७. हे वत्स, जो तुं स्थिरतानो त्याग करीने अस्थिरतानी उदीरणा करीश तो तारी घणी महेनतथी वाधेली समाधि डोलाइ जशे. जेम प्रबल पवनना योगे मेघघटा विखराइ जाय छे तेम संकल्प विकल्प करवाथी पूर्वे महा परिश्रमथी पेदा करेली समाधिनो लोप थइ जाशे. माटे जेम बने तेम सर्व संकल्प विकल्पने शमाविने स्थिरता योगे समाधि सुखमांज मग्न रहेवुं उचित छे. अस्थिरता करवाथी तो प्राप्त थयेली समाधिनो पण नाश थइ जाय छे.

८. आत्म गुणमांज स्थिरता करवी तेनुं नाम भाव चारित्र छे. एवुं निश्चय चारित्र तो सिद्ध भगवानमां पण वर्ते छे. एटले के सिद्ध

३. गमे तेवा संयोगोमां जे समता धारी राखी मुंझाता नथी ते आकाशनी जेम पाप पंकथी लेपाताज नथी. सम विषम संयोगोमां मुंझाइ जे संकल्प विकल्पने वश थइ आर्त्तध्यानमां पडी जाय छे तेज पाप पंकथी लेपाय छे.

४. संसारमां रह्या छतां ठेकाणे ठेकाणे संसारनु नाटक जोइने जे खेद पामता नथी तेवा मध्यस्थ दृष्टि मोहथी लेपाता नथी. संसारमां विचित्र संयोगयोगे पण जे समभाव तजता नथी अने सर्वत्र समानभाव राखे छे एवा समभावीने समताना बलथी मोह पराजित करी शकतो नथी.

५. मोहनी प्रबलताथी विविध विकल्पोने वश थइने जीव दीर्घ संसार परिभ्रमण करे छे. जेम उपराउपर दारुना प्याला पीवाथी परवश थयेला जीव अनेक प्रकारनी कुचेष्टा कर्या करे छे तेम मोहना प्रबल वेगमां तणाता जीवना महा माठा हाल थाय छे माटे सुखना अर्थी जीवे मोह मदिराथी दूर रहेवा समताने धारी संकल्प विकल्पोने शमावी देवा यत्न करवो युक्त छे. एम करवाथी सहज स्वभाविक निर्विकल्प शान्त सुखनी प्राप्ति थइ शके छे. प्रबल मोहने पराधीन थयेलो प्राणी स्वप्नमां पण एवुं सुख पामी शकतो नथी.

६. आत्मानु स्वभाविकरूप तो स्फटिक रत्न जेवुं निर्मल छे. परंतु पुद्गलना संबंधथी जीव जड जेवो थइ तेमां मुंझाइ जाय छे.

जेम स्फटिक रत्नने रातुं पीळुं लीलुं के कालुं फूल लगाडवाथी ते लगाडेला फूलना प्रसंगथी आखुं रत्न तद्रूपज थइ जाय छे, तेम जीव पण उपाधि संबंधथी जड जेवो बनी जाय छे. पुण्य पाप राग द्वेषादिक जीवने केवल उपाधिरूप छे. ज्यां सुधी जीवने तेनो संबंध रहे छे त्यां सुधी ते तेनुं शुद्ध स्वरूप संपूर्ण रीते प्रगट करी शकतोज नथी. पण तेनो संपूर्ण वियोग थये छते आत्मानु शुद्ध स्वरूप सहज प्रगट थइ रहे छे.

७ मोहना क्षयथी सहज आत्मसुखने साक्षात् अनुभवतां छता पुद्गलिक सुखने साचुं मिष्ट माननारा लोकोनी पासे तेनुं कथन करतां आश्चर्य लागे छे. केमके पुद्गलानंदी जीवने आत्मिक सुखनो साक्षात् अनुभव थइ शकतो नथी. अने साक्षात् अनुभव थया विना तेनी प्रतीति पण आवी शकती नथी. तेथी निर्मोही पुरुष अधिकार मुजबज उपदेश आपे छे.

८ जे महाशय शुद्ध समज पूर्वक समस्त सदाचारने सेववा उजमाल रहे छे ते प्रयोजनविनाना परभावमां शा माटे मुंझाय ? जेम निर्मल आरीसामां वस्तुनुं यथार्थ दर्शन थइ शके छे तेम निर्मल ज्ञान दर्पणयोगे आत्मा स्वकर्तव्य सम्यग् समजीने तेनुं निरभिमानताथी आराधन करी शके छे. निर्मल ज्ञानवडे स्व कर्तव्यनुं स्वरूप निर्धारीने जे शुभाशय तेनुं सेवन करे छे ते अवश्य फतेहमंद नीवडे छे.

भगवाने पण स्थिरता—चारित्रनो संपूर्ण स्वीकार करेलो छे. एम सम-
र्जीने स्थिरता गुणने प्रगट करवा माटे सर्व मुनियोए अवश्य उद्यम
करवो युक्त छे. स्थिरता गुण विनानु चारित्र पण निष्फलप्रायज छे.

॥ ४ ॥ निर्मोह—अष्टक ॥

अहंममेति मंत्रोऽयं, मोहस्य जगदान्ध्यकृत् ॥
अयमेवहि नञ् पूर्वः, प्रतिमंत्रोऽपि मोहजित् ॥ १ ॥
शुद्धात्मद्रव्य मेवाऽहं, शुद्ध ज्ञानं गुणो मम ॥
नान्योऽहं न ममान्ये चे, त्यदो मोहास्त्र मुल्वणम् ॥ २ ॥
यो न मुह्यति लग्नेषु, भावेष्वौदयिकादिषु ॥
आकाशमिव पंकेन, नासौ पापेन लिप्यते ॥ ३ ॥
पश्यन्नेव परद्रव्य, नाटकं प्रतिपाटकम् ॥
भवचक्र पुरस्थोऽपि, नामूढः परि खिद्यते ॥ ४ ॥
विकल्प चषकै रात्मा, पीत मोहासवो ह्ययम् ॥
भवोच्चताल मुत्ताल, प्रपंच मधितिष्ठति ॥ ५ ॥
निर्मल स्फटिक स्येव, सहजं रूपमात्मनः ॥
अध्यस्तोपाधि संबंधो, जड स्तत्र विमुह्यति ॥ ६ ॥

अनारोप सुखं मोह, त्यागादनुभवन्नपि ॥
आरोप प्रिय लोकेषु, वक्तुमाश्चर्यवान्न भवेत् ॥ ७ ॥
यश्चिद्दर्पण विन्यस्त, समस्ताचार चारुधीः ॥
क्व नाम स पर द्रव्ये, ऽनुपयोगि निमुह्यति ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. हुं अने मारुं ए मोहनो महामंत्र छे. तेणे आखा जगतने आंधळुं कर्युं छे. पण जो तेनी पूर्वे एक नकार जोडयो होय तो "नहि हुं अने नहि मारुं" एवो प्रतिमंत्र थाय छे अने तेथी सामा मोहनोज पराजय थाय छे. मोहे पोताना मंत्रथी जगत मात्रने वश करी लीधेलुं छे पण जो सद्गुरु कृपाथी प्रतिमंत्र हाथ लागे तो तेथी समूलगो मोहनोज पराभव थइ शके छे. माटे मोहनो पराजय करवा माटे मोक्षार्थीए ते प्रतिमंत्रनेज सेववो युक्त छे. ममताने मुकीने समताने सेववाथी उक्त मंत्र सिद्ध थइ शके छे.

२. शुद्ध आत्मद्रव्य एज हुं छुं अने शुद्ध ज्ञानगुण एज मारुं सर्वस्व छे. पण आ देह ए हुं नहि तेमज लक्ष्मी कुटुंब विगेरे मारुं नथी एवी शुद्ध समज मोहनो विनाश करवा समर्थ शस्त्ररूप नीवडे छे.

३. गमे तेवा संयोगोमां जे समता धारी राखी मुंझाता नथी ते आत्माओ जेम पाप पंकथी लेपाताज नथी. सम विषम संयोगोमां मुंझाइ जे संकल्प विकल्पने वश थइ आर्त्तध्यानमां पडी जाय छे तेज पाप पंकथी लेपाय छे.

४. संसारमां रह्या छतां ठेकाणे ठेकाणे संसारनुं नाटक जोइने जे खेद पामता नथी तेवा मध्यस्थ दृष्टि मोहथी लेपाता नथी. संसारमां विचित्र संयोगयोगे पण जे समभाव तजता नथी अने सर्वत्र समानभाव राखे छे एवा समभावीने समताना बलथी मोह पराजित करी शकतो नथी.

५. मोहनी प्रबलताथी विविध विकल्पोने वश थइने जीव दीर्घ संसार परिभ्रमण करे छे. जेम उपराउपर दारुना प्याला पीवाथी परवश थयेला जीव अनेक प्रकारनी कुचेष्टा कर्या करे छे तेम मोहना प्रबल वेगमां तणाता जीवना महा माठा हाल थाय छे माटे सुखना अर्थी जीवे मोह मदिराथी दूर रहेवा समताने धारी संकल्प विकल्पोने शमावी देवा यत्न करवो युक्त छे. एम करवाथी सहज स्वभाविक निर्विकल्प शान्त सुखनी प्राप्ति थइ शके छे. प्रबल मोहने पराधीन थयेलो प्राणी स्वप्नमां पण एवुं सुख पामी शकतो नथी.

६. आत्मानुं स्वभाविकरूप तो स्फटिक रत्न जेवुं निर्मल छे. परंतु पुद्गलना संबंधथी जीव जड जेवो थइ तेमां मुंझाइ जाय छे.

जेम स्फटिक रत्नने रातुं पीळुं लीलुं के काळुं फूल लगाडवाथी ते लगाडेला फूलना प्रसंगथी आखुं रत्न तद्रूपज थइ जाय छे, तेम जीव पण उपाधि संबंधथी जड जेवो बनी जाय छे. पुण्य पाप राग द्वेषादिक जीवने केवळ उपाधिरूप छे. ज्यां सुधी जीवने तेनो संबंध रहे छे त्यां सुधी ते तेनुं शुद्ध स्वरूप संपूर्ण रीते प्रगट करी शकतोज नथी. पण तेनो संपूर्ण वियोग थये छते आत्मानु शुद्ध स्वरूप सहज प्रगट थइ रहे छे.

७ मोहना क्षयथी सहज आत्मसुखने साक्षात् अनुभवतां छता पुद्गलिक सुखने साचुं मिष्ट माननारा लोकोनी पासे तेनुं कथन करतां आश्चर्य लागे छे. केमके पुद्गलानंदी जीवने आत्मिक सुखनो साक्षात् अनुभव थइ शकतो नथी. अने साक्षात् अनुभव थया विना तेनी प्रतीति पण आवी शकती नथी. तेथी निर्मोही पुरुष अधिकार मुजबज उपदेश आपे छे.

८ जे महाशय शुद्ध समज पूर्वक समस्त सदाचारने सेववा उजमाळ रहे छे ते प्रयोजनविनाना परभावमां शा माटे मुंझाय? जेम निर्मल आरीसामां वस्तुनुं यथार्थ दर्शन थइ शके छे तेम निर्मल ज्ञान दर्पणयोगे आत्मा स्वकर्तव्य सम्यग् समजीने तेनुं निरभिमानताथी आराधन करी शके छे. निर्मल ज्ञानवडे स्व कर्तव्यनुं स्वरुप निर्धारीने जे शुभाशय तेनुं सेवन करे छे ते अवश्य फतेहमंद नीवडे छे.

॥ ५ ॥ ज्ञानाष्टक ॥

मज्जत्यज्ञ किलाज्ञाने, विष्टायामिव शूकरः ॥
ज्ञानी निमज्जति ज्ञाने, मराल इव मानसे ॥ १ ॥
निर्वाण पद मप्येकं, भाव्यते यन्मुहुर्मुहुः ॥
तदेव ज्ञान मुत्कृष्टं, निर्बंधो नास्ति भूयसा ॥ २ ॥
स्वभाव लाभ संस्कार, कारणं (स्मरणं) ज्ञान मिष्यते॥
ध्यान्ध्यमात्रमतस्त्वन्य, त्तथा चोक्तं महात्मना ॥३॥
वादांश्च प्रतिवादांश्च, वदंतोऽनिश्चितांस्तथा ॥
तत्त्वान्तं नैव गच्छंति, तिलपीलकवद्गतौ ॥ ४ ॥
स्वद्रव्य गुण पर्याय, चर्या वर्या परान्यथा ॥
इति दत्तात्म संतुष्टि, र्मुष्टि ज्ञानस्थितिर्मुनेः ॥ ५ ॥
अस्तिचेद् ग्रंथिभिद् ज्ञानं, किं चित्रैस्तंत्रयंत्रणैः ॥
प्रदीपाः क्वोपयुज्यन्ते, तमोघ्नी दृष्टिरेवचेत् ॥ ६ ॥
मिथ्यात्वशैलपक्षच्छिद्, ज्ञानदंभोलिशोभितः ॥
निर्भयः शक्रवद्योगी, नंदत्यानंदनंदने ॥ ७ ॥

पीयूषमसमुद्धोत्थं, रसायनमनौषधम् ॥
अनन्या पेक्ष मैश्वर्यं, ज्ञानमाहुर्मनीषिणः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. निर्मल ज्ञानवडे वस्तुतत्त्वनो निर्धार करीने जे सदाचारने सेवे छे तेज मोहनो विनाश करी शके छे. माटे निर्मल ज्ञान गुण आदरवा शास्त्रकार आग्रह पूर्वक कहे छे जेम भूंड विष्टामां मग्न रहे छे तेम मूढ माणस अज्ञानमांज मग्न रहे छे पण ज्ञानी पुरुष तो जेम हंस मानस जलमां मग्न रहे छे तेम निर्मल ज्ञान गुणमांज मग्न रहे छे. ज्ञानी पुरुष कदापि ज्ञानमां अरति धारतो नथी. अथवा ज्ञानज तेनो खरो खोराक होवाथी ते तेने अत्यंत आदरथी सेवे छे.

२. जेनाथी राग द्वेषनो अत्यन्त क्षय थवा पूर्वक मोक्षपदनी प्राप्ति थइ शके एवा एक पण पदनो वारंवार अभ्यास करी तेमां तन्मय थवुं तेज ज्ञान श्रेष्ठ छे. 'मारुष मातुष' जेवा एक पदथी पण कल्याण साधी शकाय छे. तेवाज वधारे पद होय तेनुं तो कहेवुंज शुं? पण भारभूत एवा शुष्क ज्ञान मात्रथी कंइ कल्याण नथी.

३. जेथी स्वभाव निर्मल थाय एटले आत्म परिणति सुधरती जाय एवुंज ज्ञान मेलववुं सारुं छे. बाकीनुं ज्ञान तो केवल बोजारूप छे, एवुं शास्त्रकार कहे छे.

४. अनिश्चित वादविवादने वदतां थकां, जेम घांचीनो बळद गमे तेटलुं चाले तोपण तेनो अंत आवतो नथी, तेम तत्त्वनो पार पामी शकातोज नथी. साध्य दृष्टिथी धर्मचर्चा करतां के नम्रपणे तत्त्व कथन के श्रवण करतां केवल हित प्राप्तिज थाय छे. माटे शुष्क वादविवाद तजीने केवल तत्त्व खोजना करवी.

५. आत्म द्रव्यना गुण पर्यायनी पर्यालोचना करवीज श्रेष्ठ छे, बीजी नकामी वातमां वखत गमाववो युक्त नथी. एवी समज पूर्वक सहज संतोष धारनार मुनि मुष्टि ज्ञाननी स्थितिवाला गणाय छे. मुष्टिज्ञान संक्षिप्त छतां सर्वोत्तम छे. तेथी सर्व परभावथी विरमी मुनि सहज स्वभाव रमणी बने छे.

६. मिथ्यात्वने भेदी समकित प्राप्त करावे एवुं सम्यग् ज्ञान जो प्रगट थाय तो ते सारभूत ज्ञान पामी बीजा शास्त्र परिश्रमनुं कंइ प्रयोजन नथी. जो स्वभाविक दृष्टिथी अंधकार दूर थतो होय तो कृत्रिम दीवानुं शुं प्रयोजन छे ? साचो दीवो जेना घटमांज प्रगट्यो छे तेने सहज स्वभाविक प्रकाश मल्याज करे छे तेथी ते मिथ्यात्व अंधकारनो विनाश करी आनंद मग्नज रहे छे. सारभूत ज्ञान विना लाखोगमे केशकारक शास्त्र विलोडणथी शुं वळवानुं ? चोखी दृष्टिवालाने एक पण दीवो बस छे, अने अंध दृष्टिने हजारो दीवाथी पण उपकार थइ शकवानो नथी. सम्यग् ज्ञानवान् सम्यग् दर्शन या समकित रत्नना प्रभावथी दिव्यदृष्टिज कहेवाय छे.

७. मिथ्यात्व शैलने छेदवा समर्थ ज्ञानरुप वज्रथी शोभित मुनि निर्भय छतां शक्र इंद्रनी पेरे आनंद नंदनमां विचरे छे. रत्नत्रयी मंडित मुनि निर्भय छतां सहजानन्दमां मस्त रहे छे. तेवा योगी पुरुषने संयममां अरति थवा पामती नथी.

८ प्राज्ञ पुरुषो कहे छे के ज्ञान, समुद्रथी नहि उत्पन्न थयेलुं अभिनव अमृत छे. औषध विनानुं अपूर्व रसायण छे. अने सर्वथी श्रेष्ट एवुं अनुपम ऐश्वर्य छे. भाग्यवंत भव्योज तेनो लाभ लही शके छे. भाग्यहीनने ते प्राप्त थइ शकतुंज नथी. सौभागी भमरो तेनो मधुर रस पीवे छे. अने दुर्भागी तेनाथी दूरज रहे छे.

॥ ६ ॥ शमाष्टकम् ॥

विकल्प विषयोत्तीर्णः, स्वभावालंबनः सदा ॥
ज्ञानस्य परिपाको यः, सः शमः परिकीर्त्तितः ॥ १ ॥
अनिच्छन् कर्म वैषम्यं, ब्रह्मांशेन समं जगत् ॥
आत्माभेदेन यः पश्ये, दसौ मोक्षंगमी शमी ॥ २ ॥
आरुरुक्षुर्मुनिर्योगं, श्रयेद्बाह्यक्रियामपि ॥
योगारूढः शमादेव, शुद्ध्यत्यंतर्गतक्रियः ॥ ३ ॥

ध्यानवृष्टेर्दया नद्याः, शमपूरे प्रसर्पति ॥
विकारतीरवृक्षाणां, मूलादुन्मूलनं भवेत् ॥ ४
ज्ञानध्यान तपः शील, सम्यक्त्व सहितो ऽप्यहो ॥
तं नाप्नोति गुणं साधु, यं प्राप्नोति शमान्वितः ॥ ५ ॥
स्वयंभूरमणस्पर्द्धि, वर्द्धिष्णु समता रसः ॥
मुनिर्येनोपमीयेत, कोपिनासौ चराचरे ॥ ६ ॥
शमसूक्त सुधासिक्तं, येषां नक्तं दिनं मनः ॥
कदापि ते न दह्यन्ते, रागोरगविषोर्मिभिः ॥ ७ ॥
गर्जद्ज्ञान गजोत्तुंग, रंगद् ध्यान तुरंगमाः ॥
जयन्ति मुनिराजस्य, शमसाम्राज्य संपदः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१ संकल्प विकल्पने शमावी आत्माने सहज शीतलता सदा आपनार एवा शमगुणने सम्यग् ज्ञानना उत्तम फलरुपे ज्ञानी पुरुषोए वखाणेल छे. उपशमवंत विविध विकल्प जाळथी मुक्त होइ शके एवा परिपक ज्ञानना बलथी सहज स्वहित साधी शके छे.

२ जे शान्त आत्मा, कर्मनी विषमताने नहि लेखतां, सर्व जगजंतुने सहज सुख मेलववा एक सरखी सत्ता होवाथी, आत्म समान लेखे छे, ते अवश्य मोक्षगामी थाय छे अर्थात् जेने सर्वत्र सम भाव व्याप्यो छे ते जरूर मोक्ष सुख साधी शके छे.

३ योगारुढ थवा इच्छनार साधुने तो बाह्य (व्यवहार) क्रियानी अपेक्षा रहे छे. पण योगारुढ मुनि तो अंतर क्रियानो आश्रय करनार होवाथी केवल शमगुणथीज शुद्ध थाय छे. प्रथम तो योगनी चपलता वारवा अने सहज स्थिरता साधवा आप्त पुरुषे उपदेशेली व्यवहारिक क्रिया करवी पडे छे पण अनुक्रमे अभ्यास वले मन वचन अने कायानी चपलता शान्त थये छते मुनिने उत्तम क्षमादिक सहज शुद्धक्रिया योगे अंतर शुद्धि थइ शके छे. तेवी योग्यता पामवा प्रथम अभ्यास करी अंते सहज क्षमादिक अंतरंग क्रियाथी आत्म शुद्धि साधवी सुलभ पडे छे. योग्यता विना कार्य साधवा जतां अनेक मुशीबतो आवी पडे छे.

४. ध्याननी वृष्टि थवाथी, शुद्ध करुणारुपी नदी शमपूर्थी एवी तो छलकाय जाय छे के तेना कांठे रहेला विविध विकार–वृक्षो मूलथीज वसडाय जाय छे. ज्यारे निर्मल ध्यानामृतनी वृष्टि थाय छे त्यारे शुद्ध अहिंसक भावनी एवी तो अभिवृद्धि थाय छे के तेना शान्त रसना प्रबल प्रवाहथी सर्व प्रकारना विषयविकारो समूलगा वसडाइ जाय छे, तेथी तेना कटुक फलनी भीति रहेतीज नथी.

विवेकद्विपहर्यक्षैः, समाधि धन तस्करैः ॥
इंद्रियैर्नजितोयोऽसौ, धीराणां धुरि गण्यते ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जो तुं संसार परिभ्रमणना दुःखथी डरतो होय अने अखंड एवुं मोक्ष सुख स्वाधीन करवा इच्छतो होय तो इंद्रिय वर्गने दमवा प्रबल प्रयत्न कर. विविध विषय सुखनी वासना मोक्षार्थी जीवने पण बाधक थाय छे. माटे प्रथमज विविध विषयमां भटकता मन अने इंद्रियोने दमीने वश करवा युक्त छे. अन्यथा तेओने वश पडि रहेवाथी उद्धत घोडानी पेठे तेओ जरूर जीवने विषम एवा दुर्गतिना मार्गमांज खेंची जायछे. पण जो तेमनेज आगम युक्तिथी वश करी लेवामां आवशे तो आत्मा अंते अखंड सुख साधी शकशे.

२. तृष्णा-जलथी परिपूर्ण एवा इंद्रिय-क्याराथी वृद्धि पामेला विकार विषयवृक्षो जीवने महा मूर्छा उपजावे छे. जेम जेम जीव विविध विषयने सेवे छे तेम तेम तेनी तृष्णा सतेज थाय छे, अने अंते असंतुष्ट रही आर्त्तध्यान योगे महाविकारने ते भजे छे. एम समजी संतोषने सेवनारा जीवो मन अने इंद्रियो उपर अच्छो काबु मेळवी अंते अवश्य अखंड सुख साधी शके छे, बाकी कामान्ध तो

क्षणिक सुख माटे अनंत अने अक्षय सुखने गमावी अनंत अपार दुःखनेज व्होरी लेछे. संतोषी जीव सर्व दुःखने सहजमां जलांजली दइ अपार सुखमां अवगाही रहे छे, एम समजी संतोष गुणने सेववो युक्त छे.

३. जेम हजारो गमे नदीओथी पण समुद्र पूरातो नथी तेम गमे तेटला विषय संयोगथी पण इंद्रियवर्ग धरातो नथी, जेम इंधनथी आग उलटी वधे छे तेम अनुकूल विषय योगे उलटी तृष्णा वृद्धिगत थाय छे माटे सहज संतोषी थवुं युक्त छे. जेम जेम संतोष गुण वाधे छे तेम तेन सहज सुखनी वृद्धि थाय छे.

४. संसारथी उद्वेग पामेला जीवने पण इंद्रियो विषय–पाशथी वांधी लेछे तो संसारमां रच्या पच्या रहेनारनुं तो कहेवुंज शुं? तेवाने तो ते सदा संताप्याज करे छे पण मोक्षार्थी जीवने पण लाग मळ्ये छोडती नथी. केमके ते मोहराजानी चाकरडीओज छे, माटे मोक्षार्थीए तेमनाथी वधारे चेतता रहेवुं युक्त छे.

५. इंद्रिय संबंधी विषय सुखमां मुंझायेलो जीव धनने अर्थे डुंगरनी मटोडी जोवे छे पण आत्म समीपेज रहेलुं शास्वतुं ज्ञान–धन तपासतो नथी, खरुं जोतां विषय विरक्त जीवनेज साचुं ज्ञान–धन हाथ लागे छे. विषयान्ध जीवने काम अने अर्थज प्रिय होवाथी

तेने खरी प्रीति विना तत्त्व-धन हाथ लागतुंज नथी, माटे अनादिनी विषयवासना तजीने सत्य ज्ञानमां प्रीति धारवी युक्त छे.

६. अधिकाऽधिक तृष्णाने वधारनार विषय सुखमांज मुढ जीवो मग्न रहे छे, पण ज्ञानामृतनो आदर करी शकता नथी. खरूं छे के खाखरानी खीसकोली आंबाना रसमां शुं जाणे? अमृत समान ज्ञान तो विषय सुखथी विरक्तनेज प्राप्त थइ शके छे.

७. एक एक इंद्रियना दोषथी, पतंगिया, भमरा मांछला, हाथी तथा हरण दुर्दशाने पामे छे तो दुष्ट एवी पांचे इंद्रियोने परवश थइ वर्तनारा मूढ जीवोनुं तो कहेवुंज शुं?

८. विवेकरुप कुंजरने विदारवा केशरीसिंह समान तथा समाधि धनने हरवा साक्षात् चोर समान एवी इंद्रियोथी जेओ जीताया नथी तेओज धीर पुरुषोमां धुरंधर छे. जितेंद्रिय पुरुषोज खरा शूरवीर गणाय छे.

॥ ८ ॥ त्यागाऽष्टकम् ॥

संयमात्मा श्रये शुद्धो, पयोगं पितरं निजम् ॥
धृतिमंबांच पितरौ, तन्मां विसृजतं ध्रुवम् ॥ १ ॥

युष्माकं संगमोऽनादि, बंधवोऽनियतात्मनाम् ॥
ध्रुवैक रूपान् शीलादि, बंधूनित्यधुनाश्रये ॥ २ ॥
कान्ता मे समतै वैका, ज्ञातयोमे समक्रियाः ॥
बाह्य वर्गमिति त्यक्त्वा, धर्म संन्यासवान् भवेत् ॥३ ॥
धर्मास्त्याज्याः सुसंगोत्थाः, क्षायोपशमिका अपि ॥
प्राप्य चंदन गंधाभं, धर्म संन्यास मुत्तमम् ॥ ४ ॥
गुरुत्वं स्वस्य नोदेति, शिक्षा सात्म्येन यावता ॥
आत्म तत्त्व प्रकाशेन, तावत् सेव्यो गुरूत्तमः ॥ ५ ॥
ज्ञानाचारादयोपीष्टाः, शुद्ध स्व स्वपदावधि ॥
निर्विकल्पे पुनस्त्यागे, नाविकल्पो न वा क्रिया ॥ ६ ॥
योग सन्यासतस्त्यागी, योगानप्यखिलां स्त्यजेत् ॥
इत्येवं निर्गुणं ब्रह्म, परोक्तमुपपद्यते ॥ ७ ॥
वस्तुतस्तु गुणैः पूर्ण, मनंतै र्भासते स्वतः ॥
रूपं त्यक्त्वात्मनः साधोर्निरभ्रस्य विधोरिव ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. संयमी आत्मा शुद्ध उपयोगरूपि पितानो तथा धृतिरूपि मातानो आश्रय करी लौकिक मनाता मातापितानो संग निश्चय पूर्वक तजी देछे. ज्यां सुधी लौकिक संबंधीओ साथे स्नेह बांध्यो रहे छे, त्यां सुधी निर्मल ज्ञान, ध्यान तथा समाधिरूप आत्म संयममां रति पडती नथी. शुद्ध संयममां रंग लगाडवा, माटे अने सहज आनन्द लेवा माटे लौकिक स्नेह अवश्य तजवो युक्त छे.

२. संयमार्थी आत्मा स्वार्थी बांधवोनो त्याग करीने शील संतोष प्रमुख परमार्थी अने निश्चल परिणामवाळा बंधुओनो आश्रय करवा उजमाल रहे छे. ज्यां सुधी कृत्रिम स्वार्थी बंधुओमां प्रीति छे त्यां सुधी सत्य परमार्थी शीलादिक सद्‌गुणोमां प्रीति जागे नहि. माटे शीलादिक सत्य बंधुओमां अकृत्रिम प्रेम जगाववा अर्थे अनादि अविवेक योगे लागेलो स्वार्थी लौकिक बंधुओ प्रतिनो कृत्रिम राग अवश्य तजवोज जोइए. कृत्रिम रागनो त्याग करतां सहज सात्विक प्रेम अवश्य जागवानो.

३. संयमार्थी पुरुष समतारूपी स्त्रीनो तथा साधर्मीरूपी ज्ञाति जनोनोज आदर करे छे, पण बाकीना मतलबीया लौकिक संबंधीओनो त्यागज करे छे. लौकिक संबंधने विवेकथी छेदीने आत्म संयमने साधनाराळो उत्तम त्यागी कहेवाय छे.

४. शुद्ध क्षायक ज्ञानदर्शन चारित्रादिक गुणो प्राप्त थये छते पूर्वला अशुद्ध अभ्यासिक गुणो त्याज्य थाय छे, आत्माना शुद्ध ज्ञानादिक सद्गुणोमां एवी सहज अपूर्व शीतलता तथा सुवासना रहेली छे के तेने पामीने आत्महंस बीजे क्यांय पण स्थिति करतो नथी, फक्त तेमांज सर्व संग तजीने लयलीन थइ रहे छे.

५. आत्मानुं स्वरूप जेथी सम्यग् समजी शकाय एवा तत्त्वज्ञानना प्रकाशवडे स्वयं आत्माने शिक्षा आपी सुधारी शके तेवुं गुरुत्व पोताने प्राप्त न थाय त्यां सुधी उत्तम गुरुनुं शरण अवश्य आदरवुं युक्त छे, स्व कल्याण साधवानो संपूर्ण अधिकार प्राप्त थया बाद गुरुनी आज्ञाथी एकला विचरवामां पण हित छे, परंतु तेवी योग्यता पाम्या पहेलां स्वच्छंदताथी एकला विचरतां तो केवळ अहितज छे.

६. ज्यां सुधी सदाचारनी संपूर्ण शुद्धता सिद्ध थाय नहिं त्यां सुधी ज्ञानाचार आदि सकल आचार अवश्य सेव्य छे, पण ज्यारे असंग योगनी प्राप्ति थशे त्यारे कोइ विकल्प पण रहेशे नहिं, तेमज क्रिया करवानी चिंता पण रहेशे नहिं, प्रथम मननी स्थिरता माटे सदा आचार पाळवानी जरुर छे. आचारनी शुद्धिथी मननी शुद्धि विशेषे थाय छे, अने अंते निर्विकल्प समाधि सिद्ध थये छते सर्व विकल्प तथा क्रिया स्वतः उपशमे छे. परंतु परिपूर्ण योग्यता—अधि

कार प्राप्त कर्या पहेलां आपमतिथी जेओ सदाचारनो अनादर करेछे, तेओ उभय भ्रष्ट थइ अंते भारे पश्चातापना भागी थाय छे, माटे प्रथम आचार शुद्धिद्वारा मन शुद्धि करी ते वडे अनुक्रमे वचन अने काय शुद्धि प्राप्त करवा प्रयत्न सेववो; त्रिविध शुद्धिथी सहज समाधि सिद्ध थतां अनुक्रमे विविध विकल्पो तथा क्रियाओनो अंत आवशे ए वात खात्री पूर्वक मानवी.

७. त्यागी–संयमी सिद्ध योगी थइने समस्त योग–व्यापारनो त्याग करे छे अने संपूर्ण विवेक योगे निर्गुण ब्रह्म–परमात्म पदने प्राप्त करे छे. ए त्यागनुंज माहात्म्य छे.

८. संपूर्ण त्यागी–संयमी साधु निर्मल चंद्रनी पेरे वस्तुतः अनंत गुण ज्योतिथी स्वतः प्रकाशे छे. संपूर्ण विभाव त्यागथी पूर्ण विवेक योगे निर्मल आत्मस्वभाव स्वतः प्रगटे छे.
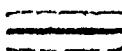
॥ ९ ॥ क्रियाष्टकम् ॥

ज्ञानी क्रियापरः शान्तो, भावितात्मा जितेंद्रियः ॥
स्वयं तीर्णो भवांभोधेः, परं तारयितुं क्षमः ॥ १ ॥
क्रियाविरहितं हंत, ज्ञानमात्रमनर्थकम् ॥

गतिंविना पथिज्ञोऽपि, नाप्नोति पुरमीप्सितम् ॥ २ ॥
स्वानुकूलां क्रियां काले, ज्ञान पूर्णोप्यपेक्षते ॥
प्रदीपः स्वप्रकाशोऽपि, तैल पूर्त्यादिकं यथा ॥ ३ ॥
बाह्यभावं पुरस्कृत्य, ये क्रियां व्यवहारतः ॥
वदने कवलक्षेपं, विना ते तृप्तिकांक्षिणः ॥ ४ ॥
गुणवद् बहुमानादे, र्नित्य स्मृत्याच सत्क्रिया ॥
जातं न पातयेद्भाव, म जातं जनयेदपि ॥ ५ ॥
क्षायोपशमिके भावे, याक्रिया क्रियते तया ॥
पतितस्यापि तद्भाव, प्रवृद्धि र्जायते पुनः ॥ ६ ॥
गुण वृद्ध्यैततः कुर्यात्, क्रियामस्खलनाय वा ॥
एकं तु संयमस्थानं, जिनानामवतिष्ठते ॥ ७ ॥
वचोनुष्ठानतोसंग, क्रियासंगतिमंगति ॥
सेयं ज्ञानक्रियाभेद, भूमिरानंदपिच्छला ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सम्यग् ज्ञान अने क्रियाने सेवनार शान्त अने भावित आत्मा जितेंद्रिय थइ आ भयंकर भवोदधिथी पोते तर्या छतां अन्यने

पण तारवा समर्थ थाय छे. उपर बतावेला सद्‌गुणो विनानो बाह्या-डंबरी स्वपरने तारवा शक्तिवान् नथी.

२. क्रिया—आचरण विनानुं केवळ शुष्कज्ञान निष्फल छे, अने सदाचरण युक्त सर्व ज्ञान सफल छे. केमके मार्गनो जाण छतां पण गमन क्रिया विना इच्छित स्थाने प्होंची शकतो नथी. अने गमन क्रिया योगे सुखे समाधिथी इष्ट स्थाने प्होंची शके छे. एम निर्धारीने म्होटी म्होटी वातो करीने नहि विरमतां साक्षात् क्रियारुचि थवुं.

३. जेम दीवो स्वप्रकाशक छतां तेलवाट विगेरेनी अपेक्षा राखे छे तेम संपूर्ण ज्ञानीने पण काले काले आत्म अनुकूल क्रिया करवी पडे छे, जेम तेलवाट विगेरे अनुकुल साधन विना दीवो बली शकतो नथी; फक्त तेलवाट विगेरे प्होंचे त्यां सुधीज दीवो बली पछी ओलवाइ जाय छे, तेम ज्ञानीने पण अनुकुल क्रिया कर्या विना चालतुं नथी. जेम जलनो रस जलथी न्यारो रहेतोज नथी तेम सत्य—परमार्थिक ज्ञान पण तदनुकुल क्रिया विनानुं होतुंज नथी. संपूर्ण ज्ञानी पण स्वानुकुल क्रिया करेज छे, तो संपूर्ण ज्ञानी थवा इच्छता एवा अल्पज्ञानीनुं तो कहेवुंज शुं?

४. क्रिया करवी ते तो बाह्य भाव छे एम कहीने जेओ सत्य व्यवहारनो निषेध करे छे, तेओ मुखमां कोळीयो नांख्या विनाज तृप्तिने इच्छवा जेवुं करे छे. जेम जम्या विना क्षुधा शान्त थती नथी

तेम सत्य व्यवहार सेवन विना शुद्ध निश्चय मार्ग पण मली शकतो नथी. माटे शुद्ध निश्चयार्थीने व्यवहारनो अनादर करवो युक्त नथी. पण शुद्ध मार्ग माटे सत्य व्यवहारनुं विशेषे सेवन करवुं घटे छे.

५. गुणवंतनुं बहुमान बनी शके तेटलुं करवा पूर्वक तेनुं नित्य स्मरण करवा प्रमुख सत् क्रियाथी उत्पन्न थयेला भावने टकावी राखवा साथे नवा भावने पण पेदा करवानुं बनी आवे छे. माटे गुणना अर्थीए हमेशां सत् क्रियानुं आलंबन लीधाज करवुं.

६. प्रथम अभ्यासरूपे जे सत् क्रिया करवामां आवे छे तेथी एवो संस्कार जामी जाय छे के ते क्रिया अंते शुद्ध अने असंगपणे थया करे छे. तेमज कचित् दैववशात् पतित थयेलाने पण पूर्वला भावनी प्राप्ति थइ आवे छे. परंतु जेओ प्रमादने पराधीन पडचा छतां सत् क्रियानुं सेवनज करता नथी तेवा मंदभागीने तो गुणमां आगल वधवानुं साधनज मली शकतुं नथी.

७. माटे सद्गुणोनी वृद्धि माटे तेमज प्राप्त थयेला सद्गुणोथी भ्रष्ट नहि थवा माटे सदा सत् क्रिया सेव्याज करवी युक्त छे. एवो शुभ अभ्यास वीतराग दशा प्राप्त थतां सुधी सेववा योग्य छे. समस्त मोहनो क्षय थवा पामे त्यां सुधी एवा शुभ अभ्यासमां प्रमाद करवो अयुक्त छे. प्रमाद सेवनथी तो उलटो अनर्थ पेदा थाय छे. माटे परमात्म दशा प्राप्त थतां सुधी अप्रमत्त भावज आदरवा योग्य

छे. वीतराग दशा प्राप्त थया पछी पतीत थवानो लगारे भय नथी. वीतराग दशा तो कायम एक सरखीज होय छे. वीतराग दशामां कोइ पण क्रिया करवा संबंधी विकल्पज होतो नथी.

८. वीतराग वचनानुसारे वर्तन करतां अंते असंग वृत्ति प्राप्त थाय छे. ते ज्ञान अने क्रियानी अभेद भूमी–एकता अमंद आनंदथी भरेली होय छे. तथास्तु.

॥ १० ॥ तृप्त्यष्टकम् ॥

पीत्वा ज्ञानामृतं भुक्त्वा, क्रिया सुरलता फलम् ॥
साम्य ताम्बूल मास्वाद्य, तृप्तिं याति परां मुनिः ॥१॥
स्वगुणैरेव तृप्तिश्चे, दाकालमाविनश्वरी ॥
ज्ञानिनो विषयैः किं तै, र्यैर्भवेत्तृप्तिरित्वरी ॥ २ ॥
या शान्तैकरसा स्वादा, द्भवेत्तृप्तिरतींद्रिया ॥
सा न जिह्वेंद्रियद्वारा, षड्रसास्वादनादपि ॥ ३ ॥
संसारे स्वप्नवन्मिथ्या, तृप्तिः स्यादाभिमानिकी ॥
तथ्या तु भ्रांति शून्यस्य, सात्म वीर्य विपाककृत् ॥४॥
पुद्गलैः पुद्गलास्तृप्तिं, यान्त्यात्मा पुनरात्मना ॥

परतृप्ति समारोपो, ज्ञानिनस्तन्न युज्यते ॥ ५ ॥
मधुराज्य महाशाका, ग्राह्ये बाह्येच गोरसात् ॥
परब्रह्मणि तृप्ति र्या, जनास्तां जानतेऽपि न ॥ ६ ॥
विषयोर्मिविषोद्गारः स्यादतृप्तस्य पुद्गलैः
ज्ञान तृप्तस्य तु ध्यान, सुधोद्गार परंपरा ॥ ७ ॥
सुखिनो विषयातृप्ता, नेंद्रोपेंद्रादयोऽप्यहो ॥
भिक्षुरेकः सुखी लोके, ज्ञानतृप्तो निरंजनः ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. ज्ञानामृतनुं पान करीने तथा क्रिया कल्पलतानां फल खाइने तथा समतारूपी ताम्बूल चावीने मुनि श्रेष्ठ तृप्तिने पामे छे. समतायुक्त ज्ञान अने क्रिया वडे खरी तृप्ति साधी शकाय छे. ते विनानी पौद्गलिक तृप्ति कल्पित मात्र छे.

२. स्वगुणो वडेज अक्षय अने अखंड तृप्ति थती होय तो क्षणिक तृप्ति करनारा विषयोनुं ज्ञानीने शुं प्रयोजन छे? सद्गुण सेवनथी साक्षात् आत्म तृप्तिने अनुभवनारा ज्ञानी पुरुषो विषम एवा विषय सुखनो आदर करता नथी.

३. एकज शान्त रसनो आस्वाद करवाथी जे सहज अतींद्रिय सुख प्राप्त थाय छे, ते रसना[1] वडे षटरसनो आस्वाद लेवाथी पण मली शकतुं नथी. एम समजी सकल इंद्रिय जन्य तुच्छ विषय रसनो त्याग करीने एक शान्त वैराग्य रसनोज आस्वाद करी अपूर्व अने अतींद्रिय सुखनो साक्षात् अनुभव करवो युक्त छे. केवल विषयासक्त विवेक विकलने एवुं अपूर्व सुख मली शके नहिं.

४. संसारमां मुग्ध लोकोए मानी लीधेली विषय-तृप्ति स्वप्ननी जेवी मिथ्या छे, अने आत्मानी सहज शक्तिने उत्तेजित करनारी ज्ञानीए आदरेली तृप्तिज साची अने सेववा योग्य छे. माटे क्षणिक तृप्तिने तजीने अक्षय तृप्ति माटेज यत्न करवो.

५. पुद्गलो वडे पुद्गल तृप्ति पामे छे अने ज्ञानादिक आत्म गुणो वडे आत्मा तृप्ति पामे छे. माटे पुद्गलिक तृप्तिने साची तृप्ति मानवी ए ज्ञानी विवेकीनुं कर्तव्य नथी. खोटी अने क्षणिक पुद्गलिक तृप्तिनो अनादर करीने सत्य अने शास्वती सहज तृप्तिनोज स्वीकार करनार खरो ज्ञानी-विवेकी होवो घटे छे. बाकी मोटी मोटी वातो करीने विरमी रही, पुद्गलिक सुखमां रच्या पच्या रहेनारा खरा ज्ञानी होवा घटता नथी.

६. पुद्गलिक सुखना आशी वडे अग्राह्य तथा अवाच्य एवा

---

१. जिह्वा, जीभ.

परब्रह्ममां जे तृप्ति रहेली छे ते विषयरसना आशीजनो जाणी पण शकता नथी. पुद्गलिक सुखना रसीया तो विविध विषय रसमांज सार सुख समजी नित्य रच्या पच्याज रहे छे. सिद्ध परमात्मदशामां केवुं अने केटलुं सुख रहेलुं छे, तेनो तेमने स्वप्नमां पण ख्याल नथी.

७. सत्य संतोष रहित—असंतोषीने पुद्गलो वडे विविध विषमय विषनाज उद्गार आवे छे. अने सत्य ज्ञान—संतोषीने तो उत्तम एवा ध्यानामृतनाज उद्गारनी परंपरा आवे छे. जीव जेवो आहार करे छे तेवोज तेने ओडकार आवे छे. निरंतर पुद्गलिक सुखमांज रच्या पच्या रहेनाराने विषय वासनानीज प्रबलताथी तेनाज झेरी उद्गार आवे छे, अने तत्त्व ज्ञानमांज तृप्ति मानी मग्न रहेनारा महा पुरुषने तो निर्मळ ध्यानामृतनाज उत्तम ओडकार आव्या करे छे. एम निर्धारीने सर्व प्रकारनी विषय आशा तजीने तत्त्व ज्ञानमांज प्रीति जगाववी, जेथी शुद्ध चैतन्यनी जागृतिथी अनुपम ध्यानामृतनी वृष्टि थशे अने अनादि अविवेक जन्य विषमतापनी उपशांतिथी सहज शीतलता छवाये जशे. परंतु याद राखवुं के आ सर्व विविध विषयपासने छेदवाथी बनी शकशे.

८. विषय सुखथी तृप्ति नहि पामेला—असंतुष्ट एवा इंद्र उपेंद्रादिक पण तत्त्वतः सुखी नथी. किंतु तत्त्वज्ञानथी तृप्त कर्मकलंक

मुक्त एवा एक मुनिज लोकमां सुखीया छे. विषयतृष्णाने तोडीने सहज संतोष धारवामांज खरुं सुख समायलुं छे.

॥ ११ ॥ निर्लेपाष्टकम् ॥

संसारे निवसन् स्वार्थ, सज्जः कज्जलवेश्मनि ॥
लिप्यते निखिलो लोको, ज्ञान सिद्धो न लिप्यते ॥१॥
नाहं पुद्गल भावानां, कर्ता कारयिता च न ॥
नानुमंतापि चेत्यात्म, ज्ञानवान् लिप्यते कथम् ॥२॥
लिप्यते पुद्गलस्कंधो, न लिप्ये पुद्गलैरहम् ॥
चित्रव्योमांजनेनेव, ध्यायन्निति न लिप्यते ॥ ३ ॥
लिप्तता ज्ञानसंपात, प्रतिघाताय केवलम् ॥
निर्लेपज्ञानमग्नस्य, क्रिया सर्वोपयुज्यते ॥ ४ ॥
तपः श्रुतादिनामत्तः, क्रियावानपि लिप्यते ॥
भावना ज्ञान संपन्नो, निःष्क्रियोऽपि न लिप्यते॥५॥
अलिप्तो निश्चयेनात्मा, लिप्तश्च व्यवहारतः ॥
शुद्धयत्यलिप्तया ज्ञानी, क्रियावान् लिप्तयादृशा ॥ ६॥

ज्ञान क्रिया समावेशः, सहैवोन्मीलने द्वयोः ॥
भूमिका भेदतस्त्वत्र, भवेदेकैक मुख्यता ॥ ७ ॥
सज्ञानं यदनुष्ठानं, न लिप्तं दोष पंकतः ॥
शुद्ध बुद्ध स्वभावाय, तस्मै भगवते नमः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. संसारमां वसता अने स्वार्थ साधवामांज तत्पर एवा सर्व कोइ प्राणी कर्मथी लेपाय छे. अथवा काजलनी कोटडीमां रहेतां कोण कोरो रहीज शके ? फक्त ज्ञान सिद्ध पुरुषज निर्लेप रही शके छे. तत्त्वज्ञानी अने विवेकी महात्माज मात्र कोरो रही कर्म अंजनथी मुक्त थइ शके छे. एवा सत्पुरुषोने संसारना कोइपण पदार्थमां आसक्ति होती नथी, अने अंतर आसक्ति विना रागद्वेषादिकना अभावे कर्म बंध पण थइ शकतो नथी.

२. हुं परभावने करुं नहिं, करावुं नहिं तेमज अनुमोदुं नहिं, विभावमां रमवानो मारो धर्मज नथी, मने स्वभावमांज रहेवुं युक्त छे. आ प्रमाणे अंतरमां समजनार आत्म ज्ञानी कर्म अंजनथी केम लेपाय ? जे विभावथी विरमीने केवल स्वभाव रमणी थाय छे, तेज खरो आत्म ज्ञानी छे अने तेवा आत्म ज्ञानीज सकल कर्म कलंकथी सर्वथा मुक्त थइ अंते परम पदने प्राप्त थाय छे.

३. फक्त पुद्गलज पुद्गलथी लेपाय छे. पण चेतन पुद्गलथी लेपातो नथी. जेम आकाश अंजनथी लेपातुंज नथी तेम आत्मा पण कर्म अंजनथी लेपातो नथी.' एवा सम्यग् विचार पूर्वक विवेक सेवनारो सत्पुरुष कदापि क्लिष्ट कर्मनो भागी थतोज नथी. परंतु जे अनादि अविद्या योगे मोहने वश थइ जडवत् बनी पुद्गलमांज आनंद मानी बेसे छे तेवो पुद्गलानंदी तो मोह मायाना पाशमां पडी जरुर क्लिष्ट कर्म बंधननोज भागी थाय छे.

४. निर्लेप दृष्टि एवा सत्पुरुषनी सकल सापेक्ष क्रिया विभावमां जता उपयोगने वारवा माटे होय छे. साध्य दृष्टिवाळानी सकल क्रिया सापेक्ष—सहेतुकज होय छे, तेथी आत्मानंदी पुरुष जे जे क्रिया करे छे तेनो हेतु पुद्गलमां जती दृष्टिने रोकवा अने स्वभाव रमणी थवा माटेज होय छे. ज्यां सुधी संपूर्ण स्वभाव रमणी न थवाय त्यां सुधी तेवो संपूर्ण अधिकार पामवा अने बाधकभूत विभाव उपयोगने वारवा स्वानुकूल क्रिया करवानी खास जरुर पडे छे.

५. तप अने ज्ञान विगेरेनो मद करनारो गमे तेवी आकरी कष्ट करणी करतो होय तोपण कर्मथी लेपाय छे. अने निर्मल भावथी जेनुं अंतःकरण भरेलुं होय ते कदाच तेवी आकरी करणी करी शकतो न होय तोपण कर्मथी लेपातो नथी. एम समजीने शाणा

माणसोए कर्त्तृत्व अभिमान तजवुं युक्त छे. कोइ पण जातनो मद करवाथी प्राणी पतितपणुं पामे छे. अने मद तजी निर्मद थइ नम्र पणे स्वकर्तव्य समजी जे सत् क्रिया करे छे. ते स्व उन्नतिने सुखे साधे छे.

६. निश्चय-तत्त्व दृष्टिथी जोतां आत्मा अलिप्त छे, अने व्यवहार दृष्टिथी जोतां तेज आत्मा कर्मथी लिप्त देखाय छे. तत्त्वदृष्टि पुरुष अलिप्त दशाथी आत्मानी शुद्धि करे छे, अने क्रियावान् व्यवहार दृष्टि पुरुष स्वानुकूल उचित आचरणथी शुद्ध थाय छे. बंनेनुं साध्य एकज होवाथी स्व स्व अनुकूल साधनवडे उभय सिद्धि संपादन करी शके छे. साध्य विकल कोइ पण प्राणी स्वानुकूल साधन विना सिद्धि साधी शकता नथी.

७ निश्चय अने व्यवहार दृष्टिनुं साथेज प्रगटन-विकास थवाथी ज्ञान अने क्रिया ए उभयनो समावेश थइ जाय छे, परंतु स्थान विशेषथी तो ज्ञाननी के क्रियानी मुख्यता होय छे. व्यवहार साधन वडे निश्चय साध्य थाय छे, अने निश्चय साधनथी मोक्ष साध्य थाय छे. व्यवहार ए मोक्षनुं परंपर कारण छे अने निश्चय अनंतर कारण छे. उभयनुं मीलन थवाथी शीघ्र मोक्ष साधना सिद्ध थाय छे. माटे मोक्षार्थीये निश्चय दृष्टि हृदयमां धारीने व्यवहार मार्गनुं अवलंबन अवश्य करवुं युक्त छे. एम करवाथी साधक शीघ्र साध्य सिद्धि करी शके छे.

८. ज्ञानयुक्त जेनु अनुष्ठान दोष पंकथी लेपायुं नथी एवा शुद्ध स्वभाव रमणी महापुरुषने नमस्कार थाओ. जेनी क्रिया समज पूर्वक मोक्ष माटेज होवाथी निर्दोष छे. तेमज तीक्ष्ण उपयोगथी सहज आत्म विशुद्धि करवा समर्थ छे तेने नमस्कार छे.

॥ १२ ॥ निस्पृहाष्टकम् ॥

स्वभावलाभात् किमपि, प्राप्तव्यं नावशिष्यते ॥
इत्यात्मैश्वर्य संपन्नो, निःस्पृहो जायते मुनिः ॥१॥
संयोजितकरैः के के प्रार्थ्यंते न स्पृहावहैः ॥
अमात्र ज्ञान पात्रस्य, निस्पृहस्य तृणं जगत् ॥२॥
छिंदन्ति ज्ञानदात्रेण, स्पृहाविषलतां बुधाः ॥
मुखशोषंच मूर्च्छांच दैन्यं यच्छति यत्फलम् ॥३॥
निकासनीया विदुषा, स्पृहा चित्त गृहाद्बहिः ॥
अनात्मरति चांडाली, संगमंगी करोति या ॥४॥
स्पृहावन्तो विलोक्यंते, लघवस्तृणतूलवत् ॥
महाश्चर्यं तथाप्येते, मज्जन्ति भववारिधौ ॥ ५ ॥
गौरवं पौर वंद्यत्वात्, प्रकृष्टत्वं प्रतिष्ठया ॥

ख्यातिं जाति गुणात्स्वस्य, प्रादुष्कुर्यान्ननिःस्पृहः ॥६॥
भूशय्या भैक्षमशनं, जीर्णं वासो वनं गृहम् ॥
तथापि निःस्पृहस्याहो, चक्रिणोऽप्यधिकं सुखम् ॥७॥
परस्पृहा महा दुःखं, निःस्पृहत्वं महा सुखम् ॥
एतदुक्तं समासेन, लक्षणं सुखदुःखयोः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सहज आत्म संपत्तिनी प्राप्ति थया बाद बीजुं कंइ पण प्राप्त करवुं बाकी रहेतुंज नथी. एवा आत्म ऐश्वर्य संपन्न मुनि परस्पृहारहित–निस्पृह बनी जाय छे. सर्व ऋद्धि अने समृद्धि घटमांज रहेली छे. तेवी सहज साहेबी जो प्रगट थवा पामे तो बीजी बाह्य–तुच्छ बाबतोमां मुंझावानुं रहेतुं नथीज. सहज ऐश्वर्यवान मुनि परनी परवा रहित होवाथी अने उत्तम सद्गुणोथी भरपुर होवाथी निःस्पृह थइ जाय छे.

२ परस्पृहावंत प्राणीओ हाथ जोडी जोडीने कोनी कोनी प्रार्थना करता नथी? सस्पृही सर्व कोइना दास छे अने अपार ज्ञान–ध्यान निःस्पृहीने तो जगतमां कोइनी परवा नथी. पुद्गलानंदी प्राणी पोताना स्वार्थ माटे गमे तेवानी पण प्रार्थना करवा चूकतो नथी.

अने ज्ञानानंदी निःस्पृहीने कोइनी कशी परवा नहिं होवाथी तेतो सदानंदमां स्वाधीनपणे वर्ते छे.

३. तत्ववेदी पुरुषो ज्ञानरुपी दातरडाथी स्पृहारुपी विष वेल-डीने छेदी नांखे छे केमके परस्पृहाथी मुख शोष मूर्छा अने दीनता आदिक दोषोने सेववा पडे छे. ज्ञानी विवेकी पुरुषो तेवी स्पृहाने दो-षनुं मूल जाणीने समूलगी छेदवा तत्पर रहे छे.

४. डाह्या माणसे स्पृहाने कुमती चंडालणीनी संगत करनारी जाणीने चित्त–मंदिरमांथी दूर करवी जोइये. कुमतिने पोषनारी स्पृहाने सद्विवेकीजनो सेवताज नथी, पण भूतना उतारनी जेम सम-जीने तेने घरथी बहार काढे छे. आवा निःस्पृही पुरुषो सदा सुखमां मग्न रही शके छे.

५. स्पृहावंत लोको अत्यंत तुच्छ अने हलका जणाता छतां भवसागरमां डूबी जाय छे, ते महा आश्चर्यकारक छे. केमके हलकी वस्तु तो तरवीज जोइये अने भारे वस्तुज डुबवी जोइए एवो कुद-रती नियम छे तेनुं आमां उल्लंघन थतुं देखाय छे, तेनुं समाधान एवुं छे के तेओ स्वभावे तुच्छ छतां ममता दोषथी एवा तो भारे थयेला होय छे के बेहद भारथी भरेला वहाणनी जेम तेओ अधोग-तिज प्राप्त करे छे.

६. निःस्पृही पुरुष लोकवंदनीकताथी पोतानी वडीलता, प्रतिष्ठाथी श्रेष्ठता अने जातिगुणथी ख्यातिने प्रगट करताज नथी. जे लोक पूजा, प्रतिष्ठा के ख्यातिनो विकल्प नहि करतां स्वकर्तव्यज बजाव्या करे छे तेज खरा निस्पृही छे. खरा निःस्पृही स्वप्नमां पण परोपकारनो वदलो इच्छता नथी.

७. भूमी एज जेनी शय्या छे, माधुकरी वृत्तिथी जेने भोजन करवानुं छे, पेहेरवाने जेने जीर्णप्राय वस्त्र छे, अने वनमां जेने वसवानुं छे, एवा निःस्पृही पुरुषने उत्तम प्रकारना संतोषना योगथी चक्रवर्ती करतां पण अधिक सुख छे. जेणे संसारनो खोटो वैभव तजीने सहेज आत्म ऐश्वर्य पामवा उत्तम संयमनुं सेवन आदर्युं छे, एवा आत्म संयमी महापुरुष चक्रवर्तीथी ओछा सुखी नथी. खोटो कल्पित आनंद तजी, सहज आनंद साधनार सत्पुरुष सर्वोत्तम सुखी छे. परस्पृहा रहित-निःस्पृही निर्ग्रंथ एवुं सर्वोत्तम सुख साधी शके छे.

८. सुखनुं अने दुःखनुं संक्षेपथी आवुं लक्षण शास्त्रमां कहेलुं छे के परस्पृहा एज महा दुःख छे अने निःस्पृहता एज परम सुख छे. माटे मोक्षार्थीए परस्पृहा तजी निःस्पृह थवुं युक्त छे.

पणुं छे. तेवा आचरण विनानो मुनि वेष विडंबना रूपज छे, ज्ञान-वडे शुद्धाशुद्धनो हिताहितनो विवेक जागे छे. दर्शनवडे तेनी यथार्थ प्रतीति बेसे छे, अने चारित्रथी अहितना त्याग पूर्वक हित प्रवृत्ति थाय छे. उक्त ज्ञान दर्शन अने चारित्र मळीने रत्नत्रयी कहेवाय छे ए रत्नत्रयीने सम्यग् सेवनारा मुनि कहेवाय छे, उक्त मुनिनी रहेणी कहेणी एक सरखी होय छे केमके ते ज्ञान अने क्रियानो एक सरखी रीते स्वीकार करे छे अने अन्य मोक्षार्थीने पण तेवोज हितकारी मार्ग बतावी जन्म मरणनां अनंत दुःखमांथी मुक्त करवा यत्न सेवे छे.

४. मणि—रत्न हाथमां आव्या छतां तेनो आदर करी शकाय नहि तेमज तेनुं फल मेलवी शकाय नहि तो जाणवुं के मणीनी पीछानज थइ नथी कें मणिनी प्रतीतिज बेठी नथी. अन्यथा मणिनुं मुल्य समजीने तेनो आदर जरुर करायज.

५. तेम जो शुद्ध आत्म स्वभावमां रमण थइ शके नहि तथा रागद्वेष मोहादिक दुष्ट दोषोनो त्याग थइ शके नहि तो ते ज्ञान के दर्शन कंइ कामनाज नथी. खरां ज्ञान अने दर्शनथी स्वरूप मग्नता अने दोष हानिरुप उत्तम फल थवुंज जोइए, सहज आनंदमां मग्नता थवी ए जेम उत्तम लाभ छे, तेम दुष्ट दोषोनुं दमन करी तेमनो समूलगो नाश करवो ए पण अति उत्तम लाभरुपज छे. खरुं

मुनिपणुं भजनारा निर्ग्रंथ साधुओ एवो उत्तम लाभ हांसल करी शके छे.

६. जेवुं शोफ (सोजा) नुं पुष्टपणुं, अथवा वध्य (वध करवा लइ जवामां आवनार) ने शणगारवुं नकामुं छे, तेवोज आ संसारनो उन्माद अनर्थकारी छे, एम समजीने मुनि सहज संतोषी थइ रहे छे. संसारनुं असारपणुं सम्यग् विचारी संतोष वृत्तिथी जे सहजानंदमां मग्न थइ रहे छे तेज खरो मुनि—निर्ग्रंथ छे.

७. वचन नहि उचरवारुप मौन तो एकेंद्रियादिकमां पण होइ शके छे तेवा मौनथी आत्माने कंइ विशेष लाभ नथी, खरो लाभ तो ए छे के पुद्गलिक प्रवृत्तिमांथी विरमी सहज आत्म स्वभावमां ज मग्न अथवा मन, वचन अने कायानो सदा सर्वदा सदुपयोग कर्या करवो.

८. जे समजीने विवेकथी स्वकर्तव्य बजावे छे, जेनी क्रिया दीपकना जेवी ज्ञान—ज्योतीमय छे, तेवा सम स्वभावी महापुरुषनुंज मौन श्रेष्ट छे. समतावंत महा मुनिज श्रेष्ट मौन सेवी शके छे.

॥ १३ ॥ मौनाष्टकम् ॥

मन्यते यो जगत्तत्त्वं, स मुनिः परिकीर्तितः ॥
सम्यक्त्व मेव तन्मौनं, मौनं सम्यक्त्वमेव च ॥१॥
आत्मात्मन्येवयच्छुद्धं, जानात्यात्मानमात्मना ॥
सेयं रत्नत्रये ज्ञप्ति, रुच्याचारैकता मुनेः ॥ २ ॥
चारित्रमात्मचरणाद्, ज्ञानं वा दर्शनं मुनेः ॥
शुद्ध ज्ञान नये साध्यं, क्रिया लाभात् क्रियानये ॥३॥
यतः प्रवृत्तिर्न मणौ, लभ्यते वा न तत्फलम् ॥
अतात्त्विकी मणिज्ञप्ति, र्मणिश्रद्धा च सा यथा ॥४॥
तथा यतो न शुद्धात्म, स्वभावाचरणं भवेत् ॥
फलं दोष निवृत्तिर्वा, न तद्ज्ञानं न दर्शनम् ॥५॥
यथा शोफस्य पुष्टत्वं, यथा वा वध्य मंडनम् ॥
तथा जानन् भवोन्माद, मात्मतृप्तो मुनिर्भवेत् ॥६॥
सुलभं वागनुच्चारं, मौनमेकेंद्रियेष्वपि ॥
पुद्गलेष्व प्रवृत्तिस्तु, योगानां मौन मुत्तमम् ॥ ७ ॥

ज्योतिर्मयीव दीपस्य, क्रिया सर्वापि चिन्मयी ॥
यस्यानन्य स्वभावस्य, तस्य मौन मनुत्तरम् ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जे समस्त तत्त्वने यथार्थ जाणे छे ते मुनि कहेवाय छे, जे वस्तु तत्त्वने सम्यग् समजी सर्वत्र मध्यस्थ रहे छे, खोटी ञावतमां कदापि मुंझातोज नथी ते मुनि छे. तेवुं मुनिपणुं एज खरुं समकित छे. अने निर्मल समकित एज मुनिपणुं छे. शुद्ध समकित विना खरुं मुनिपणुं संभवतुंज नथी. मुनिपणुं ज्यां सुधी जाळवी रखाय छे, त्यां सुधी समकित कायम रहे छे.

२. आत्मा पोते पोतामां रहेलुं जे शुद्ध स्वरुप जे वडे जाणे छे तेज मुनिनी रत्नत्रयीमां ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता रुप छे. सम्यग् ज्ञानथी स्व स्वरुपने सारी रीते समजी शके छे. सम्यग् दर्शनथी स्व स्वरुपनी यथार्थ श्रद्धा प्रतीतिं थइ शके छे. अने सम्यग् चारित्रथी आत्म-स्थीरता एटले स्वरुप रमण थइ शके छे. सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्रनी एकता एज मुनिपणुं छे.

३. ज्ञान दर्शन अने चारित्र मुनिपणाना भावथीज सार्थक छे, विभावनो त्याग अथवा स्वभावनो स्वीकार करवो एज मुनि

पणुं छे. तेवा आचरण विनानो मुनि वेष विडंबना रूपज छे, ज्ञानवडे शुद्धाशुद्धनो हिताहितनो विवेक जागे छे. दर्शनवडे तेनी यथार्थ प्रतीति बेसे छे, अने चारित्रथी अहितना त्याग पूर्वक हित प्रवृत्ति थाय छे. उक्त ज्ञान दर्शन अने चारित्र मळीने रत्नत्रयी कहेवाय छे ए रत्नत्रयीने सम्यग् सेवनारा मुनि कहेवाय छे, उक्त मुनिनी रहेणी कहेणी एक सरखी होय छे केमके ते ज्ञान अने क्रियानो एक सरखी रीते स्वीकार करे छे अने अन्य मोक्षार्थीने पण तेवोज हितकारी मार्ग बतावी जन्म मरणनां अनंत दुःखमांथी मुक्त करवा यत्न सेवे छे.

४. मणि—रत्न हाथमां आव्या छतां तेनो आदर करी शकाय नहि तेमज तेनुं फल मेलवी शकाय नहि तो जाणवुं के मणीनी पीछानज थइ नथी के मणिनी प्रतीतिज बेठी नथी. अन्यथा मणिनुं मुल्य समजीने तेनो आदर जरुर करायज.

५. तेम जो शुद्ध आत्म स्वभावमां रमण थइ शके नहि तथा रागद्वेष मोहादिक दुष्ट दोषोनो त्याग थइ शके नहि तो ते ज्ञान के दर्शन कंइ कामनाज नथी. खरां ज्ञान अने दर्शनथी स्वरूप मग्नता अने दोष हानिरुप उत्तम फल थवुंज जोइए, सहज आनंदमां मग्नता थवी ए जेम उत्तम लाभ छे, तेम दुष्ट दोषोनुं दमन करी तेमनो समूलगो नाश करवो ए पण अति उत्तम लाभरुपज छे. खरूं

मुनिपणुं भजनारा निर्ग्रंथ साधुओ एवो उत्तम लाभ हांसल करी शके छे.

६. जेवुं शोफ (सोजा) नुं पुष्टपणुं, अथवा वध्य (वध करवा लइ जवामां आवनार) ने शणगारवुं नकामुं छे, तेवोज आ संसारनो उन्माद अनर्थकारी छे, एम समजीने मुनि सहज संतोषी थइ रहे छे. संसारनुं असारपणुं सम्यग् विचारी संतोष वृत्तिथी जे सहजानंदमां मग्न थइ रहे छे तेज खरो मुनि-निर्ग्रंथ छे.

७. वचन नहि उचरवारूप मौन तो एकेंद्रियादिकमां पण होइ शके छे तेवा मौनथी आत्माने कंइ विशेष लाभ नथी, खरो लाभ तो ए छे के पुद्गलिक प्रवृत्तिमांथी विरमी सहज आत्म स्वभावमां ज मग्न अथवा मन, वचन अने कायानो सदा सर्वदा सदुपयोग कर्या करवो.

८. जे समजीने विवेकथी स्वकर्तव्य बजावे छे, जेनी क्रिया दीपकना जेवी ज्ञान-ज्योतीमय छे, तेवा सम स्वभावी महापुरुषनुंज मौन श्रेष्ट छे. समतावंत महा मुनिज श्रेष्ट मौन सेवी शके छे.

॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

नित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥
अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाचार्यैः प्रकीर्तिता ॥१॥

यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगमं ॥
छलं लब्धुं न शक्नोति, तस्य मोहमलिम्लुचः ॥२॥

तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥
अदभ्रधीरनुध्याये, दभ्रवद्द भंगुरं वपुः ॥ ३ ॥

शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुची संभवे ॥
देहे जलादिना शौच, भ्रमो मुढस्य दारुणः ॥४॥

यः स्नात्वा समता कुंडे, हित्वा कश्मलजं मलम् ॥
पुनर्न याति मालिन्यं सोऽन्तरात्मा परः शुचिः ॥५॥

आत्मबोधोनवः पाशो, देह गेह धनादिषु ॥
यः क्षिप्तोप्यात्मना तेषु, स्वस्य बंधाय जायते ॥६॥

मिथो युक्तपदार्थाना, मसंक्रमचमत्क्रिया ॥
चिन्मात्र परिणामेन, विदुषैवानुभूयते ॥ ७ ॥

अविद्या तिमिरध्वंसे, दृशा विद्याजन स्पृशा ॥
पश्यन्ति परमात्मान, मात्मन्येव हि योगिनः ॥ ९ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनित्य, अशुचि, अने अनात्मिक परवस्तुने नित्य पवित्र अने पोतानी लेखवी ए अविद्यानुं लक्षण छे, अने वस्तुने वस्तुगत—यथार्थ जेवा रुपमां होय तेवा रूपमां बराबर समजवी ए विद्यानुं लक्षण छे; एम योगाचार्योंए शास्त्रमां कहुं छे.

२. आत्मा नित्य अविनाशी छे, तेनी कदापि नास्ति थतीज नथी. सदा सर्वदा तेनी अस्तिता छे, अने आ आत्माने थतो पर संयोग विनाशशील छे, तेनो तो अवश्य वियोग थवानोज छे. एवो जेने निश्चय थयो छे तेने मोह चोरटो छली शकतो नथी. सद्विद्या संपन्न आत्मा मोहनोज जय करी अखंड सुख साधी शके छे. पण सद्विद्या विहीनने तो मोह चोरटो सदा संताप्याज करे छे. माटे मोक्षार्थीए सद्विद्या संपन्न थवा सर्वदा सदुद्यम सेववो.

३. निर्मल बुद्धिवालो आत्मा लक्ष्मीने जलतरंगनी जेवी चपल लेखे छे, आयुष्यने वायुनी जेवुं अथीर लेखे छे, अने शरीरने शरदना मेघनी जेवुं क्षणभंगुर लेखे छे. एवी अथीर परवस्तुओमां विवेकवान् मुंझातो नथी.

इच्छन्न परमान् भावान्, विवेकाद्रेः पतत्यधः ॥
परमं भावमन्विच्छन्, नाविवेके निमज्जति ॥६॥
आत्मन्येवात्मनः कुर्यात्, यः षट्कारक संगतिम् ॥
काविवेकज्वरस्यास्य, वैषम्यं जड मज्जनात् ॥७॥
संयमास्त्रं विवेकेन, शाणेनोत्तेजितं मुनेः ॥
धृतिधारोल्बणं कर्म, शत्रुच्छेद क्षमं भवेत् ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. क्षीरनीरनी पेरे सर्वदा एकमेक मलीने रहेला कर्म अने जीवने जे व्यक्तपणे जूदा करी नांखे छे ते मुनि–हंस विवेकवान् गणाय छे. सद्विवेक जाग्या विना अनादि अनंत कालथी संयुक्त थइ रहेला कर्म अने जीवने कोइ कदापि स्पष्ट रीते जूदा करी शकेज नहिं. तेम करवाने सद्विवेकनी आवश्यकता रहेज छे.

२. देहज आत्मा छे अथवा आत्मा देहथी जूदो नथी एवो अविवेक तो जन्म जन्ममां अविद्याना वशथी सुलभज छे. पण आ देह आत्माथी खास जूदोज छे, केमके देह तो विनाशी छे अने आत्मा अविनाशी छे, देह तो जड छे अने आत्मा सचेतन–चैतन्य

युक्तछे, एवो विवेक कोटिगमे भवोमां भाग्य योगेज थइ शकेछे. अविद्यानो नाशथये छते सद्विवेक जागी शकेछे. ॥

३. शुद्ध-निर्मल आकाशमां पण चक्षु विकारथी जेम रातुं पीळुं देखायछे, तेम अविवेकथी आत्मामां विविध विकारो प्रतिभासेछे. आत्मा आकाशवत् निरंजन छतां उपाधि संबंधथी मलीन- विकारी भासेछे, सर्व उपाधि-संबंध दूरथये छते आत्मा सहज स्वभावमां स्थित थइ रहेछे, निर्मल निष्कषायज आत्मानो सहज स्वभावछे. राग द्वेषादिक उपाधि दूरथवाथी स्फटिक रत्ननी स्वभाविक कांति जेवो निर्मल आत्म धर्म प्रगट थइ जायछे. ॥

४. जोके राजाना योद्धाओ युद्ध करेछे छतां राजाज जीत्यो हार्यो कहेवायछे. तेम शुभाशुभ कर्मथीज सुख दुःख प्राप्त थायछे छतां अविवेकथी अमुक आत्माए अमुक उपर अनुग्रह या निग्रह कर्यो कहेवायछे. कर्मनी विचित्रताथी फलनी विचित्रता थायछे, छतां आ कार्य माराथीथयुं; मारा विना आवुं काम बनी शकेज नहिं, हुंज सर्वनुं पालन करुंछुं, माराविना कोइ पालक नथीज एवुं कर्त्तृत्व अभिमान करवुं ए केवल अविवेकनुंज जोरछे, सुविवेकी पुरुषो एवुं मिथ्याभिमान कदापि करताज नथी तेवा प्राज्ञ पुरुषो तो सर्वमां साक्षी पणुंज सेवेछे. ॥

५. जेम धंतूरो पीने गांडो थयेलो आदमी सर्वत्र सोनुंज देखेछे

॥ १४ ॥ विद्याष्टकम् ॥

नित्य शुच्यात्मताख्याति, रनित्याशुच्यनात्मसु ॥
अविद्या तत्त्वधीर्विद्या, योगाचार्यैः प्रकीर्तिता ॥१॥

यः पश्येन्नित्य मात्मान, मनित्यं परसंगमं ॥
छलं लब्धुं न शक्नोति, तस्य मोहमलिम्लुचः ॥२॥

तरंग तरलां लक्ष्मी, मायुर्वायुवदस्थिरम् ॥
अदभ्रधीरनुध्याये, दभ्रवद् भंगुरं वपुः ॥ ३ ॥

शुचीन्यप्यशुचीकर्तुं, समर्थेऽशुची संभवे ॥
देहे जलादिना शौच, भ्रमो मुढस्य दारुणः ॥४॥

यः स्नात्वा समता [illegible]

पून [illegible] जाय छे, एम समजीने सुविवेकी जनो परवस्तुओमां
आसक्ति धारता नथी.

७. विद्वान् पुरुष ज्ञान चक्षुथी सर्व पदार्थने स्वस्वभावमांज रहेता देखे छे. संयुक्त वस्तुनो वियोग थाय छे, पण कोइ वस्तु पोतानो मूल स्वभाव तजी देती नथी, एम ज्ञानी पुरुषो साक्षात् अनुभवी पोते स्वस्वभावमांज स्थित रहे छे. रागद्वेषने तजी सर्वत्र समभावथीज अनुवर्तन करनाराज विद्वान् गणाय छे.

अविद्या तिमिरध्वंसे, दृशा विद्याञ्जन स्पृशा ॥
पश्यन्ति परमात्मान, मात्मन्येव हि योगिनः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनित्य, अशुचि, अने अनात्मिक परवस्तुने नित्य पवित्र अने पोतानी लेखवी ए अविद्यानुं लक्षण छे, अने वस्तुने वस्तुगत—यथार्थ जेवा रुपमां होय तेवा रूपमां बरावर समजवी ए विद्यानुं लक्षण छे; एम योगाचार्योए शास्त्रमां कह्युं छे.

२. आत्मा नित्य अविनाशी छे, तेनी कदापि नास्ति थतीज नथी. सदा सर्वदा तेनी अस्तितता छे, अने आ आत्माने थतो पर संयोग विनाशशील छे, तेनो तो अवश्य वियोग थवानोज छे. एवो जेने निश्चय थयो छे तेने मोह चोरटो छली शकतो नथी. सद्विद्या

शुद्धेऽपि व्योम्नि तिमिरा, द्रेखाभिमिश्रता ...के छे. पण
विकारै र्मिश्रता भाति, तथात्मन्य विवेकतः ॥ ३ ॥

यथा योधैः कृतं युद्धं, स्वामिन्येवोपचर्यते ॥
शुद्धात्मन्य विवेकेन, कर्म स्कंधोऽर्जितं तथा ॥ ४ ॥

इष्टकाद्यपि हि स्वर्णं, पीतोन्मत्तो यथेक्षते ॥
आत्माभेदभ्रमस्तद्ध, देहादावविवेकिनः ॥ ५ ॥

इच्छन्न परमान् भावान्, विवेकाद्रेः पतत्यधः ॥
परमं भावमन्विच्छन्, नाविवेके निमज्जति ॥६॥
आत्मन्येवात्मनः कुर्यात्, यः षट्कारक संगतिम् ॥
क्वाविवेकज्वरस्यास्य, वैषम्यं जड मज्जनात् ॥७॥
संयमास्त्रं विवेकेन, शाणेनोत्तेजितं मुनेः ॥
धृतिधारोल्बणं कर्म, शत्रुच्छेद क्षमं भवेत् ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. क्षीरनीरनी पेरे सर्वदा एकमेक मलीने रहेला कर्म अने जीवने जे व्यक्तपणे जूदा करी नांखे छे ते मुनि–हंस विवेकवान् गणाय छे. सद्विवेक जाग्या विना अनादि अनंत कालथी संयुक्त थइ रहेला कर्म अने जीवने कोइ कदापि स्पष्ट रीते जूदा करी शकेज नहिं. तेम करवाने सद्विवेकनी आवश्यकता रहेज छे.

२. देहज आत्मा छे अथवा आत्मा देहथी जूदो नथी एवो अविवेक तो जन्म जन्ममां अविद्याना वशथी सुलभज छे. पण आ देह आत्माथी खास जूदोज छे, केमके देह तो विनाशी छे अने आत्मा अविनाशी छे, देह तो जड छे अने आत्मा सचेतन–चैतन्य

युक्तछे, एवो विवेक कोटिगमे भवोमां भाग्य योगेज थइ शकेछे. अविद्यानो नाशथये छते सद्विवेक जागी शकेछे. ॥

३. शुद्ध–निर्मल आकाशमां पण चक्षु विकारथी जेम रातुं पीळुं देखायछे, तेम अविवेकथी आत्मामां विविध विकारो प्रतिभासेछे. आत्मा आकाशवत् निरंजन छतां उपाधि संबंधथी मलीन- विकारी भासेछे, सर्व उपाधि–संबंध दूरथये छते आत्मा सहज स्वभावमां स्थित थइ रहेछे, निर्मल निष्कषायज आत्मानो सहज स्वभावछे. राग द्वेषादिक उपाधि दूरथवाथी स्फटिक रत्ननी स्वभाविक कांति जेवो निर्मल आत्म धर्म प्रगट थइ जायछे. ॥

४. जोके राजाना योद्धाओ युद्ध करेछे छतां राजाज जीत्यो हार्यो कहेवायछे, तेम शुभाशुभ कर्मथीज सुख दुःख प्राप्त थायछे छतां अविवेकथी अमुक आत्माए अमुक उपर अनुग्रह या निग्रह कर्यो कहेवायछे. कर्मनी विचित्रताथी फलनी विचित्रता थायछे, छतां आ कार्य माराथीथयुं; मारा विना आवुं काम बनी शकेज नहिं, हुंज सर्वनुं पालन करुंछुं; माराविना कोइ पालक नथीज एवुं कर्त्तृत्व अभिमान करवुं ए केवल अविवेकनुंज जोरछे, सुविवेकी पुरुषो एवुं मिथ्याभिमान कदापि करताज नथी तेवा प्राज्ञ पुरुषो तो सर्वमां साक्षी पणुंज सेवेछे. ॥

५. जेम धंतूरो पीने गांडो थयेलो आदमी सर्वत्र सोनुंज देखेछे

समशीलं मनो यस्य, स मध्यस्थो महामुनिः ॥३॥
स्व स्वकर्म कृतावेशाः, स्व स्वकर्म भुजो नराः ॥
नरागं नापि च द्वेषं, मध्यस्थ स्तेषु गच्छति ॥ ४ ॥
मनः स्याद् व्यापृतं यावत्, परदोष गुण ग्रहे ॥
कार्यं व्यग्रं वरं तावन्, मध्यस्थे नात्मभावने ॥ ५ ॥
विभिन्ना अपि पंथानः, समुद्रं सरितामिव ॥
मध्यस्थानां परंब्रह्म, प्राप्नुवन्त्येकमक्षयम् ॥ ६ ॥
स्वागमं राग मात्रेण, द्वेषमात्रात्परागमं ॥
न श्रयामस्त्यजामो वा, किंतु मध्यस्थया दृशा ॥७॥
मध्यस्थया दृशा सर्वे, ष्वपुनर्बंधकादिषु ॥
चारिसंजीवनी चार, न्यायादाशा स्महे हितं ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. मध्यस्थता आदरवार्थीज सद्विवेक प्राप्त थाय छे, अथवा विवेकवंतज मध्यस्थता आदरे छे, माटे मध्यस्थ रहेवा शास्त्रकार उपदिशे छे. जेथी अपवाद पात्र थवुं न पडे एवी अंतरदृष्टिथी मध्य-

स्थता आदरवी युक्त छे. मध्यस्थता सेववाथी सबल युक्तिनो योग्य आदर करवामां आवे छे अने कुतर्क करवारूपी वाल चपलता दूर करवानुं बने छे.

२. मध्यस्थनुं मनरुपी वाछरडुं युक्तिरुपी गौने अनुसरीने चाले छे. अर्थात् मध्यस्थ माणसने आपमतिनी खेंचाखेंच होती नथी. परंतु तुच्छ आग्रहीनुं मनरुपी मांकडुं तो युक्ति युक्त वातनुं पण खंडनज करवा तत्पर थइ जाय छे. ते केवल आपमति मुजब वातने खेंची जाय छे, तेथी साची वातने पण खोटी पाडवा प्रयत्न करवा ते चुकतुं नथी. मध्यस्थ मन तो सत्यनेज सत्य तरीके स्वीकारे छे.

३. स्वइष्ट अर्थ साधवामां कुशल अने अन्य अर्थमां उदासीन एवा सर्व नयोमां जे समभावे रहे छे, लगारे हठ ताण करताज नथी ते महामुनिने मध्यस्थ जाणवा. मध्यस्थ मुनि सर्व नय वचनोने सापेक्षपणे विचारी स्वहित साधवामां तत्पर रहे छे.

४. सर्व कोइ पोतपोताना कर्मानुसारे चेष्टा करे छे अने ते मुजब फल भोगवे छे तेमां मध्यस्थ राग के रोष करतोज नथी. सर्वत्र साक्षी भावे वर्ततां स्वहित सुखे साधी शकाय छे. माटे सर्व अनुकूल या प्रतिकूल संयोगोमां राग द्वेष त्यजीने सर्वदा समभावे रहेवा सावधान थवुं युक्त छे.

चित्ते परिणतं यस्य, चारित्रमकुतोभयं ॥
अखंडज्ञानराज्यस्य, तस्य साधोः कुतो भयं ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जेने कोइनी कंइपण परवा नथी एवा एक सरखा उदासीन स्वभाववाळा महापुरुषने भय भ्रांति जन्य कष्ट परंपरा होयज केम? मध्यस्थ दृष्टि महापुरुष सदा निर्भय भयभ्रांतिथी मुक्तज रहे छे.

२. भारे भयथी भरेला संसार सुखथी शुं? तेथी सर्युं. भय भरेलुं सुख ते दुःखरूपज छे. सर्वथा भय रहित सहज आत्मिक सुखज सुखरूप गणवा योग्य छे. आधि व्याधि अने उपाधि जन्य दुःखथी भरेला संसारमां सुखमात्र नामनुंज छे. जन्म मरणथी मुक्त करे एवुं स्वभाविक ज्ञान सुखज साचुं छे.

३. सम्यग् ज्ञानवडे ज्ञेय-पदार्थने यथार्थ जोनार मुनिने भय राखवानुं शुं प्रयोजन छे? सहज सुखमां झीली रहेला मुनिने पुद्गलिक सुखनुं प्रयोजन नथी. पुद्गल उपरथी मूर्च्छा उठी जवाथी सहज निवृत्ति सुख संपजे छे.

४. निर्मल ज्ञानरूपी–शस्त्रने धारी, मोहनी फोजनो घात करनार मुनि संग्रामना मोखरे उभेला हाथीनी पेरे लगारे बीता नथी. तीक्ष्ण ज्ञान धारावडे सावधानपणे सकळ मोह सुभटोने विदारी नांखी शिवश्रीने संपादन करे छे.

५. जेना मनमां खरी ज्ञानकला जागी छे ते सदा भय रहित आनंदमां मस्त रहे छे, जे वनमां मयूरो विचरे छे त्यां भुजंगनो भय होयज केम ? ज्यां केसरी क्रीडा करतो होय त्यां गजनो प्रचार संभवेज केम ? ज्यां जळहळतो सूर्य उदय पाम्यो होय त्यां अंधकार रहेवा पामेज केम ? तत्त्व दृष्टि पण तेवीज प्रभाववाळी छे.

६. मोहास्त्रने निष्फल करवा समर्थ ज्ञान बख्तर जेणे धार्युं छे तेने कर्म संग्राममां भय के भंग होयज शानो ? तत्त्व दृष्टिने मोहनो भयज नथी. ते गमे तेवा सम या विषम संयोगोमांथी सावधानपणे पसार थइ जाय छे.

७. मोहथी मुंझायेला जीवो भयभीत थका भव अटवीमां भम्याज करे छे. मूढ जीवो भयभीत थका कंप्याज करे छे. परंतु प्रबल ज्ञानवंतनुं तो एक पण रुंवाडुं कंपतुं नथी. ते तो निर्भयपणे स्वभाविक आत्म सुखमां मग्न रहे छे.

८. जेना चित्तमां निर्भय चारित्र परिणम्युं छे एवा अखंड

ज्ञान तेजथी तपता साधु मुनिराजने शाथी भय संभवे? शुद्ध चारित्रवंतने कशो भय नथी. शुद्ध चारित्र सर्व भयने दूर करी अखंड अनंत सुख साधी शके छे.

॥ १८ ॥ अनात्मशंसाष्टकम् ॥

गुणैर्यदि न पूर्णो ऽसि, कृतमात्म प्रशंसया ॥
गुणैरेवासि पुर्णश्चेत्, कृतमात्म प्रशंसया ॥ १ ॥
श्रेयोद्रुमस्य मूलानि, स्वोत्कर्षांभः प्रवाहतः ॥
पुण्यानि प्रकटी कुर्वन्, फलं किं समवाप्स्यसि ॥ २ ॥
आलंबिता हिताय स्युः, परैः स्वगुणरश्मयः ॥
अहो स्वयं गृहीतास्तु, पातयन्ति भवोदधौ ॥३॥
उच्चत्त्व दृष्टि दोषोत्थ, स्वोत्कर्षज्वर संज्ञिकं ॥
पूर्वपुरुष सिंहेभ्यो, भृशं नीचत्व भावनं ॥ ४ ॥
शरीररूप लावण्य, ग्रामारामधनादिभिः ॥
उत्कर्षः परपर्यायै, श्चिदानन्द घनस्यकः ॥५॥
शुद्धाः प्रत्यात्म साम्येन, पर्यायाः परिभाविताः ॥
अशुद्धाश्चा ऽपकृष्टत्वान्, नोत्कर्षाय महामुनेः ॥ ६ ॥

क्षोभं गच्छन् समुद्रोऽपि, स्वोत्कर्षपवनेरितः ॥
गुणौघान् बुद्बुदी कृत्य, विनाशयसि किं मुधा ॥७॥
निरपेक्षानवच्छिन्ना, नंतचिन्मात्रमूर्तयः ॥
योगिनो गलितोत्कर्षा, प्रकर्षानल्पकल्पनाः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जो तुं गुणोथी पूर्ण नथी तो आत्म-प्रसंसा करवाथी सर्युं. तेमज जो तुं गुणथी पूर्ण छे तोपण आत्म-प्रशंसा करवानुं कंइपण प्रयोजन नथी. केमके गुणहीनने खोटी आत्म प्रशंसाथी कंइ फायदो थतो नथी. तेमज संपूर्ण गुणवंतने कृत कृत्यपणाथी परस्पृहा नष्ट थइ जवाथी पोतानी प्रशंसा पोताना मुखे करवानुं कंइ पण प्रयोजन रहेतुंज नथी.

२. जेम जलना प्रबल प्रवाहथी वृक्षनां मूलाडीयां उघाडां पडी जवाथी तेने फल वेसतां नथी, तेम आत्म-उत्कर्षथी करेलां सुकृतोने प्रगट करी वखाणवाथी विशिष्ट आत्म लाभ संपादन थइ शकतो नथी.

३. आपणा गुणोनुं बीजा अवलंबन करे ते हितकारी थाय छे, पण जो पोताना गुण पोतेज गावा बेसे तो तेथी अधोगतिनी प्राप्ति थाय छे. गुणग्राही जनोने गुणीना गुण गावा उचित अने हितकारी छे पण गुणी माणसे स्वमुखे स्वगुण गावा अनुचित अने अहितकारीज छे. माटे मोक्षार्थी जनोए सदा गुणग्राही थवा साथे आत्मश्लाघानो समूळगो त्याग करवो उचित छे. स्वश्लाघाथी प्राणी लघुतानेज पामे छे.

४. आपणामां अन्य करतां अधिकता मानवारूपी दोषथी उत्पन्न थयेला स्वाभिमानरूपी ज्वरने शान्त करवानो उत्तम उपाय छे के आपणे पूर्व पुरुष सिंहोथी लघुता भाववी. पूर्व पुरुष सिंहोना पवित्र चरित्रने सारी रीते संभारी याद लावतां आपणुं गुमान आपो आप गळी जाय छे.

५. शरीर, रुप, लावण्य, ग्राम, आराम, अने धन विगेरे पर पर्यायोवडे स्व उत्कर्ष मानवो आत्मानंदी जीवने बिलकुल उचित नथी. तेवी वस्तु वडे तो केवळ पुद्गलानंदी जीवोज गर्व करे छे, पण आत्मानंदी करता नथी.

६. ज्ञानादिक शुद्ध पर्यायो पण प्रत्येक आत्माने सरीखा होवाथी अने शरीर विगेरे अशुद्ध पर्यायो अपकृष्ट (नजीवा) होवाथी ते वडे महामुनिने स्वोत्कर्ष करवो लायक नथी. शुद्ध पर्यायोवडे

पण गर्व करवो युक्त नथी तो नजीवा शरीररूप लावण्यादिक अशुद्ध पर्यायोवडे तो गर्व करवोज केम घटे ?

७. गुरु महाराज शिष्यने उपदेशेछे के भाइ तुं दीक्षित छतां स्वोत्कर्ष वडे संयमनो क्षोभ करीने गुण रत्नोनो व्यर्थ विनाश शा माटे करे छे ? गमे तेटला गुणने पामेलो संयमी स्वगुणनो गर्व करवाथी हानिज पामे छे.

८. स्पृहा रहित अने अखंड अनंत ज्ञाननाज नमुनारूप योगी जनो स्व उत्कर्ष अने पर अपकर्ष संबंधी सर्व कल्पनाओथी मुक्तज रहे छे. स्व स्वरूपमां स्थित योगीजनो केवल निःस्पृह होवाथी आप वडाइ के परनिन्दा करताज नथी. तेओ तो परम सुखमय निवृत्ति मार्गज पसंद करे छे, पर परिणतिरूप कुत्सित प्रवृत्ति तेमने पसंद पडतीज नथी.

॥ १९ ॥ तत्त्वदृष्ट्यष्टकम् ॥

रूपे रूपवती दृष्टि, र्दृष्ट्वा रूपं निमुह्यति ॥
मज्जत्यात्मनि नीरुपे, तत्त्वदृष्टिस्त्वरूपीणी ॥ १ ॥
भ्रमवाटी बहिर्दृष्टि, र्भ्रमच्छाया तदीक्षणं ॥

अभ्रान्तस्तत्त्वदृष्टिस्तु, नास्यां शेते सुखाशया ॥ २ ॥
ग्रामारामादि मोहाय, यद्दृष्टं बाह्यया दृशा ॥
तत्त्वदृष्ट्या तदेवांत, र्नीतं वैराग्य संपदे ॥ ३ ॥
बाह्यदृष्टिः सुधा सार, घटिता भाति सुंदरी ॥
तत्त्वदृष्टेस्तु सा साक्षा, द्विण्मूत्रपिठरोदरी ॥ ४ ॥
लावण्य लहरी पुण्यं, वपुःपश्यति बाह्यदृक् ॥
तत्त्वदृष्टिः श्वकाकानां, भक्ष्यं कृमिकुलाकुलं ॥ ५ ॥
गजाश्वैर्भूपभवनं, विस्मयाय बहिर्दृशः ॥
तत्राश्वेभवनात्कोऽपि, भेदस्तत्त्वदृशस्तुन ॥ ६ ॥
भस्मना केशलोचेन, वपु र्धृतमलेन वा ॥
महान्तं बाह्यदृग्वेत्ति, चित्साम्राज्येन तत्त्ववित् ॥ ७ ॥
न विकाराय विश्वस्यो, पकारायैवनिर्मिताः ॥
स्फुरत्कारुण्यपीयूष, वृष्टयस्तत्त्व दृष्टयः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. बाह्यदृष्टि जीव पुद्गलिक रूप जोइने मुंझाय छे-मूढ बनी जाय छे, पण अरूपी एवी तत्त्व दृष्टि तो निर्मल निराकार आत्म स्वरूपमांज मग्न थइ रहेछे. बाह्यदृष्टि बहार दोडे छे. अने अंतरदृष्टि स्वभावमां रमे छे.

२. बाह्यदृष्टि ए भ्रमनी वाडी छे अने बाह्यदृष्टिथी जोवुं ए भ्रमनी छाया छे. तेमां भ्रांति रहित तत्त्वदृष्टि तो सुखनी आशाथी सूतो नथी. पण पुद्गलानंदी-बाह्यदृष्टि जरुर तेमां सुख बुद्धिथी विश्रांति करे छे.

३. गाम, आराम आदि बाह्यदृष्टिथी जोतां जरुर जीवने मोह उपजावे छे, पण तत्त्वदृष्टिथी जोतां तो ते वैराग्यरसनी वृद्धि माटेज थाय छे. बाह्यदृष्टि जीव मधनी मांखीनी जेम तेमां मुंझाइ मरे छे, पण तत्त्वदृष्टि तो साकरनी मांखीनी पेरे मिष्ट स्वाद लइ तेमांथी सुखे मुक्त थइ शके छे. तत्त्वदृष्टिपणुं जागतां चक्रवर्ती पोते पोतानी सकल समृद्धिने सहजमां तजी दइ संयमनो स्वीकार करे छे. परंतु मूढ दृष्टि एवो भीखारी पोतानुं रामपात्र पण त्यजी शकतो नथी, ए सर्व मोहनोज महिमा छे.

४. बाह्यदृष्टि जीव, सुंदरी (स्त्री) ने अमृतना निचोलथी घ-

डेली माने छे, पंण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने विष्टा मूत्रादिक अशुचियुक्त देहवालीज माने छे. बाह्यदृष्टि कोइ सुंदर स्त्रीने देखी तेणीना रूपलावण्यमां मुंझाइ तेमां पतंगनी पेरे झंपलाय छे, पण तत्त्वदृष्टि तो तेणीने अशुचिमय समजीने तेथी तदन दूरज रहेवा इच्छेछे. तत्त्वदृष्टि विषय सुखने विष समानज लेखे छे.

५. बाह्यदृष्टि जीव शरीरने लावण्य लहरीथी पवित्र माने छे, पण तत्त्वदृष्टि तो नाना प्रकारना करमीयां विगेरेथी भरपूर देहने फक्त कागडा कूतरावडे भक्षण करवा योग्यज माने छे. तेने बाह्यदृष्टिनी पेरे क्षणिक, अशुचिं अने भौतिक देह प्रपंचमां मुंझाइ स्वकर्तव्य विमुख थवानुं होतुं नथी. ते तो क्षण विनाशी देह द्वारा बनी शके तेटलुं स्वहित साधी लेवा सावधान थइ रहे छे पण विनाशी देहनो विश्वास करतोज नथी.

६. बाह्यदृष्टि जीव राजाना महेलमां हाथी घोडानी साहेबी जोइ चकित थइ जाय छे, परंतु तत्त्वदृष्टिने तो तेमां हाथी घोडाना वनथी कंइ विशेष लागतुं नथी. तेने तो तेवो महेल अने तेवुं वन समानज लागे छे.

७. बाह्यदृष्टि जीव, भस्म लगाववाथी, केशनो लोच करवाथी अने मलमलीन देह राखवाथी कोइने महंत माने छे. पण तत्त्वदृष्टि तो तेनी अंतर समृद्धिथीज तेने तेवो लेखे छे. तत्त्वदृष्टि आत्मा

बाह्यदृष्टिनी पेरे उपरना डोळडिमाक मात्रथी कोइने मोटो मानी लेता नथी. तेतो तेना सद्भूत गुणोनी सारी रीते परीक्षा करीनेज तेम माने छे.

८. अत्यंत करुणारुपी अमृतने वर्षनारा तत्त्वदृष्टि पुरुषो विश्वना तिलमात्र अहितने माटे नहिं, किंतु केवळ उपकारने माटेज निर्माण थयेला छे तत्त्वदृष्टि महापुरुषोनो जन्म लोकना अभ्युदय माटेज थाय छे. तेओ परमार्थथी अंधलोकोने, आंखो आपीने उद्धरेछे. तेओ परमार्थ पंथ बतावीने अवळे रस्ते चढेलाओने सवले रस्ते दोरे छे. तेओज अनाथना नाथ अने अशरणना शरण छे. तेओज विश्वना खरा मित्र, बंधु के पिता छे, अने तेथीज सदा सुखना अर्थी जनोवडे अवलंबवा योग्य छे. तेवा निःस्वार्थ मित्र विना विश्वनो कदापि उद्धार थवानोज नथी. ज्यारे त्यारे तेवा निष्कारण बंधु मळ्येज मुक्ति मळवानी छे तेथी मोक्षार्थी जनोए तेवा जगत् बंधुनीज जपमाळा गणवी योग्य छे. तेवा परोपकारी पितानी सेवा साचा दिलथी करनारा साधक पुरुषोनी सिद्धि ज्यां त्यां सुखेथी थइ शके छे, माटे तेज करवा योग्य छे.

॥ २० ॥ सर्व समृद्धि—अष्टकम् ॥

बाह्यदृष्टि प्रचारेषु, मुद्रितेषु महात्मनः ॥
अंतरेवावभासन्ते, स्फुटाः सर्वास्समृद्धयः ॥ १ ॥
समाधि नंदनं धैर्यं, दंभोलिः समता शची ॥
ज्ञानं महा विमानं च, वासवश्रीरियं मुनेः ॥ २ ॥
विस्तारित क्रिया ज्ञान, चर्म छत्रो निवारयन् ॥
मोहम्लेच्छ महावृष्टिं, चक्रवर्ती न किं मुनिः ॥ ३ ॥
नवब्रह्मसुधाकुंड, निष्ठाधिष्ठायको मुनिः ॥
नागलोकेशवद् भाति, क्षमां रक्षन् प्रयत्नतः ॥ ४ ॥
मुनिरध्यात्म कैलाशे, विवेक वृषभ स्थितः ॥
शोभते विरतिज्ञप्ति, गंगागौरियुतः शिवः ॥ ५ ॥
ज्ञानदर्शनचंद्रार्क, नेत्रस्य नरकच्छिदः ॥
सुखसागर मग्नस्य, किं न्यूनं योगिनो हरेः ॥ ६ ॥
या सृष्टिर्ब्रह्मणो बाह्या, बाह्यापेक्षावलंबिनी ॥
मुनेः परान पेक्षांत, गुणसृष्टि स्ततो ऽधिका ॥७॥

रत्नै स्त्रिभिः पवित्रा या, श्रोतोभि रिव जान्हवी ॥
सिद्धयोगस्य साप्यर्हत्, पदवी न दवीयसी ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

बाह्यदृष्टिपणानो दोष नष्ट थये छते महात्मा पुरुषने अंतरमांज सर्व समृद्धि स्फुटतर भासे छे. आम बनवाथी तत्त्वदृष्टिपणुं अधिकाधिक निर्मल थतुं जाय छे निर्मल तत्त्वदृष्टिना योगे सकल समृद्धि सहज घटमां प्रगटे छे. जेथी सहजानन्द युक्त थवाथी विषयासक्ति विगेरे विकारो स्वतः विनाश पामे छे. अने निर्मल ज्ञानादि सद्गुणो पूर्ण रीते प्रगटे छे.

२. समाधिरुपी नंदनवन, धैर्यरुपी वज्र, समतारुपी इंद्राणी, अने ज्ञानरूपी विशाळ विमान, एवी इंद्रनी साहेबी मुनिने घटमांज प्रगटे छे. तत्त्वदृष्टि निर्ग्रंथ मुनिराजने इंद्रथी अधिक साहेबी अंतरमां प्रगटे छे.

३. विशाल ज्ञान अने क्रियारुपी चर्मरत्न अने छत्ररत्नथी मोहरुपी म्लेच्छ राजानी महावृष्टिने निवारता मुनिराज चक्रवर्तीनी बरोबरी करे छे. निर्मळ ज्ञान दर्शन अने चारित्ररूपी रत्नत्रयी आ-

राधक मुनिराज कोइ रीते चक्रवर्तीथी न्यून नथीज, किंतु अधिकज छे.

४. नवनवा ज्ञानामृतना कुंडमां मग्न रही प्रयत्नथी क्षमानुं पालन करनारा मुनि, पृथ्वीनुं पालन करनारा नागेंद्रनी पेरे शोभे छे. अध्यात्म ज्ञानरूपी अमृतना कुंडमांज मग्न रही सहज शांतिने साक्षात् अनुभवनारा क्षमाश्रमणो आत्मगुणथी नागेंद्र करतां अधिक शोभे छे.

अध्यात्मरुपी कैलाशमां विवेकरूपी वृषभ उपर आरुढ थयेला मुनिज्ञप्ति (ज्ञान) अने निवृत्ति (चारित्र) युक्त होवाथी गंगा अने गौरी युक्त शिव–शंकरनी पेरे शोभे छे. तत्त्वथी जोतां अध्यात्म गिरिना उच्च शिखर उपर रहेला अने सद्विवेक वृषभ उपर स्वार थइ सम्यग् ज्ञानक्रियाने समताथी सेवनारा निर्ग्रंथ अणगारो सद्-गुणोमां कोइ रीते शिव–शंकरथी उतरता नथी.

६. ज्ञान अने दर्शनरूपी चंद्र अने सूर्य जेवां निर्मल नेत्रोवाळा, नरकने छेदवावाला अने सुखसागरमां शयन करनारा मुनिराज कोइ रीते हरिथी न्युन नथी. परमार्थथी विष्णु करतां वधारे समृद्ध छे

७. परस्पृहारहित सहज अंतरगुण सृष्टिने करनारा मुनिराज बाह्य वस्तुओनी अपेक्षावाली बाह्य सृष्टिने रचनार ब्रह्मा करतां बहु चढि-

याता छे. निःस्पृहपणे आत्म गुणोनेज प्रगट करनारा मुनियो उपाधि युक्त बाह्य सृष्टिना करनारा ब्रह्माने सद्गुणोथी उल्लंघी जाय एमां आश्चर्य शुं ? निरुपाधिक गुणसृष्टि करवी एज मुनिनुं कर्तव्य छे.

८. जेम त्रिवेणीथी गंगा नदी पवित्र मनाय छे, तेम रत्नत्रयीथी पवित्र गणाती श्री तीर्थंकरनी पद्वी पण सिद्धयोगी महापुरुष मुनिराजने कंइ दुर्लभ नथी. जेणे मन वचन अने कायाने बराबर नियममां राखी योग साधना करी छे एवा सिद्धयोगी महापुरुषने तीर्थंकर महाराजनी परम पवित्र पद्वी पामवी पण सुलभज छे.

॥२१॥ कर्मविपाक ध्यानाष्टकम् ॥

दुःखं प्राप्य न दीनः स्यात्, सुखं प्राप्य च विस्मितः ॥
मुनिः कर्म विपाकस्य, जानन् परवशं जगत् ॥१॥
येषां भ्रूभंग मात्रेण, भज्यन्ते पर्वता अपि ॥
तैरहो कर्म वैषम्ये, भूपैर्भिक्षा ऽपि नाप्यते ॥२॥
जाति चातुर्य हीनो ऽपि, कर्मण्यभ्युदया वहे ॥
क्षणाद्रंको ऽपि राजा स्या, च्छत्रच्छन्नादिगंतरः ॥३॥

विषमा कर्मणः सृष्टि, र्दृष्टा करभपृष्ठवत् ॥
जात्यादि भूति वैषम्या, त्का रति स्तत्र योगिनः ॥४॥
आरूढा प्रशमश्रेणिं, श्रुत केवलिनो ऽपि च ॥
भ्राम्यन्ते ऽनन्त संसार, महो दुष्टेन कर्मणा ॥५॥
अर्वाक् सर्वापि सामग्री, श्रांतेव परितिष्ठति ॥
विपाकः कर्मणः कार्य, पर्यंत मनुधावति ॥ ६ ॥
असाव चरमावर्ते, धर्मं हरति पश्यतः ॥
चरमावर्ति साधोस्तु, छलमन्विष्य हृष्यति ॥ ७ ॥
साम्यं बिभर्त्ति यः कर्म, विपाकं हृदि चिंतयन् ॥
स एव स्याच्चिदानन्द, मकरन्द मधुव्रतः ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सर्व जगजंतुओ उदित कर्माऽनुसारेज सुख दुःख पामे छे एवुं समजनारा मुनि दुःखने पामीने दीन थता नथी तेम सुखने पामीने चकित थता नथी. मुनि समजे छे के जगत् मात्र कर्म विपाकने परवश छे.

याता छे. निःस्पृहपणे आत्म गुणोनेज प्रगट करनारा मुनियो उपाधि युक्त बाह्य सृष्टिना करनारां ब्रह्माने सद्गुणोथी उल्लंघी जाय एमां : आश्चर्य शुं? निरुपाधिक गुणसृष्टि करवी एज मुनिनुं कर्तव्य छे.

८. जेम त्रिवेणीथी गंगा नदी पवित्र मनाय छे, तेम रत्नत्र-यीथी पवित्र गणाती श्री तीर्थंकरनी पद्वी पण सिद्धयोगी महापुरुष : मुनिराजने कंइ दुर्लभ नथी. जेणे मन वचन अने कायाने बराबर नियममां राखी योग साधना करी छे एवा सिद्धयोगी महापुरुषने तीर्थंकर महाराजनी परम पवित्र पद्वी पामवी पण सुलभज छे.

॥२१॥ कर्मविपाक ध्यानाष्टकम् ॥

दुःखं प्राप्य न दीनः स्यात्, सुखं प्राप्य च विस्मितः॥
मुनिः कर्म विपाकस्य, जानन् परवशं जगत् ॥१॥
येषां भ्रूभंग मात्रेण, भज्यन्ते पर्वता अपि ॥
तैरहो कर्म वैषम्ये, भूपैर्भिक्षा ऽपि नाप्यते ॥२॥ कर्मना
जाति चातुर्य हीनो ऽपि, कर्मण्यभ्युदया वहे ॥ ॥ सम-
क्षणाद्रंको ऽपि राजा स्या, च्छत्रच्छन्नादिगंतरः ॥३॥ ॥णसोंढुं

विषमा कर्मणः सृष्टि, दृष्टा करभपृष्ठवत् ॥
जात्यादि भूति वैषम्या, त्का रति स्तत्र योगिनः ॥४॥
आरूढा प्रशमश्रेणिं, श्रुत केवलिनो ऽपि च ॥
भ्राम्यन्ते ऽनन्त संसार, महो दुष्टेन कर्मणा ॥५॥
अर्वाक् सर्वापि सामग्री, श्रांतेव परितिष्ठति ॥
विपाकः कर्मणः कार्य, पर्यंत मनुधावति ॥ ६ ॥
असाव चरमावर्ते, धर्म हरति पश्यतः ॥
चरमावर्ति साधोस्तु, छलमन्विष्य हृष्यति ॥ ७ ॥
साम्यं बिभर्त्ति यः कर्म, विपाकं हृदि चिंतयन् ॥
स एव स्याच्चिदानन्द, मकरन्द मधुव्रतः ॥८॥

॥ रहस्यार्थ ॥

सर्वे जगज्जंतुओ उदित कर्मानुसारेज सुख दुःख पामे छे एवुं जाणनारा मुनि दुःखने पामीने दीन थता नथी तेम सुखने पामीने चकित थता नथी. मुनि समजे छे के जगत् मात्र कर्म विपाकने वश छे.

२. जेमनी भृकुटी फरतां पर्वतोनो पण भुको थइ जाय एवा भूपोने विषमकर्म योगे भिक्षा सरखी पण मलती नथी. दैव विपरीत छते मोटा भूपालने पण पेट भरवाने फांफां मारवां पडे छे.

३. उत्तमजाति अने चतुराइ रहित छतां अत्यंत अनुकूल कर्म योगे क्षणवारमां रांक पण एक छत्र राज्य पामे छे. प्रबल पुन्यनो उदय थये छते भीखारी जेवो माणस पण विशाल राज्यवालो राजा थइ पडे छे.

४. कर्मनी रचना उंटना वरडानी जेवी वांकीज छे केमके, जातिकुल, बुद्धि, बल, ऐश्वर्य प्रमुखमां प्रगट विषमता देखाय छे, सर्व कोइने ते एक सरखां होतां नथी. पूर्वकृत कर्मअनुसारे ते सारां नरसां के वधारे घटाडे होइ शके छे. कर्मनी विचित्रता प्रमाणे फलनी विचित्रता समजनारा मुनिजनोने तेवी विषम स्थितिमां रति-प्रीति होवी घटे नहिं, तेमने प्राप्त सुख दुःखमां समभावज राखवो युक्त छे.

५. अहो ! अति आश्चर्यनी वात छे के उपशमश्रेणि उपर आरूढ थयेला श्रुतकेवळी (चौद पूर्वधर) मुनियो पण दुष्ट कर्मना योगे पतित थइने अनंत संसार परिभ्रमण करे छे. ज्यारे आवा समर्थ पुरुषोने पण कर्मविपाक छळे छे तो बीजा सामान्य माणसोनुं

तो शुं कहेवुं ? दुष्ट कर्मनी प्रबलता पासे प्राणीओनुं कंइ पण चालतुं नथी.

६. आत्म साधकनी सकल सामग्री कार्यसिद्धि थयां पहेलांज थाकी गइ होय तेम अटकी पडे छे. पण कर्म–विपाक तो स्वकार्य पर्यंत कर्मकारकने अनुसर्या करे छे. ते तो तेनुं शुभाशुभ फल तेना करनारने चखाडया विना विरमतोज नथी. कर्मना प्रबल वेगने कोइ रोकी शकतुं नथी. कर्मनो विपाक पोतानी पूर्ण सत्ता कर्मना करनारनी उपर बजावे छे. कायर पुरुष तेनी पासे फावी शकतो नथी. समर्थ साधक तो रागद्वेष कर्मनी जड काढी सकल कर्मनुं मूलथीज निकंदन करे छे.

७. आ कर्म–विपाक दीर्घ संसारी जीवना धर्मने जोतां जोतांमां हरी लेछे अने परित्त संसारी साधुनुं तो छल जोइने भारे खुशी थाय छे. कर्मने कंइ शरम नथी ते वात अक्षरे अक्षर साची छे. ते परम पवित्र धर्म महाराज साथे पण पूर्ण वैर राखे छे. धर्मराजानुं शरण लेनार साथे पोतानुं वैर शोधतोज फरे छे. अने लाग फावे तो वैर वाळवानुं चूकतो नथी. गमे तेटली आत्म उन्नतिने पामेलाने पण स्व साध्यथी चूकावी नीचे गबडावी पाडे छे. आवा दुष्ट कर्म–विपाकथी वेगला रहेवा इच्छनारे तेनी रागद्वेषरूपी माठी जड खोदी काढवी जोइये. रागद्वेषनो समूलगो नाश करवाथी मोहनो सर्वथा

क्षय थाय छे, अने मोहनो क्षय थवाथी सकल कर्म वर्गनो स्वतः क्षय थइ जाय छे.

८. कर्मना विपाकने हृदयमां चिंतवतो छतो जे सम विषम स्थितिमां समभावज राखे छे—तेवे वखते जे हर्ष विषाद पामतो नथी, तेज महापुरुष ज्ञानामृतनो रस चाखवा समर्थ थइ शके छे. तेवा समर्थ पुरुष सहज सहजानंद मग्न थइ अंते अखंड शाश्वत सुखना भागी थइ शके छे.

॥ २२ ॥ भव–उद्वेगाष्टकम् ॥

यस्य गंभीर मध्यस्या, ज्ञानं वज्रमयं तलं ॥
रुद्धा व्यशनशैलौघैः, पंथानो यत्र दुर्गमाः ॥१॥
पाताल कलशा यत्र, भृतास्तृष्णा महानिलैः ॥
कषायाश्चित्त संकल्प, वेला वृद्धिं वितन्वते ॥२॥
स्मरौर्वाग्निर्ज्वलत्यंत, र्यत्र स्नेहेन्धनः सदा ॥
यो घोर रोगशोकादि, मत्स्यकच्छप संकुलः ॥३॥
दुर्बुद्धि मत्सरद्रोहै, र्विद्युद्दुर्वात गर्जितैः ॥
यत्र सां यात्रिका लोकाः, पतन्त्युत्पात संकटे ॥४॥

ज्ञानी तस्माद् भवांभोधे, र्नित्योद्विग्नो ऽति दारुणात् ॥
तस्य संतरणोपायं, सर्वयत्नेन कांक्षति ॥ ५ ॥
तैल पात्रधरो यद्व, द्राधावेधोद्यतो यथा ॥
क्रिया स्वनन्य चित्तःस्या, द्भवभीत स्तथा मुनिः ॥६॥
विषं विषस्य वन्हेश्च, वन्हिरेव यदौषधं ॥
तत्सत्यं भवभीताना, मुपसर्गेऽपि यत्नभीः ॥ ७ ॥
स्थैर्यं भवभयादेव, व्यवहारे मुनिर्व्रजेत् ॥
स्वात्माराम समाधौ तु, तदप्यंतर्निमज्जति ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. कर्म विपाकने सम्यक् चिंतवतो मुनि भवथी उद्विग्न–उदासी थयो छतो जेने तरी पार जवा प्रतिदिन प्रयत्न कर्या करे छे ते ज भव समुद्रनुं स्वरूप कहे छे.—जेनो मध्य भाग बहु उंडो छे. जन्म मरणादिक जन्य अनंत दुःखरूप जल राशिथी अथाग भरेलो छे, जेनुं अज्ञान रूप वज्रमय तळुं छे—अज्ञान अविवेक या मिथ्या भ्रमना आधारेज संसारनी स्थिति रहेली छे; अज्ञानना जोरथीज चार गति या ८४ लक्ष जीवायोनिमां पुनः पुनः अवतरवा रुपी

संसार भ्रमण थाय छे; तथा आधि, व्याधि अने उपाधि जन्य अनेक कष्ट रुपी पर्वतोथी जेनी वाट विषम छे. आवी विषम स्थितिमां जीवने परिभ्रमण करवुं पडे छे. छतां अज्ञान वशवर्ती जीवो तेथी उद्विग्न (विरक्त) थता नथी.

२. वली जेमां तृष्णारूपी तोफानी पवनथी भरेला क्रोधादि कषायोरुपी चार मोटा पाताल कलशा विविध विकल्परुपी वेलानी वृद्धि करे छे, संसारी जीव तृष्णा तरंगमां तणाता कषायने वशपडी चित्तमां संकल्प विकल्पोने पेदा करी परम दुःखनो भागी थाय छे, छतां अज्ञानना जोरथी विषय तृष्णाने तजी तेओ क्लिष्ट कषायोने जीती सुख समाधि साधवा अल्प पण प्रयत्न सेवी शकता नथी. एवा अज्ञानी जीवो आप मतिथी अवळा चाली दुःख दावानलमां स्वयंपचाय तेमां आश्चर्य शुं?.

३. वळी जेमां काम–अग्निरुपी वडवानल वली रह्यो छे, जे स्नेहरुपी इंधनथी सदा जाज्वल्यमान रहे छे, अने भयंकर रोग शोकादि मच्छ कच्छपोथी जे चोतरफ व्याप्त दीसे छे. छतां अविवेकी जीवो तेमांज रति धारण करी झंपलाय छे पण प्रत्यक्ष दुःखराशिथी मुक्त थवा प्रयत्न करता नथी. आवा विवेक शून्य संसारीनी वारंवार विडंबना थया करे छे. ॥

४. वली दुर्बुद्धि, मत्सर, अने द्रोहरूपी विजली, वंटोलीया

अने गर्जारव वडे जेमां भ्रमण करनारा लोको विविध उत्पातना संकटमां आवी पडे छे छतां जड–यात्रा (पुद्‌गल–प्रेम) ने तजी ज्ञानमयपणे तीर्थ–यात्रादिक धर्मकरणी करता नथी. आवा पुद्गलानंदी जीवोने पराधीनपणे अनेक आपदाओ वेठवी पडे छे. एम समजीने आत्मकल्याण साधवाने समयज्ञ पुरुष शुं करे छे ते शास्त्रकार पोतेज जणावे छे. ॥

५. आवा भयंकर भवसमुद्रथी अत्यन्त उद्वेग पामेलो ज्ञानी पुरुष तेने तरी पार जवानो उपाय सर्व यत्नथी आदरे छे. समयज्ञ पुरुष आवा भयंकर संसारने तरवा प्रमादने तजी रत्नत्रयीनुं सम्यग् सेवन करे छे. ॥

६. जेवी रीते संपूर्ण तेलना पात्रने हाथमां लइ चालनार तेम ज राधावेधने साधनार सावधान थइ रहे तेवीज रीते भवभीरु मुनी स्वचारित्र क्रियामां सावधान थइ वर्ते छे जन्म मरणनां अनंतदुःखथी बीधेला भवभीरु मुनि धर्मकरणीमां प्रमाद शील थताज नथी. प्रत्यक्ष पुद्‌गलिक सुख तजीने देहने दमवा केम उजमाल थता हशे? एवी शिष्यनी शंकानुं शास्त्रकार समाधान करे छे.

७. जेम विषनुं औषध विष छे, अने अग्निथी दग्ध थयेलानुं औषध अग्निज छे. तेम भयभीरु मुनिने उपसर्ग संबंधी दुःखनो डर लागतोज नथी. जेम कोइने साप करड्यो होय त्यारे तेने लीमडो

चवरावे छे, अने अग्निथी दाझेलाने अग्निनोज शेक करे छे, तेम जन्म मरणनां दुःखथी त्रास पामेला मुनि ते दुःखने कापवा माटे विविध ऊपसर्ग संबंधी दुःखने समभावे सहन करे छे तेथी ते भव दुःखथी मुक्त थइ शके छे. एवी संपुर्ण खात्रीथीज विविध उपसर्ग परिषहादिक संबंधी दुःखने समयज्ञ मुनि स्वाधीनपणेज समभावथी सहन करवा तत्पर रहे छे. ॥

८. भवभीरुपणाथीज विवेकवान् मुनि धर्म व्यवहारने स्थिरताथी सेवे छे. जन्म मरणना भयथीज समयज्ञ मुनि व्यवहार मार्गनुं दृढ आलंबन लइ निश्चय मार्गने साधे छे. वीतरागप्रणीत स्याद्वाद मार्गनुं सावधानपणे सेवन करवा समयज्ञ मुनि चूकता नथी तेनुं मुख्य कारण भवभयज छे. एम साध्य दृष्टिथी शुद्ध व्यवहारनुं सेवन करतां करतां ज्यारे पोताना आत्मामां सहज समाधि जागे छे. ज्यारे साक्षात् आत्म-अनुभव जागे छे त्यारे भवभय पण अंतर शमाइ जायछे.
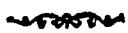
॥ २३ ॥ लोकसंज्ञात्यागाष्टकम् ॥

प्राप्तः षष्ठगुणस्थानं, भवदुर्गाद्रिलंघनम् ॥
लोकसंज्ञारतो न स्याद्, मुनिर्लोकोत्तर स्थितिः ॥१॥
यथा चिंतामणिं दत्ते, बठरोबदरीफलैः ॥

हाहा जहाति सद्धर्मं, तथैव जनरंजनैः ॥ २ ॥
लोकसंज्ञा महानद्या, मनुश्रोतोऽनुगान के ॥
प्रतिश्रोतोऽनुगस्त्वेको, राजहंसो महामुनिः ॥ ३ ॥
लोकमालंब्य कर्तव्यं, कृतं बहुभिरेव चेत् ॥
तथा मिथ्यादृशां धर्मो, न त्याज्यः स्यात्कदा च न ॥४॥
श्रेयोऽर्थिनो हि भूयांसो, लोके लोकोत्तरे च न ॥
स्तोकाहि रत्नवणिजः, स्तोकाश्चस्वात्म साधकाः ॥५॥
लोकसंज्ञाहताहंत, नीचैर्गमन दर्शनैः ॥
शंसयन्ति स्व सत्यांग, मर्मघातमहाव्यथां ॥ ६ ॥
आत्मसाक्षिक सद्धर्म, सिद्धौ किं लोकयात्रया ॥
तत्र प्रसन्नचंद्रश्च, भरतश्चनिदर्शने ॥ ७ ॥
लोकसंज्ञोज्झितः साधुः, परब्रह्मसमाधिमान् ॥
सुखमास्ते गतद्रोह, ममता मत्सर ज्वरः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. संसाररूपी विषम घाटीनो पार पमाडनार प्रमत्तगुणस्था-

नक जेने प्राप्त थयुं छे एवा लोकोत्तर स्थितिवाला मुनि लोकसंज्ञानो त्यागज करे छे. विषय कषायने विवश थइ जेम दुनीया दोराय छे तेम श्रेष्ठ मर्यादाशील मुनिराज लोकप्रवाहमां खेंचाइ जता नथी. तेतो स्वभावमां स्थित छता संयम आचरणमां सदा सावधान थइ रहे छे.

२. जेम कोइ मूर्ख बोरडीनां फल लइ बदलामां चिंतामणीरत्न आपी देछे तेम मूढ माणस जनरंजन माटे श्रेष्ठ धर्मने हारी जाय छे. जेने सत्य धर्मनी कदर नथी ते बापडाथी चिंतामणि जेवो अमूल्य धर्म साचवी शकातो नथी. लोकरंजन माटे श्रेष्ट लाभने चूकी जाय छे. पाछलथी तेने दुनियानी देखादेखी करवाथी बहु कष्ट सहन करवुं पडेछे.

३. लोकसंज्ञाए एक मोटी नदीनो प्रबल प्रवाहछे तेमां प्रवेशेला कोण कोण तणाया नथी? तेने तरीने पार जवाने समर्थ तो केवल सामेपूरे चालनारा राजहंस समान महामुनिराजज छे. जे लोकसंज्ञानो सर्वथा त्याग करवा अनुकूल प्रयत्न सेवे छे तेज मुनिराज तेनो त्याग करी शके छे. बाकीना तो लोकप्रवाहमां तणाया जाय छे. लोकप्रवाहमां तणाता पुरुषार्थहीनने तारवा कोइ समर्थ थतुं नथी. जो जनरंजन तजी केवल स्वपर कल्याणार्थे संयम मार्गनुं सारी रीते सेवन कराय तो प्रबल पुरुषार्थ योगे जरूर तेनो जय करी शकाय.

एवी आत्म वीर्यथी तेनो सर्वथा जय करी सर्वोत्तम संयमने आराधी अनंता आत्माओ अक्षय सुखने साधी शक्या छे.

४. जो सर्वे करे तेज करवुं मानीये तो तो कदापि पण मिथ्यात्वनो त्याग करी शकाशे नहिं. ज्यारे सत्य मार्गनुं शोधन करी तेनोज स्वीकार करशुं त्यारेज आपणे सत्य–साचा सुखने पामी शकशुं. ते विना तो जेम धूमाडाना बाचका भरतां कंइ हीरो हाथमां आवे नहिं तेम सत्य मार्गने तजी स्वच्छंदपणे चालतां खरुं सुख मली शके नहिं. एवा सत्यमार्गने शोधी चालनारा विरलाज होय छे.

५. श्रेयना अर्थी जीवो लौकिक के लोकोत्तर मार्गमां थोडाज दीसे छे. जेम रत्नना व्यापारी थोडा होयछे तेम आत्म–साधक पण थोडाज होयछे. जेम रत्ननी खाण दुर्लभ होयछे तेम कल्याणार्थी उत्तम जीवो पण दुर्लभज होय छे खरुं आत्मार्थीपणुं आववुं जीवने दुर्लभ छे ते विना सत्यमार्गने शोधी तेने दृढपणे अवलंबवो कठीनजछे.

६. लोकसंज्ञाथी पराभव पामेला प्राणी स्वश्रेयथी चूके छे. छतां लोक देखावो करवा जे तेओ नीचा वळीने चाले छे ते एम जणावे छे के तेमना सत्य–अंगमां मर्मघातनी महाव्यथा थयेली छे, तेथीज तेओ वांका वळीने चालता लागे छे. लोक संज्ञानो आमां आ लेख कर्यो लागे छे.

७. श्रेष्ट धर्मनी सिद्धि आत्म–साक्षिक छतां लोक देखावो करवानुं काम शुं? मनथी जीव कर्म बांधे छे अने मनथीज छोडी शके छे तो पछी लोक देखावो करवाथी शुं वळे? जेम प्रसन्नचंद्र राजऋषिने तथा भरत महाराजाने साक्षात् अनुभवायुं तेम सम्यग् विचारी स्वकल्याणना अर्थी जीवोए लोक देखावो करवानी बुद्धि तजी देवी.

८. लोकसंज्ञा रहित साधु परद्रोह, ममता, अने मत्सर दोषथी मुक्त होवाथी सहज समाधिमां मस्त थइ रहे छे. जे महाशय मुमुक्षुए लोकसंज्ञा तजी दीधी छे तेने उक्त दोषोनुं सेवन करवुं पडतुंज नथी. तेथी ते शुद्ध संयमने साधतां स्वभाविक सुखमां मग्न थइ रहे छे. परउपाधि रहित होवाथी निर्ग्रंथ मुनि उत्तम निवृत्ति धारी सहज समाधि सुखने पामी शके छे, पण परउपाधि ग्रस्त एवुं कोइपण तेवुं स्वभाविक सुख स्वप्नमां पण पामी शकतो नथी. एटलाज माटे मोक्ष सुखना अर्थी जनोए लोक संज्ञानो जरुर त्याग करवो जोइये, अन्यथा जप तप संयम संबंधी सकल धर्म करणी केवळ कष्टरूप थइ पडशे. उक्त सर्व धर्म करणी जो विवेकथी आत्म कल्याण अर्थेज करवामां आवशे तो ते, सघळी लेखे पडशे. माटे केवळ गतानुगतिकता तजी वस्तु स्वरूप समजीनेज साधन करवुं हितकारी छे.

॥ २४ ॥ शास्त्राऽष्टकम् ॥

चर्मचक्षुर्भृतः सर्वे, देवाश्चावधिचक्षुषः ॥
सर्वतश्चक्षुषः सिद्धाः, साधवः शास्त्रचक्षुषः ॥ १ ॥
पुरस्थितानिवोर्ध्वाधः, स्तिर्यग्लोक विवर्तिनः ॥
सर्वान् भावानपेक्षन्ते, ज्ञानिनः शास्त्रचक्षुषा ॥ २ ॥
शासनात् त्राणशक्तेश्च, बुधैः शास्त्रं निरुच्यते ॥
वचनं वीतरागस्य, तत्तु नान्यस्य कस्यचित् ॥ ३ ॥
शास्त्रे पुरस्कृते तस्माद्, वीतरागः पुरस्कृतः ॥
पुरस्कृते पुनस्तस्मिन्, नियमात् सर्वसिद्धयः ॥ ४ ॥
अदृष्टाऽर्थेऽनुधावंतः, शास्त्र दीपं विना जडाः ॥
प्राप्नुवन्तिपरं खेदं, प्रस्खलन्तः पदे पदे ॥ ५ ॥
शुद्धोंच्छाद्यपि शास्त्राज्ञा, निरपेक्षस्य नो हितं ॥
भौतहंतुर्यथा तस्य, पदस्पर्श निवारणं ॥ ६ ॥
अज्ञानाहि महामंत्रं, स्वाच्छंद्यज्वर लंघनं ॥
धर्मारामसुधाकुल्यां, शास्त्रमाहुर्महर्षयः ॥ ७ ॥

शास्त्रोक्ताचारकर्ता च, शास्त्रज्ञः शास्त्रदेशकः ॥
शास्त्रैकदृग्, महायोगी, प्राप्नोति परमं पदम् ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. सर्वे मनुष्य तिर्यंचो चर्मचक्षुने धारण करनारा छे, एटले के तेमने चामडानी चक्षु छे. देवता मात्रने अवधिज्ञानरुपी चक्षु छे. सर्व सिद्ध भगवानोने प्रदेशे प्रदेशे चक्षु छे केमके तेओ अनंत ज्ञान अने दर्शन गुणथी युक्त छे. अने साधु मुनिराजोने शास्त्ररुपी दिव्य चक्षु होय छे. हवे शास्त्रचक्षु केवी उपयोगी छे ते बतावे छे.

२. ज्ञानी पुरुषो शास्त्र चक्षुवडे उर्ध्व अधो अने तीर्छा-त्रणे लोकमां वर्तता सर्व भावोने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे. जेम निर्मल आ-रीसामां सामी वस्तुओनां प्रतिबिंब सारी रीते पडी रहे छे तेम नि-र्मल ज्ञानचक्षुथी पण त्रिभुवनवर्ती सर्व पदार्थोनुं यथार्थ भान थइ शके छे. माटेज मुमुक्षुजनो विनय पूर्वक अहोनिश ज्ञाननुं आराधन करवा उजमाल रहे छे. हवे प्रसंगोपात ग्रंथकर्त्ता शास्त्रनुं लक्षण कहे छे.

३. मोक्ष मार्गनुं शासन-यथार्थ कथन करवाथी अने त्राण-रक्षण करवा समर्थ होवाथी शास्त्र शब्द सार्थक थाय छे. एवुं शास्त्र

तो वीतरागनां वचनरूप होय छे. ते विना अन्य रागी द्वेषी के मोहाधीननां वचन सत् शास्त्ररुप होइ शकतां नथी. वीतराग प्रभुनां वचन सर्व दोष रहित अने सर्व गुण सहित होवाथी शास्त्ररुपे मान्य करवा योग्य छे. परंतु तेवा गुणविनाना अन्य वागाडंबरीनां वचन सत् शास्त्ररुप नहि होवाथी मुमुक्षु वर्गने मान्य करवा योग्य नथीज. तेवां सत् शास्त्र मानवाथी माननारने शो फायदो थाय छे ते शास्त्रकार पोतेज बतावे छे.

४. सत्शास्त्रने आगल कर्याथी वीतरागने आगल कर्या समजवा. अने वीतरागने आगल कर्ये छते निश्चे सर्व सिद्धियो संपजे छे. वीतराग प्रभुनी पवित्र आज्ञाओने मान्य करनारना सर्व मनोरथ सीजे छे. एकांत हितकारी प्रभुनी पवित्र वाणीनो अनादर करनार अज्ञानी जनोना केवा हाल थाय छे ते शास्त्रकार बतावे छे.

५. शास्त्ररुपी दिव्य दीपक विना अजाण्या विषयमां एकदम दोडता दुर्बुद्धिजनो मार्गमां पगले पगले स्खलना पामता परम खेदने अनुभवे छे. सत् शास्त्ररुपी दिव्य चक्षु विना जीवने सत्यमार्ग सूजतोज नथी तेथी सत्य मार्गथी चूकी जीव आडोअवलो अथडाइ बहु हेरान थाय छे. स्वकपोल कल्पित मार्गे चालतां जीवने एवा जोखममां उतरवुं पडे छे. जो वीतराग वचननुं शरण लही ते मुजब वर्तन कराय तो कंइपण भीति राखवानुं कारण रहे नहिं.

६. शास्त्रआज्ञा निरपेक्ष–स्वच्छंदचारी गमे तेवी उग्र क्रिया करे तोपण तेथी तेनुं हित थइ शकशे नहिं, पण जो वीतराग प्रभुनी पवित्र आज्ञा मुजब–शास्त्र परतंत्रपणे अल्प पण अनुष्ठान सेवशे ते तेने जरुर हितकारी थइ शकशे. केटलाक अणसमजथी शास्त्रआज्ञाने लोपीने सद्गुरुथी जूदा पडी प्रथम तो उग्रक्रिया करवानो विचार राखे छे पण पाछलथी समयोचित सारणादिकना अभावे ते शिथिल थइ जाय छे. सारी बुद्धिथी पण स्वच्छंदपणे सद्गुरुने तजवामां अहित ज रहेलुं छे. तेथी अल्प दोष तजतां भारे दोष सेववो पडे छे. जेम मनोहर मोरपींछी माटे बौध गुरुनी आज्ञा नहि छतां तेना भक्त भूमिपाले गुरुनां चरणस्पर्शनो दोष निवारवा बाणवडे ते पींछी लेतां ते गुरुनोज घात कर्यो तेम कमसमजवाला आपमतिथी अल्पदोष तजतां अधिक दोषनेज सेवे छे.

७. माटे महामुनियो शास्त्रने अज्ञानरूपी सर्पने दमवा जांगुली मंत्र समान, स्वच्छंदता रूपी ज्वरने शान्त करवा लंघन (लांघण) समान, अने सत्धर्मरुपी आरामने सिंचवा अमृतनी नीक समान लेखे छे. समयज्ञ सत्पुरुषो एवा सत्शास्त्रना श्रेष्ठ लाभने क्षणवार पण चूकता नथी.

८. शास्त्रोक्त आचारने सेववावाला शास्त्र–रहस्यने सम्यग् जा-

णवावाळा, शास्त्रना मार्गनेज बतावनावाळा अने शास्त्र सन्मुखज दृष्टि राखनारावाळा महायोगी-मुनि निश्चे परमपदने पामे छे. माटे मोक्षार्थी जनोए एवा सत्शास्त्र-सेवी सत्पुरुषोज सदा सेववा योग्य छे.

॥ २५ ॥ परिग्रहाष्टकम् ॥

न परावर्त्तते राशे, र्वक्रतां जातु नोझ्झति ॥
परिग्रह ग्रहः कोऽयं, विडंबित जगत्त्रयः ॥ १ ॥
परिग्रहग्रहावेशा, दुर्भाषित रजः किरां ॥
श्रूयन्ते विकृताः किं न, प्रलापा लिंगिना मपि ॥२॥
यस्त्यक्त्वा तृणवद्बाह्य, मान्तरं च परिग्रहं ॥
उदास्ते तत्पदांभोजं, पर्युपास्ते जगत्त्रयी ॥ ३ ॥
चित्तेन्तर् ग्रंथ गहने, बहिर्निर्ग्रंथता वृथा ॥
त्यागात्कंचुक मात्रस्य, भुजगो नहि निर्विषः ॥ ४ ॥
त्यक्ते परिग्रहे साधोः, प्रयाति सकलं रजः ॥
पालित्यागे क्षणादेव, सरसः सलिलं यथा ॥ ५ ॥
त्यक्तपुत्रकलत्रस्य, मूर्च्छा मुक्तस्य योगिनः ॥

चिन्मात्र प्रतिबद्धस्य, का पुद्गल नियंत्रणा ॥ ६ ॥
चिन्मात्रदीपको गच्छेद्, निर्वात स्थानसंनिभैः ॥
निष्परिग्रहतास्थैर्यं, धर्मोपकरणै रपि ॥ ७ ॥
मूर्च्छाछन्नाधियां सर्वं, जगदेव परिग्रहः ॥
मूर्च्छयारहितानां तु, जगदेवाऽपरिग्रहः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. शास्त्र उपदेश सांभली-सद्दहीने परिग्रहनुं स्वरुप समजीने तेनो विवेक धारवो जरुरनो छे. प्रायः परिग्रहज प्राणिओने पीडानुं कारण छे. माटे तेनो अवश्य परिहार करवो जोइये तेज वात स्फुट बतावे छे. बधे जगत्ना जीवोनी विविध विडंबना करनार परिग्रह एवो तो आकरो ग्रह छे के ने मूल राशिथी बदलातो नथी तेमज वक्रता त्यजतो नथी.

२. परिग्रहरूपी पिशाचथी पराभव पामेला लिंगधारी साधुओ पण पोतानी (साधु) प्रकृतिने तजी जेम तेम लवता फरे छे, अनेक उन्माद करे छे, वेष विगोवणा करे छे अने अंते अधोगतिमां जाय छे ए सर्व परिग्रहनोज प्रभाव समजवो.

३. धनधान्यादिक ए बाह्य परिग्रह छे अने वेदोदयथी थती विषय—अभिलाषा, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, दुगंछा, मिथ्यात्व अने कषाय ए अभ्यंतर परिग्रह छे. ते बंने परिग्रहने तृणनी जेम तजीने जे जगतथी उदासी (न्यारा) रहे छे, तेना चरण कमळने जगत् मात्र पूजे छे. पण जे ते परिग्रहमां मुंझाइ परस्पृहा करे छे ते तो जगत मात्रना दासज छे. मूर्छा—ममतानेज ज्ञानी पुरुषो परिग्रह कहे छे.

४. जेम सर्प कांचली उतारी नांखवाथी निर्विष थइ जतो नथी तेम बाह्य परिग्रहना त्याग मात्रथी खरुं साधुपणुं प्राप्त थतुं नथी. केमके विवेक विना धन विगेरे तजवा मात्रथी कांइ विषय अभिलाषादिक अंतर विष टली शकतुं नथी. माटे मुमुक्षुजनोए तो विषय अभिलाषादिक अंतर विष वारवा प्रथम खपी थवुं जोइए. ज्यां सुधी विषयवासना जागृत छे, ज्यां सुधी हास्यादिक दोषोनुं मुत्कलनी जेम सेवन कराय छे, ज्यां सुधी तत्त्व दृष्टि थवा यत्न करातो नथी अने ज्यां सुधी क्रोध, मान, माया अने लोभनी सेवा कर्या कराय छे, त्यां सुधी साधुपणुं छेटुंज समजवुं. अंतर विष टलतांज साधुपणुं संपजे छे.

जेम सरोवरनी पाल तोडी नांखवाथी मांहेनुं सर्व जल क्षण मात्रमां वहार वही जाय छे, तेम परिग्रहरुपी पाल तोडवाथी—मुर्छाना

त्याग करवाथी सर्व कर्ममलनो क्षणवारमां नाश थाय छे. पण गमे तेटली कष्टकरणी करतां छतां अंतरनो मेल धोवा माटे मूर्च्छानो त्याग कर्या विना शुद्ध थवातुं नथी. माटे विवेकपूर्वक बाह्य अने अंतर उभय परिग्रहनो परिहार करवो घटे छे.

स्त्री पुत्र लक्ष्मी विगेरेनी मूर्च्छा तजी केवल ज्ञान ध्याननोज अभ्यास करनारा साधुपुरुषोने पुद्गलनी शी परवा छे? स्त्री पुत्रने तजीने जो पुनः परिग्रह ममताथी लोक परिचय करी ज्ञान ध्यान न कर्युं, संयममार्ग सम्यग् सेव्यो नहिं, मूर्च्छा ममताज वधारी तो प्रथमनां स्त्री पुत्रादिकने तजीने शुं कमाणा? उलटी उपाधि वधारवाथी विशेषे विडंबना पात्र थवाना. तेम न थाय एवुं लक्ष राखवुंज जोइये.

७. जेम वायरा विनाना स्थळवडे दीवो स्थिर रही शके छे—बुझातो नथी तेम धर्म—उपगरणोवडे निष्परिग्रहता साधी शकाय छे. धर्मनी वृद्धि करनारां साधनज धर्म—उपगरण गणाय छे तेमनुं ममता-रहित सेवन करतां छतां गमे ते अक्षय सुखना अधिकारी थइ शके छे. पण जो तेमांज उलटी ममता करवामां आवे तो ते उपगरण केवळ अधिकरण (शस्त्र) रूपज गणाय. माटे ममतारहित ज्ञानदर्शन के चारित्रनां उपगरणोवडे आतम—उपगारनी सिद्धि थाय तेम यत्नथी प्रवर्तवुं. एम विवेकथी धर्मउपगरणने सेवनारने धर्मनी वृद्धिज थाय छे. पण जो तेमां विवेकनी खामीथी उलटी ममता स्थपाय तो तेथी धर्मनी वृद्धिना बदले हानि थवानो प्रसंग आवे छे. माटे जेम धर्मोप-

गरणनुं सार्थकपणु थाय तेम विवेकथीज वर्तवुं युक्त छे.

८ आवां कारणसर शास्त्रकार कहे छे के मूर्छावडे जेनी बुद्धि अंजाइ गइ छे तेने आखुं जगत परिग्रहरुपज छे, अने जे महात्माए मूर्च्छा (ममता) ने समूलगी मारी छे, तेने तो जगतमां जरा पण परिग्रहनो लेप लागेज नहि. आ उपरथी मूर्छा उतारवी केटली विषम छे ते तथा मूर्छा उतार्याथी केटलुं बधुं सुख थाय छे, तेनुं सहज भान थइ शके छे. गमे एवुं दुष्कर कार्य पण पुरुपार्थथी साधी शकाय छे. एम समजी कायरता तजी परिग्रहनो प्रसंग तजवा प्रयत्न करवो घटे छे.

॥ २६ ॥ अनुभवाऽष्टकम् ॥

संध्येव दिन रात्रिभ्यां, केवलश्रुतयोः पृथक् ॥
बुधैरनुभवो दृष्टः, केवलाऽर्कारुणोदयः ॥ १ ॥
व्यापारः सर्वशास्त्राणां, दिक्प्रदर्शन मेव हि ॥
पारं तु प्रापयत्येको, ऽनुभवो भव वारिधेः ॥ २ ॥
अतींद्रियं परब्रह्म, विशुद्धाऽनुभवं विना ॥
शास्त्रयुक्ति शतेनापि, न गम्यं यद् बुधाजगुः ॥ ३ ॥

ज्ञायेरन् हेतुवादेन, पदार्था यद्यतींद्रियाः ॥
कालेनैतावता प्राज्ञैः, कृतःस्यात्तेषु निश्चयः ॥ ४ ॥
केषां न कल्पना दर्वी, शास्त्रक्षीरान्नगाहिनी ॥
विरला स्तद्रसास्वाद, विदोऽनुभवजिह्वया ॥ ५ ॥
पश्यतु ब्रह्म निर्द्वंद्वं, निर्द्वंद्वाऽनुभवं विना ॥
कथं लीपीमयी दृष्टि, र्वाङ्मयी वा मनोमयी ॥ ६ ॥
न सुषुप्ति रमोहत्वा, न्नाऽपि च स्वाप जागरौ ॥
कल्पनाशिल्पविश्रान्ति, स्तुर्यैवानुभवो दशा ॥ ७ ॥
अधिगत्याखिलं शब्द, ब्रह्म शास्त्रदृशा मुनिः ॥
स्वसंवेद्यं परंब्रह्म, नुभवेनाधिगच्छति ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जेम दिवस अने रात्रिथी संध्या जूदी छे, तेम अनुभव ज्ञान पण केवल ज्ञान अने श्रुत ज्ञानथी जूदुं छे. जेम सूर्य-उदय पहेलां अरुणोदय थाय छे तेम केवल ज्ञान प्रगटयां पहेलां अनुभव ज्ञाननो उदय थाय छे. पछी अवश्य अल्पकालमां केवल ज्ञान प्रगट थाय छे. जेम अरुणोदय रात्रिना अंते थाय छे, तेम अनुभव ज्ञान

पण श्रुत ज्ञानना अंते प्रगटे छे. एटले के श्रुत ज्ञान कारण छे अने अनुभव ज्ञान कार्यरूप छे. सम्यग् ज्ञान विना कदापि कोइने पण अनुभव प्रगटे नहि. माटे कार्यार्थी जेम कारणनुं सेवन करे तेम अनुभवना अर्थीए श्रुत ज्ञाननु अवश्य सेवन करवुं.

२. शास्त्रो तो फक्त दिग्दर्शन करावे छे. बाकी संसारनो पार तो अनुभवज करावे छे. जेम कोइ मार्गमां मळेलुं माणस मार्ग भ्रष्टने खरा मार्गनी दिशा बतावी दे छे तेम शास्त्र पण मोक्षनो मार्ग आम छे एम बतावी दे छे. पण जेम साथे लीधेलो भूमियो ठेठ मार्गे पहोंचाडी आपे छे. तेम सहज अनुभव ज्ञान पण ठेठ पार पहोंचाडे छे.

३. विशुद्ध अनुभव विना शास्त्रनी सेंकडो युक्तिवडे पण परमात्मतत्त्व समजी शकाय तेवुं नथी. जेनु स्वरूपज शब्द, रुप, रस, गंध, अने स्पर्शरहित होवाथी अतींद्रिय छे, तेनु प्रतिपादन अक्षर—वर्ण वाक्य मात्रथी शी रीते थइ शके एक तो अरूपी आत्मद्रव्य अने बीजुं दृष्टांत दइने ते सुखेथी समजी शकाय एवुं कंइ उपमान नजरेज पडतुं नथी, तेथी अंते एवाज निश्चय उपर आवी शकाय के परमात्मतत्त्व जेवुं कंइ बीजुं छेज नहि, ते तत्त्व पामेला सर्व समानज छे, तथा तेवो सत्य अनुभव थयेज ते तत्त्व समजी शकाय एम छे, पण अनुभव ज्ञान प्रगट्या विना परमात्मतत्त्व यथार्थ समजी शकाय तेम नथी. माटे तेवो अनुभव प्रगटाववा श्रुत ज्ञान विषये पूरतो प्रयत्न करवो युक्त छे.

४. जो हेतुवादे करी आवा अतींद्रिय पदार्थोनो निश्चय थातो होत तो तो ते क्यारनो करवा पंडितो चूकत नहिं. पण तेम करवुं अशक्य जाणीने तेओ करी शक्या नथी. तर्क, अनुमान के युक्ति विगेरेथी तेओए आत्मादि अरुपि-द्रव्यनो निश्चय कर्यो होत ते संबंधी कोइ जातनो विवाद रहेतज नहि. पण तेम थइ शकेज नहिं. तेम करवाने अनुभव ज्ञाननी खास जरुर छे. स्वानुभवी पण परमात्मतत्त्वने यथार्थ जाणतां छतां पोतेज जाणीने विरमे छे. ते पदार्थ अतींद्रिय होवाथी स्वानुभव विना श्रोताना ग्राह्यमां आवतो नथी-आवी शकतो नथी. स्वानुभव थये ते सेहेज यथार्थपणे समजी शकाय छे.

५. केटलाक पंडितोनी कल्पना-कडछी, शास्त्र-क्षीरमां फरी, छतां तेओ अनुभव-जीभ विना तेनो स्वाद मेलवी शक्या नहिं. अनुभव ज्ञान प्रगट थयेज सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्रनो यथार्थ स्वाद चाखी शकाय छे.

६. अद्वितीय अनुभव जाग्या विना लिपीवाली, वाणीवाली, अने मनवाली रुपि दृष्टिथी अरूपि-अद्वितीय अनुपम परमात्म तत्त्वने केम जोइ शकाय ? ज्यारे अपूर्व साम्य सेवनथी अनुपम अनुभव जागशे त्यारेज अतींद्रिय तत्त्वनुं यथार्थ भान थशे ते विना केवल अक्षरमय लीपी, वाणी, के मनवाली रूपी दृष्टिथी अरूपी एवा शुद्ध

आत्म तत्त्वनुं यथार्थ भान थइ शकवानुं नहिं. कार्यार्थीए कार्याऽनुकूल कारणोनुं सेवन करवुंज जोइए. ते विना इष्ट कार्य सिद्धिज नथी. माटे शुद्ध आत्म तत्त्वना कामी पुरुषे निर्द्वंद्व (सर्व क्लेश रहित शुद्ध) अनुभव माटे प्रयत्न करवो.

७. सुषुप्ति, शयन, जागर अने उजागर ए चार दशाओ शास्त्रमां वर्णवी छे. तेमां प्रबल मोहना उदयवाली प्रथम दशा तथा विविध कल्पनावाली (सविकल्पक) शयन अने जागर दशा आ अनुभव ज्ञानमां घटी शके नहिं. तेमां तो समस्त विकल्पनी विश्रान्ति शान्तिरूप निर्विकल्प चोथी उजागर दशाज होवी घटे छे.

८. शास्त्र दृष्टीथी समस्त शब्द स्वरूपने सम्यग् पामीने मुनि, अनुभवगम्य शुद्ध आत्मतत्त्वने अनुभव ज्ञानवडे पामे छे. एटले के सम्यग् श्रुत ज्ञानना अभ्यासथी अनुभव ज्ञान पामीने मुनि शुद्ध स्वरूपने जाणे–जोवे छे.

॥ २७ ॥ योगाष्टकम् ॥

मोक्षेण योजनाद्योगः, सर्वोऽप्याचारइष्यते ॥
विशिष्य स्थानवर्णार्था, लंबनैकाग्र्य गोचरः ॥ १ ॥

कर्मयोग द्वयं तत्र, ज्ञान योग त्रयं विदुः ॥
विरतेश्वेष नियमाद्, बीज मात्रं परेश्वेपि ॥ २ ॥

कृपा निर्वेद संवेग, प्रशमोत्पत्तिकारिणः ॥
भेदा प्रत्येकमत्रेच्छा, प्रवृत्तिस्थिर सिद्धयः ॥ ३ ॥

इच्छा तद्वत्कथाप्रीतिः, प्रवृत्तिः पालनंपरः ॥
स्थैर्यं बाधकभी हानिः, सिद्धिरन्यार्थ साधनं ॥४॥

अर्थालंबनयोश्चैत्य, वंदनादौ विभावनं ॥
श्रेयसे योगिनः स्थान, वर्णयोर्यत्नएव च ॥ ५ ॥

आलंबनमिह ज्ञेयं, द्विविधं रूप्य रूपि च ॥
अरूपिगुणसायुज्यं, योगोऽनालंबनं परः ॥ ६ ॥

प्रीतिभक्ति वचोऽसंगैः, स्थानाद्यपि चतुर्विधं ॥
तस्मादयोग योगाप्ति, र्मोक्षयोगः क्रमाद् भवेत् ॥७॥

स्थानाद्ययोगिनस्तीर्थो, च्छेदाद्यालंबनादपि ॥
सूत्रदाने महादोष, इत्याचार्याः प्रचक्षते ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. जीवने मोक्ष सुख साथे जोडी आपे एवो सर्व सदाचार 'योग' ना नामथी ओलखाय छे. तेना पांच प्रकार आ प्रमाणे छे. १ स्थान (आसन–मुद्रा विशेष) २ वर्ण (अक्षर विशेष) ३ अर्थ ४ आलंबन (प्रतिमादि) अने ५ एकाग्रता (मननी निश्चलता.)

२. तेमां पूर्वला बे कर्मयोग कहेवाय छे. अने पाछली त्रण, ज्ञान योग कहेवाय छे. आ योग विरति (निवृत्तिशील) वंतमां निश्चयथी होय छे. अने बीज मात्र तो अनेरामां पण होय छे. ए वचनमां एवो ध्वनि थाय छे के योगना अर्थीए निवृत्तिशील थवुं जोइये.

३. आ पांचे योगमांना प्रत्येकना कृपा, निर्वेद, संवेग अने शीतलताने करनारा १ इच्छा, २ प्रवृत्ति, ३ स्थिरता अने सिद्धि एवा च्यार च्यार भेदो कहेला छे. ते दरेकनुं लक्षण आ प्रमाणे.

४. तेवा योग–सेवीनी कथामां प्रीति थाय ते इच्छा योग उक्त योगनुं पालन करवामां तत्परता तजाय ते प्रवृत्ति योग. ते योगनुं सेवन करतां अतिचारादिक दूषण लागे नहिं, लागवानी बीक पण रहे नहिं, ते स्थिरता योग अने स्वयं योगनी सिद्धि पूर्वक अन्य (भव्य) जीवोने योगनी प्राप्ति कराववी तेनुं नाम सिद्धि योग समजवो.

५. पूर्वोक्त योगोमांना अर्थ अने आलंबन योगनुं चैत्यवंदन, तथा गुरुवंदनादिक करतां स्मरण राखवुं. तेमां तथा स्थान अने वर्णयोगमां योगी पुरुषे स्वश्रेय माटेज प्रयत्न करवानो छे. उक्त योगा सेवनमां जेम अधिक प्रयत्न तेम एकाग्रता द्वारा अधिक श्रेय सधाय छे.

६. आलंबन बे प्रकारे छे. १ रूपी अने २ अरूपी तेमां जिन मुद्रादिकरूपी आलंबन छे. अने अरूपी एवा सिद्ध भगवानना अनंत ज्ञानादिक गुणोमांज एकाग्र उपयोग देवो ते अरूपी आलंबन छे. तेनुं बीजुं नाम निरालंबन योग छे. अनालंबन योग उत्कृष्ट योग छे.

७. वळी प्रिति, भक्ति, वचन अने असंगभेदे करीने स्थानादियोग चार चार प्रकारे छे. पूर्वोक्त इच्छादिक च्यार प्रकारवाला स्थानादिक पांचे योगोना २० भेद थाय छे. अने तेमना प्रत्येके प्रीति विगेरे च्यार च्यार भेद गणतां योगना ८० भेद थाय. तेथकी 'अयोग' योगनी अनुक्रमे प्राप्ति थतांज मोक्ष योगनी—अक्षय अव्याबाध सुखनी संप्राप्ति थाय छे. एम समजी मोक्षार्थी सज्जनोए उपर बतावेला योगनां अंगोनुं आदरथी सेवन करवुं घटे छे. केटलांक अनुष्ठान प्रीतिपूर्वक अने केटलांक भक्ति पूर्वक ज करवानां कह्यां छे. जेमके देववंदन, गुरुवंदन, विगेरे भक्तिपूर्वक करवानां छे. अने प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग (काउस्सग्ग), पच्चख्खाण विगेरे प्री-

तिपूर्वक करवानां. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव ने लक्षमां राखी सर्वज्ञ कथित सिद्धान्तने अनुसरीने विधिपूर्वक धर्मवर्तन करवुं ते वचन अनुष्ठान छे. पूर्वोक्त प्रीति–भक्ति युक्त वचन अनुष्ठानने आचरतां अनुक्रमे अभ्यास बलथी मन, वचन, कायानी, एकाग्रता सधातां असंग क्रियानो अपूर्व लाभ मले छे. असंग क्रिया साधनारने मोक्ष सुलभ छे. माटे मोक्षार्थीजनोए मन, वचन, अने कायाना योगोने परभावमां जतां वारी स्वभाव सन्मुख करवा जोइये. पुद्गलिक सुखनी इच्छा तजीने सहज आत्म सुखमांज प्रीति करवी जोइये. करवामां आवती धर्मक्रियाना पण पवित्र हेतु–फल संबंधी सारी समज मेळवी तेमां योग्य आदर करवो जोइये. जेम बने तेम अविधि दोष तजी विधि रसिक थवुं जोइये.

८. उक्त स्थानादिक योगनो अनादर करनारा अने स्वच्छंदे चालनाराने सूत्र–दान देवामां मोटो दोष छे, एवो समर्थ आचार्योनो अभिप्राय छे. शासननो उच्छेद थइ जशे एवी बीकथी पण प्रभुनी पवित्र आज्ञाथी विमुखने शास्त्र शिखववामां मोटामां मोटुं पाप छे.

॥ २८ ॥ नियागाष्टकम् ॥

यःकर्महुतवान् दीप्ते, ब्रह्माग्नौ ध्यान धाय्यया ॥
स निश्चितेनयागेन, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ १ ॥

पापध्वंसिनिनिष्कामे, ज्ञानयज्ञे रतो भव ॥
सावद्यैः कर्मयज्ञैः किं, भूतिकामनयाविलैः ॥ २ ॥
वेदोक्तत्वान्मनः शुध्या, कर्मयज्ञोऽपि योगिनः ॥
ब्रह्मयज्ञ इतीच्छंतः, श्येनयागं त्यजन्ति किम् ॥३॥
ब्रह्मयज्ञं परं कर्म, गृहस्थस्याधिकारिणः ॥
पूजादिर्वीतरागस्य ज्ञानमेव तु योगिनः ॥ ४ ॥
भिन्नोद्देशेन विहितं, कर्म कर्मक्षयाक्षमं ॥
क्लृप्तभिन्नाधिकारं च, पुत्रेष्ट्यादिवदिष्यतां ॥ ५ ॥
ब्रह्मार्पणमपि ब्रह्म यज्ञांतर्भावसाधनं ॥
ब्रह्माग्नौ कर्मणो युक्तं, स्वकृतत्व स्मये हुते ॥ ६ ॥
ब्रह्मण्यर्पित सर्वस्वो, ब्रह्मदृग् ब्रह्मसाधनः ॥
ब्रह्मणा जुह्वद्ब्रह्म, ब्रह्मणि ब्रह्मगुप्तिमान् ॥ ७ ॥
ब्रह्माऽध्ययननिष्ठावान्, परब्रह्म समाहितः ॥
ब्रह्मणो लिप्यतेनाघै, र्नियागप्रतिपत्तिमान् ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. निश्चित याग (पूजा) ते नियाग कहेवाय छे. तेनुं स्वरूप समजावे छे. जे शुद्ध ब्रह्माग्निमां ध्यान-साधनथी विविध कर्मने होमे छे ते निश्चित यागवडे नियागी कहेवाय छे.

२. पापना क्षय करनार एवा निष्काम (पुद्गलिक कामना रहित) ज्ञान-यज्ञमां रति करवी युक्त छे. वैभवनी इच्छाथी मलीन एवा पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवानुं शुं प्रयोजन छे ? जेमने पापनो क्षय करी निष्पाप थवा इच्छा होय तेमने तो पापयुक्त कर्मयज्ञोनो अनादर करी केवलज्ञान-यज्ञनो ज आदर करवो घटे छे. केमके लोही खरडयुं वस्त्र लोहीथी साफ थइ शके नहिं, पण शुद्ध जल विगेरेथी ज साफ थइ शके छे. तेम पापथी खरडाएलुं मन पापयुक्त कर्म-यज्ञथी शुद्ध थइ शके नहिं. पण पापरहित एवा ज्ञान यज्ञथी तो ते अवश्य शुद्ध थइ शके. माटे ज निष्काम एवा ज्ञान-यज्ञमां रक्त थवुं, ज्ञानी-विवेकीने उचित छे. पण पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवां तो उचित नथीज.

३. कर्म-यज्ञ पण करवानुं वेदमां कथन होवाथी मननी शुद्धिथी ते पण ज्ञान-यज्ञनुं फल आपे छे एवुं इच्छनारा ब्रह्म-ज्ञानीओ श्येन यागने केम तजे छे ? जो बीजां कर्म-यज्ञथी मननी शुद्धि संभवे छे तो आथी केम नहिं ? एम समजी विवेकी जनोए पाप-युक्त सर्व कर्म-यज्ञोनो परिहार करवो घटे छे.

४. श्री वीतरागनी पूजा, सद्गुरुने दान, दीन दुखीनो उद्धार विगेरे गृहस्थ-अधिकारीने योग्य श्रेष्ठ आचरण ब्रह्मयोगनुं कारण होवाथी ज्ञान योग कही शकाय छे, परंतु ज्ञानी-मुनिने तो फक्त ज्ञान-योगज सेववा योग्य छे. गृहस्थ योग्य आचार साधुने सेववानो नथी. केमके बन्नेनो अधिकार भिन्न छे.

५. जूदा हेतुथी करेली क्रिया क्लिष्ट-कर्मोनो क्षय करी शके नहिं. एतो पाप-कर्मने क्षय करवानी पवित्र बुद्धिथी ज उचित क्रिया विवेकथी करवामां आवे तो ज तेथी पाप-कर्मनो क्षय थाय छे. पण तेथी विरुद्ध आचरणथी तो कदापि थइ शके नहिं. स्व स्व अधिकार मुजब करेली करणी सुखदायी निवडे छे. साधु साधु योग्य अने गृहस्थ गृहस्थ योग्य करणी करतां सुखी थाय छे. पण साधु पोते गृहस्थ योग्य अने गृहस्थ पोते साधु योग्य करणी करवा जतां उलटा अनर्थ पामे छे. पुत्रेष्टिनीपेरे (पुत्र माटे करवामां आवतो यज्ञ विशेष " पुत्रेष्टि " कहेवाय छे, तेनीपरे) अधिकार विरुद्ध अने निर्दोष शास्त्र विरुद्ध आचरणथी अनर्थज संभवे छे एम समजीने सुनिपुण जनो पाप युक्त यज्ञोथी सदंतर दूर रहे छे. अने पवित्र एवो धर्म करणी पण पवित्र उद्देशथी करे छे.

६. ब्रह्मार्पण करवुं एनेज जो ज्ञान यज्ञनुं खरेखरुं साधन कहेवामां आवे तो तेथी पण स्वकृतत्व-अहंकार एटले पोते कर्यापं-

थानो गर्व गाळी नांखी ज्ञानाग्निमां कर्मनोज होम करवो घटे छे. प्रथम अहंकारनो होम करतां कर्मनोज होम करवो ठरेछे. माटेज पापयुक्त कर्म-यज्ञ करवानो कदाग्रह तजी गृहस्थोए तेमज साधुओए उपरनी युक्ति युक्त वात विवेकथी विचारी स्व स्वउचित सदाचार सेववो ज योग्य छे.

७-८. आत्म समर्पण करनार, तत्त्वदर्शी, तत्त्वसाधक, तत्त्व-ज्ञानवडे अज्ञाननो उच्छेद करनार. शुद्ध ब्रह्मचर्य सेवनार, तत्त्वअ-भ्यासमां रक्त रहेनार, अने स्वरूपमांज रमण करनार एवा निश्चित याग संपन्न साधुओ कदापि पापकर्मथी लेपाता नथी, निर्लेप रहेवा इच्छनार साधुए अनंतरोक्त लक्षण धारवां जोइये. वाकी तो अहंता-ममता, अज्ञान, अविवेकाचरण, अने स्वार्थ अंधतादिक सर्व अपल-क्षणो तो केवळ दुर्गतिनां ज कारक छे, माटे ए सर्वथी अळगा थइ स्वहित साधवुं घटे छे.

॥ २९ ॥ पूजाष्टकम् ॥

दयांभसा कृत स्नानः, संतोष शुभवस्त्रभृत् ॥
विवेक तिलकभ्राजी, भावना पावनाशयः ॥ १ ॥
भक्ति श्रद्धान घुसृणो, न्मिश्रपाटी रज द्रवैः ॥

नव ब्रह्मांगतो देवं, शुद्धमात्मानमर्चय ॥ २ ॥
क्षमा पुष्पस्रजं धर्म, युग्म क्षौमद्वयं तथा ॥
ध्यानाभरणसारं च, तदंगे विनिवेशय ॥ ३ ॥
मदस्थान भिदा त्यागै, र्लिखाग्रे चाष्ट मंगलीं ॥
ज्ञानाग्नौ शुभ संकल्प, काकतुंडं च धूपय ॥ ४ ॥
प्राग् धर्म लवणोत्तारं, धर्मसंन्यास वन्हिना ॥
कूर्वन् पूरय सामर्थ्य, राजन्नी राजना विधिं ॥ ५ ॥
स्फुरन् मंगलदीपं च, स्थापयानुभवं पुरः ॥
योग नृत्य परस्तौर्य, त्रिक संयमवान् भव ॥ ६ ॥
उल्लसन्मनसः सत्य, घंटां वादयत स्तव ॥
भाव पूजा रतस्येत्थं, करक्रोडे महोदयः ॥ ७ ॥
द्रव्य पूजोचिता भेदो, पासना गृहमेधिनां ॥
भाव पूजा तु साधूना, मभेदो पासनात्मिका ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. पूज्य पूजा बे प्रकारनी छे. एक द्रव्यपूजा तथा भावपूजा. शुद्ध लक्षथी करवामां आवती द्रव्यपूजा भावपूजानुं कारण होवाथी अधिकारी जीवनें अधिक उपकारी थाय छे. गृहस्थ द्रव्यपूजानो मुख्यपणे अधिकारी छे, अने मुनि भावपूजानाज अधिकारी छे. परंतु गृहस्थ पण शुद्ध लक्षथी द्रव्यपूजावडे भाव साधी शके छे. तेथी ते अंते भावपूजानो पण अधिकारी थइ शके छे. माटे स्व स्वउचित कर्तव्य करवामां प्रमाद नहिं करतां शुद्ध लक्षपूर्वक आत्मार्पण करतां रहेवुं जोइये. प्रथम भावपूजानुं स्वरूप प्रतिपादन करेछे, एवा शुद्ध लक्षथी जो गृहस्थ द्रव्यपूजा करवामां आदरवंत थाय तो ते पण अंते ते भावने पामे. मुनिनुं तो ए खास कर्तव्यज छे. माटे तेने उद्देशीने मुख्यपणे अत्र कथन छे, पण एवुं लक्ष गृहस्थने पण कर्तव्य छे.

२. हे भाइ! निर्मलदया–जलथी स्नान करी संतोषरूपी शुभ वस्त्रने धारी, विवेकरूप तिलक करी, भावनावडे पवित्र आशय बनी, भक्तिरूप केशर घोळी, श्रद्धारूप चंदन भेळवी, तेमज अन्य उत्तम गुणरूप कस्तूरी प्रमुख संयोजी नवविध ब्रह्मचर्यरूप नवअंगे शुद्ध आत्मारुप देवाधिदेवनी तुं भावथी पूजा कर.

३. क्षमारूपी सुगंधी पुष्पमाला तथा द्विविध धर्मरूप वस्त्र युगल तथा शुभ ध्यानरूप श्रेष्ठ आभरण हे महानुभाव! ते प्रभूना

अंगे तुं स्थाप. अर्थात् एवा सद्गुणोने तुं धारण कर. ए सद्गुणो तारे अवश्य धारवा जेवाज छे.

४. वली आठे मदना त्याग करवारुप अष्टमंगलने तुं आगल स्थापन कर. तथा ज्ञान-अग्निमां शुभ अध्यवसायरुप कृष्णागुरुनो धूप कर.

५. शुद्ध धर्मरूपी अग्निवडे अशुद्ध धर्मरूपी लुण उतारीने देदीप्यमान वीर्योल्लासरूपी आरती उतारो. एटले सरागवृत्ति तजी वीतराग वृत्ति धारो-धारवाना खपी थाओ. सरागदशा ए अशुद्ध धर्म छे. अने वीतराग दशा ए शुद्ध आत्मधर्म छे. माटे अशुद्ध आत्मदशाने तजी शुद्ध आत्मदशाना कामी थाओ.

६. शुद्ध आत्म-अनुभवरूप देदीप्यमान मंगलदीवाने तमे प्रभुनी आगळ स्थापो, अने योगासेवन रूप नृत्य करतां सुसंयम रूप त्रिविध वाजिंत्र वजावो. अर्थात् सद्बुद्धिथी तत्त्व परीक्षा करी शुद्ध अनुभव जगावो, अने तेम करी प्रमाद वेरीने दूर तजी सावधान थइ शुद्ध संयमनुं सेवन करवा प्रवृत्त थाओ. रत्नत्रयीनुं पालन करो.

७. आ प्रमाणे सत्य-घंटावादने करनारा उल्लसित मनवाळा, भाव पूजामां मग्न थयेला महापुरुषनो महोदय सुलभ छे. तात्पर्यके श्री वीतराग वचनानुसारे वर्ती सत्य प्ररूपणा करनारा प्रसन्न चित्तवाला सात्त्विक पुरुषोज परमात्म प्रभुनी पवित्र आज्ञाना अखंड

पालनरूप भावपूजाना पूर्ण अधिकारी होवाथी परमपदने सुखेथी पामी शके छे, पण स्वच्छंदचारी, कलुषित मनवाला, कायर माणसो कंइ पामी शकता नथी, एम समजी परमपदना अर्थीए स्वच्छंद-चारिता, कलुषता, तथा कायरता, परिहरी, शास्त्र परतंत्रता, कषा-यरहितता, तथा अप्रमत्तता अवश्य आदरवा खपी थवुं.

८. आ भाव पूजामां प्रस्तावें कहेली द्रव्य पूजा मुख्यपणे व्यवहारदृष्टि एवा गृहस्थोनेज आदरवा योग्यछे. अने भावपूजा तो मुख्यपणे निश्चयदृष्टि एवा मुनिराजोनेज उपासवा योग्यछे. कल्याण पण तेमज संभवे छे. इत्यलम्. ॥

॥ ३० ॥ ध्यानाष्टकम् ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं, त्रयं यस्यैकतां गतं ॥
मुनेरनन्य चित्तस्य, तस्यदुःखं न विद्यते ॥ १ ॥
ध्यातान्तरात्मा ध्येयस्तु, परमात्मा प्रकीर्तितः ॥
ध्यानं चैकाग्र्य संवित्तिः समापत्ति स्तदेकता ॥ २ ॥
मणाविव प्रतिच्छाया, समापत्तिः परात्मनः ॥
क्षीणवृत्तौ भवेद्ध्याना, दंतरात्मनि निर्मले ॥ ३ ॥

आपत्तिश्च ततः पुण्य, तीर्थकृत् कर्मबंधतः ॥
तद्भावा भिमुखत्वेन, संपत्तिश्च क्रमाद् भवेत् ॥ ४ ॥
इत्थं ध्यानफलाद्युक्तं, विंशति स्थानकाद्यपि ॥
कष्टमात्रं त्वभव्याना, मपि नो दुर्लभं भवे ॥
जितेंद्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः ॥
सुखासनस्य नासाग्र, न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥ ६ ॥
रुद्धबाह्य मनोवृत्ते, र्धारणा धारयारयात् ॥
प्रसन्नस्या प्रमत्तस्य, चिदानंद सुधालिहः ॥ ७ ॥
साम्राज्यम प्रतिद्वंद्व, मंतरेव वितन्वतः ॥
ध्यानिनो नोपमा लोके, सदेव मनुजेऽपिहि ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. ध्याता, ध्येय, अने ध्यान ए त्रणे जेने एकताने पाम्यां छे एवा एकाग्र चित्तवाळा मुनिने कंइ पण दुःख नथी. जेटली ए बाबतमां खामी छे तेटलुंज दुःख शेष छे एम समजवुं अने जेम ते खामी जलदी दुर थइ जाय तेम सावधानपणे तेनो खप करवो.

स्वरू-

पालनरूप भावपूजाना पूर्ण अधिकारी होवाथी परमपदने सुखेथी पामी शके छे, पण स्वच्छंदचारी, कलुषित मनवाला, कायर माणसो कंइ पामी शकता नथी, एम समजी परमपदना अर्थीए स्वच्छंद-चारिता, कलुषता, तथा कायरता, परिहरी, शास्त्र परतंत्रता, कषा-यरहितता, तथा अप्रमत्तता अवश्य आदरवा खपी थवुं.

८. आ भाव पूजामां प्रस्तावें कहेली द्रव्य पूजा मुख्यपणे व्यवहारदृष्टि एवा गृहस्थोनेज आदरवा योग्यछे. अने भावपूजा तो मुख्यपणे निश्चयदृष्टि एवा मुनिराजोनेज उपासवा योग्यछे. कल्याण पण तेमज संभवे छे. इत्यलम्. ॥

॥ ३० ॥ ध्यानाष्टकम् ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं, त्रयं यस्यैकतां गतं ॥
मुनेरनन्य चित्तस्य, तस्यदुःखं न विद्यते ॥ १ ॥

ध्यातान्तरात्मा ध्येयस्तु, परमात्मा प्रकीर्तितः ॥
ध्यानं चैकाग्र्य संवित्तिः समापत्ति स्तदेकता ॥ २ ॥

मणाविव प्रतिच्छाया, समापत्तिः परात्मनः ॥
क्षीणवृत्तौ भवेद्ध्याना, दंतरात्मनि निर्मले ॥ ३ ॥

आपत्तिश्च ततः पुण्य, तीर्थकृत् कर्मबंधतः ॥
तद्भावा भिमुखत्वेन, संपत्तिश्च क्रमाद् भवेत् ॥४॥
इत्थं ध्यानफलाद्युक्तं, विंशति स्थानकाद्यपि ॥
कष्टमात्रं त्वभव्याना, मपि नो दुर्लभं भवे ॥
जितेंद्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः ॥
सुखासनस्य नासाग्र, न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥ ६ ॥
रुद्धबाह्य मनोवृत्ते, र्धारणा धारयारयात् ॥
प्रसन्नस्या प्रमत्तस्य, चिदानंद सुधालिहः ॥ ७ ॥
साम्राज्यम प्रतिद्वंद्व, मंतरेव वितन्वतः ॥
ध्यानिनो नोपमा लोके, सदेव मनुजेऽपिहि ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. ध्याता, ध्येय, अने ध्यान ए त्रणे जेने एकताने पाम्यां छे एवा एकाग्र चित्तवाळा मुनिने कंइ पण दुःख नथी. जेटली ए बाबतमां खामी छे तेटलुंज दुःख शेष छे एम समजवुं अने जेम ते खामी जल्दी दुर थइ जाय तेम सावधानपणे तेनो खप करवो.

२. बाह्यदृष्टिपणुं तजीने अंतर दृष्टिथी आत्म-निरीक्षण करनारो अंतर-आत्मा ध्याता-ध्यान करवानो अधिकारी छे. समस्त दोषने दली निर्मल स्फटिक जेवुं शुद्ध स्वरूप जेमने संपूर्ण प्रगट्युं छे. एवा परमात्मा, ध्येय-ध्यानगोचर करवा योग्यछे. आवा ध्येयमां एकतानुं संलग्न भान ते ध्यान अने ए त्रणेनी अभेदता थवी ते एकता अथवा लय कहेवाय छे. एवी एकतामां हुं ध्याता छुं अने प्रभुजी ध्येय छे एवुं भान पण होतुं नथी, एटले हुं प्रभुना ध्यानमां लीन थयो छुं एवो पण भेदभाव रहेतो नथी. तेमां तो केवल एकाकार वृत्तिज बनी रहे छे.

३. जेम चंद्रकान्त विगेरे मणिमां सामी वस्तुनुं प्रतिबिंब पडी रहे छे तेम (ध्यानवडे) अंतर मलनो क्षय थये छते निर्मळ एवा अंतर-आत्मामां परमात्मानी प्रतिछाया (प्रतिबिंब) पडि रहे छे. सर्व अंतरमलनो सर्वथा क्षय थये छते ते अंतर आत्माज परमात्मारूप रहेछे. पण ते पहेलां पण ध्यानना दृढ अभ्यासी मुमुक्षुने एकता [illegible] परमात्म स्वरूप झलकी रहेछे.

[illegible] प्रथम तो आत्म-अनुभव सारी रीते थायछे [illegible] छे. त्यारबाद पवित्र एवा तीर्थ- [illegible] भावनी सन्मुखताथी तीर्थंकर [illegible] परमार्थ प्रगटपणे स-

मजाय छे के पवित्र ध्यानना प्रभावथी आत्मानुभव जागे छे, अने तेथी श्री तीर्थंकर नाम कर्म जेवो प्रकृष्ट पुण्य प्रकृति पण बंधाय छे.

५. आ प्रमाणे तीर्थंकर पदवीनी प्राप्ति रूप ध्याननुं फल जेथी प्रभवे छे. एवो वीस स्थानकादिक तप पण करवो युक्त छे. कष्ट मात्र रूप तप तो अभव्य जीवोने पण सुलभ छे. केवल संसारिक सुखने चाहनारा अभव्यने अयोग्यताथी परमार्थ-फलनी प्राप्ति थइ शकती नथी.

६-७-८. हवे ध्यान करवाने योग्य जीवनी केवी दशा होय छे, ते कंइ विशेषताथी जणावे छे. जितेन्द्रिय, धीर, प्रशान्त, स्थिरतावंत, सुखासन, अने नाशिकाना अग्रभागे स्थापी छे दृष्टि जेणे, तथा ध्येय वस्तुमां चित्तने स्थिर बांधी राखवा रूप धारणाना अखंड प्रवाहथी जेणे बाह्य मनोवृत्तिनो शीघ्र रोध कर्यो छे, प्रसन्न, अप्रमत्त, अने ज्ञानानंदरूपी अमृतनो आस्वाद करनारा, तेमज अनुपम एवा आत्म-साम्राज्यनो अंतरमांज अनुभव करनारा, एवा ध्यानी-योगीनी बरोबरी करे एवो कोइ पण देवलोकमां के मनुष्य लोकमां नथी. सुखासन एटले ध्यानमां विघ्न न पडे एवा अनुकूल पद्मासनादिने सेवनार जेने भववसनानो क्षय थयो छे, एटले विषय तृष्णा जेनी शमी गइ छे, अने निःस्पृहताथी जगतथी न्यारो रही शान्तपणे सहज-स्वभावमां ज रही जे प्रमाद रहित परमात्म स्वरू-

पने एकाग्रपणे ध्यावे छे, एवा आत्म गुण-विश्रामी सुप्रसन्न धीर महापुरुषनी जगतमां कोण होड करी शके? आवा महापुरुषोने ज अनेक प्रकारनी उत्तम लब्धि, सिद्धि विगेरे संभवे छे, अने आवा ध्याता पुरुषोज अंते ध्येय रूप थाय छे.

॥ ३१ ॥ तपाष्टकम् ॥

ज्ञानमेव बुधाः प्राहुः, कर्मणां तापना त्तपः ॥
तदाभ्यंतर मेवेष्टं, बाह्यं तदुपबृंहकम् ॥ १ ॥
आनुस्रोतसिकी वृत्ति, र्बालानां सुखशीलता ॥
प्रातिस्रोतसिकी वृत्ति, र्ज्ञानिनां परमं तपः ॥ २ ॥
धनार्थिनां यथा नास्ति, शीततापादि दुस्सहं ॥
तथा भव विरक्तानां, तत्त्वज्ञानार्थिनामपि ॥ ३ ॥
सदुपाया प्रवृत्ताना, मुपेय मधुरत्वतः ॥
ज्ञानिनां नित्य मानंद, वृद्धिरेव तपस्विनां ॥ ४ ॥
इत्थं च दुःखरूपत्वात्, तपो व्यर्थ मितीच्छतां ॥
बौद्धानां निहता बुद्धि, र्बौद्धानंदा परीक्षयात् ॥ ५ ॥

यत्रब्रह्म जिनार्चा च, कषायाणां तथा हतिः ॥
सानुबंधा जिनाज्ञा च, तत्तपः शुद्धमिष्यते ॥ ६ ॥
तदेव हि तपः कार्यं, दुर्ध्यानं यत्र नो भवेत् ॥
येन योगा न हीयन्ते, क्षीयन्ते नेंद्रियाणि वा ॥७॥
मूलोत्तर गुणश्रेणि, प्राज्य साम्राज्यसिद्धये ॥
बाह्यमाभ्यंतरं चेत्थं, तपः कुर्याद् महामुनिः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. कर्मने शिथिल करी नांखनार होवाथी ज्ञानज तप छे, एम तत्त्वज्ञानीओ कहे छे ते तप बे प्रकारनुं छे, एकतो बाह्य अने बीजुं अभ्यंतर तेमां कर्म मात्रनो क्षय करवा समर्थ एवो अभ्यंतर तपज श्रेष्ठ छे. प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग ए अभ्यंतर तपना भेद छे. आवा अभ्यंतर तपनी पुष्टि माटेज बाह्य तप करवानो कह्यो छे. अनशन (उपवास विगेरे) उनोदर्य (अल्प आहार करवो ते) वृति संक्षेप (भोगोपभोगना संबंधमां विशेष नियम पालवा ते) रसत्याग, कायक्लेश, अने संलीनता (आसन जय करवा नियम विशेष) ए बाह्य तपना छ प्रकार छे.

विवेकी आत्मा बाह्यतप साधनवडे अभ्यंतर तपनी अधिक अधिक पोषणा करतोज रहेछे.

२. इंद्रियो अने मन दोरी जाय तेम दोरावारूप बालजीवोनी अनुस्रोत-वृत्ति तो सर्वने सुखसाध्य छे, पण तेमनो जय करी सामापूरे चालवा जेवी ज्ञानी पुरुषोनी प्रतिस्रोत वृत्तिज परमतपरूप छे. प्रथमनी वृत्ति शीखवी पडती नथी अने बीजी तो खास शीखवी पडे छे.

३. जेम धनना अर्थीने शीत ताप विगेरे सहवा कठोन पडता नथी, तेम तत्त्वज्ञानना अर्थी एवा भववासथी विमुख जीवोने पण ते सहेवा सुलभ थइ पडे छे.

४. कल्याण साधवाना श्रेष्ठ उपायमां लागेला तत्त्वज्ञानी-तपस्वीने तेमां मिठाश उपजवाथी निरंतर आनंदनी वृद्धिज थती जाय छे. नित्य चढते परिणामे सदुपायद्वारा ते आत्म कल्याणने साधे छे. विवेकीने तप सुख रूपज छे.

५. आथी सिद्ध थाय छे के " दुःखरूप होवाथी तप करवो व्यर्थ छे एम इच्छनार बौध लोकोनी मति मारी गइ छे " केमके तपथी तो दुःखने वदले सहज आनंदनी वृद्धि थाय छे. माटे एवा कायर अने स्वच्छंदी सुख-शीलजनोनां वचन सांभली महा मंगल

मय तपमां मंद-आदर न थवुं. यथाशक्ति उभय तपमां अवश्य उद्यम करवो.

६. जे तप करतां, ब्रह्मचर्यनी गुप्ति (शील संरक्षण), वीतरागनी भक्ति, तथा कषायनी शान्ति सुखे सधाय छे, तेमज जिनेश्वर प्रभुनी पवित्र आज्ञानुं प्रतिपालन थाय छे, तेनुं जरापण उल्लंघन थतुं नथी तेवो तप शुद्ध-दोष रहित होवाथी अवश्य आचरवा योग्य ज छे, तपस्या करवावालाए उत्तम फल मेळववा उपरनी बाबत लक्षमां राखवा योग्य छे. केमके ते प्रमाणे वर्ततांज तपस्या लेखे थाय छे. एटले आत्मा निर्मल थतो जाय छे, अने अंते सर्व कर्ममलनो क्षय थतां अक्षय सुख संप्राप्त थाय छे.

७. तप करतां लगारे दुर्ध्यान थाय नहिं, स्वाध्याय ध्यानादिक संयम-योगमां खामी आवे नहिं, तेम धर्मकार्यमां सहायभुत थनारी इंद्रियो समूलगी क्षीण थइ जाय नहिं, एम खास उपयोग राखीने स्वशक्ति गोपव्या विना समताभाव लावीने श्री तीर्थंकर देवे पण सेवेला तपनो दरेक मोक्षार्थीए अवश्य आदर करवो.

८. अहिंसादिक पांच महाव्रत अने आहारशुद्धि विगेरे मूल तथा उत्तर संयम गुणोनी श्रेणिरुप श्रेष्ठ साम्राज्यनी सिद्धि करवा माटे महामुनि पण उभय प्रकारना तपनुं यथार्थ सेवन करवामां प्रमाद करे नहिं. केमके संयमवडे जोके नवां कर्म रोकाय छे, पण सं-

चित कर्मनो क्षय तो तप वडेज थाय छे. अने त्यारेज अक्षय पदनी प्राप्ति थइ शके छे. माटे संयमनी खरी सफलता पण तपथीज सिद्ध थाय छे.

॥ ३२ ॥ सर्वनयाश्रय—अष्टकम् ॥

धावन्तोऽपि नयाः सर्वे, स्युर्भावे कृतविश्रमाः ॥
चारित्रगुण लीनः स्या, दिति सर्वनयाश्रितः ॥ १ ॥
पृथङ् नयामिथः पक्ष, प्रतिपक्ष कदर्थिताः ॥
समवृत्ति सुखास्वादी, ज्ञानी सर्वनयाश्रितः ॥ २ ॥
नाप्रमाणं प्रमाणं वा, सर्वमप्य विशेषितं ॥
विशेषितं प्रमाणं स्या, दिति सर्वनयज्ञता ॥ ३ ॥
लोके सर्वनयज्ञानां, ताटस्थ्यं वाप्यनुग्रहः ॥
स्यातपृथङ् नयमूढानां, स्मयार्तिर्वातिविग्रहः ॥ ४ ॥
श्रेयः सर्वनयज्ञानां, विपुलं धर्मवादतः ॥
शुष्क वादाद्विवादा च्च, परेषां तु विपर्ययः ॥ ५ ॥
प्रकाशितं जनानां यै, र्मतं सर्व नयाश्रितम् ॥

चित्ते परिणतं चेदं, येषां तेभ्यो नमोनमः ॥ ६ ॥
निश्चये व्यवहारे च, त्यक्त्वा ज्ञाने च कर्मणि ॥
एक पाक्षिक विश्लेषा, मारूढाः शुद्ध भूमिकां ॥ ७ ॥
अमूढ लक्ष्याः सर्वत्र, पक्षपात विवर्जिताः ॥
जयंति परमानंद, मयाः सर्वनयाश्रयाः ॥ ८ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१. अनंत धर्म (गुण) वाली वस्तुना बीजा बधा धर्मनी सामान्यतः उपेक्षा करी मुख्यपणे अमुक एकज धर्मने स्थापनार नय कहेवाय छे. तेवा नय अनंता होवा घटे छे तोपण अत्र स्थूलताथी सात नयनुं कथन कर्युं छे, तेमां शेष सर्वेनो समावेश थइ जाय छे. नैगम, संग्रह, व्यवहार, रुजुसूत्र, शब्द, समभिरुढ, अने एवंभूत. ए साते नयनां नाम छे. तेनुं विशेष व्याख्यान बीजा ग्रंथोथी जाणवा योग्य छे. अत्र तो फक्त समुच्चय नयोनुं स्वरूप कहेलुं छे. सर्वे नयो उतावला छतां स्ववस्तु-धर्ममां विश्राम करनारा छे. अर्थात् वस्तु-धर्मने तजी बहार जता नथी, एम समजी चारित्र गुणमां लीन साधु सर्व नयनो समाश्रय करे छे, सर्व नयनो अभिप्राय साथे मळतांज संपूर्ण वस्तु-अनंत धर्मात्मक समजाय छे, बीजी रीते बोलिये तो

सर्व नयनो एकी साथे आश्रय करनारज चारित्र गुणमां लीन होइ शके छे, पण बीजो नहिं.

२. जूदा जूदा नयो परस्पर पक्ष अने प्रतिपक्षथी कदर्थित थाय छे. अर्थात् एकेक जूदा जूदा नयनेज अवलंबनारनी मांहोमांहे स्वपक्ष अने परपक्षथी कदर्थना थया करे छे. पण सर्व नयने सरखी रीते आदरनार तो समता सुखनोज आस्वाद करे छे. तात्पर्य एवो नीकले छे के समतारस (शान्तरस) ना अर्थी जने तो सर्व नयनो सरखी रीतेज आश्रय करवो योग्य छे. अर्थात् निरपेक्षपणे कोइ नयनुं खंडन मंडन करवा प्रवर्त्तवुं नहिं.

३. सामान्य कथन मात्र, अप्रमाण पण नथी तेम प्रमाण पण नथी. तेनी तेज वात स्यात् पदथी विशेषित थाय तो ते प्रमाणभूत थाय छे. जेमके वस्तु नित्य छे, ए कथन सामान्य होवाथी अप्रमाण नथी तेम प्रमाण पण नथी. पण "स्यात् नित्यं" ए कथन विशेषित होवाथी प्रमाणरूप छे. तेमज 'स्यात् अनित्यं' एवुं कथन पण प्रमाणभूतज छे. केमके दरेक वस्तु द्रव्यपणे नित्य छे पण पर्यायपणे तो अनित्य छे, जेम आत्मा द्रव्यपणे नित्य छे पण मनुष्यादि पर्यायपणे अनित्य छे. एम प्रत्येक वस्तु कथंचित् नित्यानित्य होइ शके छे. ए प्रमाणेज सर्व नयनुं रहस्य समजवानुं छे. तात्पर्य के एकलो-निरपेक्ष नय प्रमाण पण नथी तेम अप्रमाण पण नथी. पण बीजा

नयनी अपेक्षावाळो–सापेक्ष नयज प्रमाणभूत थाय छे माटेज सर्व नयाश्रितता श्रेष्ठ छे.

४. सर्व नयज्ञ पोते सापेक्षदृष्टि होवाथी तटस्थ रहि शके छे, अथवा अन्यजनोनुं समाधान करी शकवाथी उपकारी नीवडे छे. पण पृथक्–एकांत–निरपेक्ष नयमां आग्रहवंतने तो अहंकार जन्य पीडा अथवा भारे क्लेशज पेदा थाय छे, केमके तेवा कदाग्रहीने स्वपक्षनुं मंडन करवानो अने परपक्षनु खंडन करवानो सहज गर्व आवे छे अने तेम करवा जतां सहेजे क्लेश वधे छे. एवुं क्लिष्ट परिणाम सापेक्षदृष्टि एवा सर्व नयज्ञने कदापि आववानो संभव नथी. स्व पराहित पण एमज साधी शकाय छे. माटे सर्व नयज्ञताज श्रेष्ठ छे.

५. सर्व नयज्ञनेज धर्मचर्चाथी घणो लाभ लइ शके छे. बाकी बीजाने तो शुष्कवाद के विवादथी लाभने बदले उलटो तोटो (गेर-लाभ) ज थाय छे.

६. जेमणे सर्व नयाश्रित धर्म प्रकाश्यो छे अने ते जेमने अंतरमां परिणम्यो छे तेमने अमारो वारंवार प्रणाम छे. सत्य–सापेक्ष कथन अने कारक ए उभयनी बलिहारी छे.

७–८. निश्चय अने व्यवहार तेमज ज्ञान अने क्रियामां एकान्त पक्ष तजीने जेमणे स्याद्वादनो स्वीकार कर्यो छे एवा तत्त्वदृष्टि, पक्षपात वर्जित, अने सर्व नयनो आश्रय करनारा परमानंदी

पुरुषोज जगतमां जयवंता वर्ते छे. एकान्त पक्षज सर्व कदाग्रह अने दुःखनु मूळ छे. एम समजीनेज सर्व नयाश्रित सत्पुरुषोज एकान्त नहिं खेंचतां सर्वत्र ज्ञान अने क्रिया, उत्सर्ग अने अपवाद, तथा निश्चय अने व्यवहारनो स्वीकार करे छे. इतिशम्.

॥ उपसंहार ॥

पूर्णो मग्नः स्थिरोऽमोहो, ज्ञानी शान्तो जितेन्द्रियः ॥
त्यागी क्रियापरस्तृप्तो, निर्लेपो निस्पृहो मुनिः ॥ १ ॥
विद्याविवेक संपन्नो, मध्यस्थो भयवर्जितः ॥
अनात्म शंसकस्तत्त्व, दृष्टिः सर्वसमृद्धिमान् ॥ २ ॥
ध्याता कर्मविपाकाना, मुद्विग्नो भववारिधेः ॥
लोक संज्ञाविनिर्मुक्तः, शास्त्रदृग् निष्परिग्रहः ॥ ३ ॥
शुद्धानुभववान् योगी, नियागप्रतिपत्तिमान् ॥
भावार्चाध्यान तपसां, भूमिः सर्व नयाश्रयः ॥ ४ ॥
स्पष्टं निष्टंकितंतत्त्व, मष्टकैः प्रतिपत्तिमान् ॥
मुनिर्महोदयज्ञान, सारं समधिगच्छति ॥ ५ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

१–९. अक्षय अने अव्याबाध एवुं मोक्षसुख मेळवी आपनारं श्रेष्ठ ज्ञानसंपन्न कोण थइ शके छे? तेनु समाधान करे छे. जे सर्वथा उपाधि मुक्त थइ सहज गुणसंपत्तिनेज सार लेखी तेनेज ग्रहे छे, तेमांज मग्न थाय छे, तेमांज स्थिरता करे छे, इतर कोइ वस्तुमां मुंझातो नथी, बीजा संकल्प–विकल्प करतोज नथी पण शान्त चित्तथी स्वभावमांज रमे छे, मन अने इंद्रियो उपर जेणे जय मेळव्यो छे पण तेमने पराधीन थइ रहेतो नथी, बाह्यभावनो जेणे त्याग कर्यो छे, अने अंतरभाव जेने जागृत थयो छे, तेनीज पुष्टि माटे जे प्रयत्न करे छे पण बीजी नकामी बाबतमां राचतो नथी, सहज संतोषी छे, एटले जेणे विषयादि तृष्णाने छेदी छे, जे जगतथी न्यारोज रहे छे, तेमां लेपातो नथी, जे कोइनी आशा राखतो नथी, केवळ निःस्पृह थइ रहे छे, जे सारासारने सारी रीते समजे छे अने समजीने असारना परिहार पूर्वक सार मार्गने संग्रहे छे, सुख दुःखमां समदर्शी छे, तेमां हर्ष विषाद करतोज नथी, जे भय तजी निर्भयपणे स्व–इष्ट साधे छे, जे कदापि स्व–श्लाघा के परनिन्दा करतोज नथी जे तत्त्व-दृष्टि होवाथी वस्तुने वस्तुगतेज जाणे–जोवे छे, जे घटमांज सकल समृद्धि रहेली माने छे, जे कर्मनुं स्वरूप यथार्थ समजीने शुभाशुभ कर्मना उदयमां साम्य (समता) धारे छे, पण मनमां ते संबंधी

संकल्प-विकल्प करतो नथी, वळी जे आ भव-समुद्रथी उद्विग्न छतो तेनो वेगे पार पामवा माटे नित्य प्रमादरहित प्रयत्न कर्या करे छे, जेणे लोक संज्ञा तजी छे एटले मिथ्या लोभ लालचमां नहिं तणातां जे सामा पूरे छे, जे शास्त्र दृष्टिथी सर्वभावने प्रत्यक्षनी पेरे देखे छे, जेणे मूर्छाने तो मारी नाखी छे तेथी कोइपण पदार्थमां प्रतिबंध करतो नथी, जेने शुद्ध अनुभव जाग्यो तेथी जेणे चोथी उद्गारदशा धारी छे, अने केवळ ज्ञान पण जेने अति निकटज रहेलुं छे, जेथी अवंध्य (अचूक) मोक्षफळ मळे एवो समर्थ योग जेणे साध्यो छे, वीतराग आज्ञानु अखंड आराधन करवारुप निश्चित याग जेणे सेव्यो छे, भावपूजामां जे तल्लीन थयो छे, श्रेष्ठ ध्यान जेणे साध्युं छे, तेमज समता पूर्वक विविध तपने सेवी जेणे कठीन कर्मनो पण क्षय कर्यो छे, अने सर्व नयमां जेणे समानता बुद्धि स्थापी छे, तेथी तटस्थपणे रही सर्वत्र स्वपरहित सुखे साधी शके छे, एवा परमार्थदर्शी निष्पक्षपाती मुनिराज अनंतरोक्त ३२ अष्टक वडे स्पष्ट एवा निश्चित तत्त्वने पामीने, परम पद प्रापक 'ज्ञानसार' ने सम्यग् आराधी शके छे.

निर्विकारं निराबाधं, ज्ञानसारमुपेयुषां ॥
विनिवृत्त पराशानां, मोक्षोऽत्रैव महात्मनां ॥ ६ ॥

चित्तमार्द्रीकृतं ज्ञान,-सार सार स्वतोर्मिभिः ॥
नाप्नोति तीव्रमोहाग्नि, प्लोप शोष कदर्थना ॥ ७ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

६. सर्वथा विकारवर्जित (निर्दोष) अने विरोधरहित एवा आ ज्ञानसारने प्राप्त थयेला अने परआशाथी मुक्त थयेला महात्माओने अहिंज मोक्ष छे. अर्थात् एवा योगीश्वरो जीवनमुक्त छे.

७. ज्ञानसारना उत्तम रहस्य वडे जेनुं मन द्रवित (शान्त-शीतल) थयुं छे, तेने तीव्र मोह अग्निथी दाझवानो भय नथी. अर्थात् आवुं सार-रहस्य जेने परिणम्युं छे तेने मोह पराभव करी शकतो नथी.

अचिन्त्या कापि साधूनां, ज्ञानसार गरिष्ठता ॥
गतिर्ययोर्ध्वमेव स्या, दधः पातः कदापि न ॥ ८ ॥
क्लेशक्षयो हि मंडूक, चूर्णतुल्यः क्रियाकृतः ॥
दग्धतच्चूर्णसदृशो, ज्ञानसार कृतः पुनः ॥ ९ ॥
ज्ञानपूतां परेऽप्याहुः, क्रियां हेमघटोपमां ॥

युक्तं तदपि तद्भावं, न यद्भग्नापि सोज्झति ॥१०॥
क्रियाशून्यं च यज्ज्ञानं, ज्ञानशून्या च याक्रिया ॥
अनयोरंतरं ज्ञेयं, भानु खद्योत योरिव ॥ ११ ॥
चारित्रं विरतिः पूर्णा, ज्ञानस्योत्कर्ष एव हि ॥
ज्ञानाद्वैतनये दृष्टि, र्देयातद्योग सिद्धये ॥ १२ ॥

॥ रहस्यार्थ ॥

८. ज्ञानसारथी गुरु (वजनवाळा) थया छतां साधुजनो उंची गतिज पामे छे. कदापि नीची गतिमां जताज नथी ए आश्चर्य छे. केमके भारे वजनवाळी वस्तु तो स्वभाविक रीते नीचेज जवी जोइये.

९. ज्ञान विना शुष्क क्रियाथी मात्र नामनोज क्लेश क्षय थाय छे अने ज्ञानसारनी सहायथी तो समूळगो क्लेशनो क्षय थइ शके छे.

१०. ज्ञानयुक्त क्रिया सोनाना घडा जेवी छे, एम वेद-व्यासादिक कहे छे ते व्याजवी छे केमके कदाच ते भांगे तोपण सोनुं जाय नहिं. फक्त घाट घडामण जाय. तेम कदाच कर्मवशात् ज्ञानी क्रियाथी पतित थइ जाय तोपण तत् क्रिया संबंधी तेनी भावना नष्ट थइ जती नथी.

११. क्रिया शून्य ज्ञानमां अने ज्ञान शून्य क्रियामां जेटलो सूर्य अने खजूवामां आंतरो छे तेटलोज आंतरो छे. अर्थात् क्रिया-रहित पण भावना-ज्ञान सूर्य समान छे अने ज्ञान शून्य शुष्क क्रिया मात्र खजूवा जेवी छे.

१२. विभावथी संपूर्ण विरमवा रूप यथार्थ चारित्र पण विशिष्ट ज्ञाननुंज फळ छे एम समजीने एवा उत्कृष्ट चारित्रनी सिद्धि माटे ज्ञानथी अभिन्न एवा संयममार्गमां दृष्टि देवी. जेथी संयमनी पुष्टि थाय एवो ज्ञान-योगनो अभ्यास प्रमाद रहित करवो. संपूर्ण अभ्यासथी सहज चारित्र सिद्ध थशे.

सिद्धिं सिद्धपुरे पुरंदरपुरस्पर्धावहे लब्धवां ॥
श्चिद्दीपोऽयमुदारसारमहसा दीपोत्सवे पर्वणि ॥
एतद् भावन भाव पावन मन श्चंचच्चमत्कारिणां ॥
तैस्तैर्दीपशतैः सुनिश्चयमतैर्नित्योऽस्तु दीपोत्सवः॥१३॥

---

१३. स्वर्गपुरी जेवा सिद्धपुरमां दीवाली पर्व समये उदार अने सार ज्योतियुक्त आ ज्ञानसार रूप भावदीपक प्रगट थयो, अर्थात् आ ग्रंथ सिद्धपुर नगरमां दीवालीना दिवसे पूर्ण कर्यो. आ

ग्रंथमां कहेला सुंदर भावथी भावित पवित्र मनवाळा भव्य जीवोने आवा सेंकडो गमे भाव दीपको वडे नित्य दिवाळी थाओ ! एवी आ ग्रंथकारनी अंतर आशिष छे.

केषांचिद्विषयज्वरातुरमहो चित्तं परेषां विषा-
वेगोदर्क कुतर्क मूर्छित मथान्येषां कुवैराग्यतः ॥
लग्नालर्क मबोध कूप पतितं चास्ते परेषामपि ॥
स्तोकानां तु विकारभार रहितं तद् ज्ञानसाराश्रितं॥१४॥

---

१४. केटलाकनुं चित्त विषय-पीडाथी विह्वल होय छे. केटलाकनुं चित्त कुत्सित (मंद) वैराग्यथी हडकवावाळुं होवाथी जे ते विषयमां चोतरफ दोडतुं होय छे. केटलाकनुं वळी विषय-विषना आवेगथी थता कुतर्कोमां मग्न थयेलुं होय छे, तेमज केटलाकनुं तो अज्ञानरूप अंधकूपमां डूबेलुं होय छे. फक्त थोडाकनुं चित्त ज्ञानसारमां लागेलुं होवाथी विकार विनानुं होय छे. तात्पर्य के ज्ञानसारनी प्राप्ति महा भाग्येज थइ शके छे. जेमनुं चित्त विकार रहित होवाथी अधिकारी (योग्य) बन्युं छे तेमनेज आ ज्ञानसार संप्राप्त थइ शके छे. बाकीना योग्यता विनाना ने तेनी प्राप्ति थइ शकती नथी.

जातोद्रेक विवेक तोरण ततो धावल्यमातन्वते ॥
हृद्गेहे समयोचितः प्रसरति स्फीतश्च गीतध्वनिः ॥
पूर्णानंदघनस्य किं सहजया तद्भाग्य भंग्याभवन् ॥
नैतद् ग्रंथ मिषात् करग्रहमहश्चित्रं चारित्रश्रियः ॥१५॥

---

१५. चारित्र लक्ष्मीनो थतो विवाह महोत्सव आ ग्रंथना मिषथी पूर्णानंदी आत्माना सहज तेनी भाग्य रचना वडे वृद्धि पामेला विवेकरुपी तोरणनी श्रेणिवाळा मनमंदिरमां धवलताने विसारे छे अने स्फीत (विशाळ) मंगळ गीतनो ध्वनि पण मांहे प्रसरी रह्यो छे. तात्पर्य के चारित्र लक्ष्मीनो पूर्णानंदघन (आत्मा) नी साथे विवाह थाय छे त्यारे तेनुं मन उच्च प्रकारना विवेकवाळुं अने उज्वल निर्मल बने छे तेमज महा मंगलमय स्वाध्याय ध्याननो घोष बन्यो रहे छे. लौकिकमां पण विवाह समये घरमां उंचा तोरण बांधवामां आवे छे. घरने धोळवामां आवे छे अने विविध वाजिंत्र तथा मंगळ गीत-गावामां आवे छे. तेम अहिं चारित्र लक्ष्मीने वरनार पूर्णानंदीने सर्व परमार्थथी थयुं छे. सम्यग् ज्ञान अने चारित्रना मेळापथी सर्वत्र आवी घटना थाय छे अने थशे. एमां शुं आश्चर्य छे? अपितु कंइज नहिं.

भावस्तोमपवित्रगोमयरसै र्लिप्तैव भूः सर्वतः ॥
संसिक्ता समतोदकैरथपथि न्यस्ता विवेक स्रजः ॥
अध्यात्मामृतपूर्णकामकलशश्चक्रेऽत्र शास्त्रे पुरः ॥
पूर्णानन्दघने पुरं प्रविशति स्वीयंकृतं मंगलम् ॥ १६ ॥

---

१६. पूर्णानंदघन पोते अप्रमाद नगरमां प्रवेश कर्ये छते, पवित्र भावनाओ रूपी गोमयथी भूमि लिंपेली छे, चोतरफ समतारुपी जळनो छंटकाव करेलो छे, मार्गमां विवेकरूपी पुष्पनी माळाओ पाथरेली छे, अने अध्यात्मरुपी अमृतथी भरेलो मंगल कलश आ शास्त्रद्वाराज आगळ करेलो छे. एम विविध उपचारथी निज भाव मंगल कर्युं छे.

गच्छे श्री विजयादिदेव सुगुरोः स्वच्छे गुणानां गणैः ॥
प्रौढिं प्रौढिम धाम्नि जीतविजयप्राज्ञाःपरामैयरुः ॥
तत्सातीर्थ्यभृतां नयादि विजय प्राज्ञोत्तमानां शिशोः ॥
श्रीमन् न्याय विशारदस्य कृतिनामेपाकृतिः प्रीतये ॥१७॥

---

१७. ज्ञानदर्शन अने चारित्रादिक गुणोना समूहथी निर्मल अने उन्नतिना स्थानरुप श्री विजयदेव सूरिना गच्छमां प्राज्ञ श्री जितविजयजी श्रेष्ठ उन्नतिने पाम्या. तेमना गुरुभाई श्री नयविजयजी पंडितमां श्रेष्ठ थया. तेमना शिष्य श्रीमन् न्याय विशारद बिरुदना धरनार श्री यशोविजयजीनी आ रचना पंडित लोकोनी प्रीतिने अर्थे थाओ ! विविध गुण विशाळ एवा तपगच्छमां थयेला पंडित श्री नयविजयजीना शिष्य श्री यशोविजयजीए आ ज्ञानसार सूत्रनी रचना कीधी छे. आ ग्रंथमां शान्त रसनीज प्रधानता होवाथी ते रसज्ञ पंडितोने अभीष्टज थशे. केमके सर्व रसमां प्रधानरस शान्तरसज छे अने ते रसनी सिद्धिथीज आत्मा निरुपाधिक सुख पामी शके छे. आ अपूर्व अने अतिशय गंभीर ग्रंथनु स्वरूप निरूपण करतां जे कंइ

पुण्यार्जन थयुं होय तेथी अमने तथा श्रोता जनोने पवित्र शान्तरसनी पुष्टि थाओ ! तथास्तु. ! शुभंस्यात् सर्व भूतानाम्.

॥ श्री कल्याण मस्तु. ॥

वैराग्यसारने उपदेश रहस्य.

(१) जे पराइ निंदा विकथा करवामां मुंगो छे, परस्त्रीनुं मुख जोवामां आंधळो छे, अने परायुं धन हरवामां पांगळो छे, तेवो महापुरुषज जगमां जयवंतो वर्ते छे, परनिंदा, परस्त्रीमां रति अने परद्रव्य हरण महा निंद्य छे.

(२) जे आक्रोश भरेलां वचनोथी दूमातो नथी अने खुशामतथी खुशी थइ जतो नथी, जे दुर्गन्धथी दुगंछा करतो नथी, अने खुशबो-थी राजी थइ जतो नथी, जे स्त्रीना रुपमां रति धारतो नथी, अने मृतश्वानथी सूग लावतो नथी, एवो समभावी उदासी योगीश्वरज सर्वत्र सुख समाधिमां रहे छे.

(३) जेने शत्रु अने मित्र बंने समान छे, जेने भोगनी लालसा तूटी गइ छे, अने तपश्चर्यामां जेने खेद थतो नथी, जेने पथ्थर अने सुवर्ण (रत्नादिक) बंने समान छे, एवा शुद्ध हृदयवाळा समभावी योगीजनोज खरा योगधारी छे.

(४) कुरंगनी जेवा चंचळ नेत्रवाळी अने काळा नागनी जेवा कुटिल केशने धारवावाळी कामिनीना राग पाशमां जे नथी पडी जाता तेज खरा शूरवीर छे.

(५) स्त्रीना मध्यमां कृशता, भ्रुकुटीमां वक्रता; केशमां कुटीलता,

होठमां रक्तता, गतिमां मंदता, स्तनभागमां कठीनता, अने चक्षुमां चंचळता स्पष्ट जोइने फक्त कामाकुल मंदमति जनोज वैराग्यने भजता नथी. सुविवेकी जनोने तो ते वैराग्यनी वृद्धि माटेज थायछे.

(६) स्त्रीयो कपट करी गद्गद् वाणीथी बोले छे, तेने कामांधजनो प्रेमभक्ति तरीके लेखे छे. विवेकी हंसो तेथी ठगाइ जता नथी.

(७) ज्यां सुधी आहारनी लोलुपता तजी नथी, सिद्धांतना अर्थरूपी महौषधिनुं सम्यग् सेवन कर्युं नथी, अने अध्यात्म अमृतनुं विधिवत् पान कर्युं नथी, त्यां सुधी विषय ज्वरनुं जोर जोइए तेवुं घटतुं नथी. विषय तापनी शांति माटे रसलौल्यना त्याग पूर्वकः सिद्धांतसार चूर्ण तथा तत्त्वामृतनुं सम्यग् सेवन करवुंज जोइए.

(८) भरयौवन वयमां कामने जय करनार धन्य धन्य छे.

(९) जेणे जाणी जोइने कामिनीने तजी छे, अने संयमश्रीने सेवी छे, एवा सुविवेकी साधुने कुपित थयेलो पण काम कंइ करी शकतो नथी.

(१०) प्रियाने देखतांज कामज्वरनी परवशताथी संयम–सत्त्व क्षीण थइ जाय छे, पण नरकगतिना विपाक सांभरतांज तत्त्वविचार प्रगट थवाथी गमे तेवी व्हाली वल्लभा पण विख जेवी भासे छे.

(११) जेमणे यौवन वयमां पवित्र धर्म धुराने धारी महाव्रतो-

अंगीकार कर्या छे; तेवा भाग्यशाळी भव्योथीज आ पृथ्वी पावन थयेली छे.

(१२) कामदेवना बंधुभूत वसंतने पामीने सकळ वनराजी पण विविध वर्णवाळी मांजरना मिषथी रोमांचित थयेली लागे छे, तेमां सिद्धांतना सारनुं सतत सेवन करवाथी, जेमनुं मन विषय तापथी लगारे तप्त थतुं नथी, एवा संत सुसाधु जनोनेज धन्य छे.

(१३) स्वाध्यायरुपी उत्तम संगीत युक्त, संतोषरुपी श्रेष्ठ पुष्पथी मंडित, सम्यग् ज्ञान विलासरुपी उत्तम मंडपमां रही शुभ ध्यान शय्याने सेवी, तत्त्वार्थ बोधरुपी दीपकने प्रगटी, अने समतारुपी श्रेष्ठ स्त्रीनी साथे रमण करी केवल निर्वाण सुखना अभिलाषी महाशयोज रात्रीने समाधिमां गाळे छे.

(१४) शुद्ध ध्यानरुपी महा रसायणमां जेनुं मन मग्न थयुं छे; तेने कामिनीना कटाक्ष वगेरे विविध हावभावो शुं करनार छे?

(१५) सम्यग् ज्ञानरुपी जेना उंडा मूळ छे, समकितरुपी जेनी मजबूत शाखा छे, एवा व्रत-वृक्षने जेणे श्रद्धाजळथी सिंच्युं छे तेने अवश्य मोक्षफळ आपे छे. स्वर्गादिकना सुख तो पुष्पादिकनी पेरे प्रासंगिक छे, तेतो सहजमां प्राप्त थइ शके छे.

(१६) क्रोधादिक उग्र कषायरुपी चार चरणवाळो, व्यामो-

हरुपी सूंढवाळो, राग द्वेषरुपी तीक्ष्ण दीर्घ दांतवाळो, अने दुर्वार कामथी मदोन्मत्त थयेलो, महा मिथ्यात्वरुपी दुष्ट गजने सम्यग् ज्ञान–अंकूशना प्रभावथी जेणे वश कर्यो छे, ते महानुभावेज त्रणे लोकने स्ववश कर्या छे एम जाणवुं.

(१७) यशंकीर्तिने माटे पोतानुं सर्वस्व आपीदे एवा, अने पोताना स्वामीने माटे प्राण पण आपीदे एवा, बहु जनो मळी आवशे, पण शत्रुमित्र उपर जेमनुं मन समरस (सरखुं) वर्ते छे एवा तो कोइ विरलाज देखाय छे.

(१८) जेनुं हृदय दयार्द्र छे, वचन सत्यभूषित छे, अने काया परमार्थ साधनारी छे, एवा विवेकवानने कळिकाळ शुं करी शकवानो छे ?

(१९) जे कदापि असत्य बोलतोज नथी, जे रणसंग्राममां पाछी पानी करतो नथी, अने याचकोनो अनादर करतो नथी, तेवा रत्नपुरुषथीज आ पृथ्वी रत्नवती कहेवाय छे. केमके कहेवाय छे के–‘ बहुरत्ना वसुंधरा. ’

(२०) सर्व आशारुपी वृक्षने कापवा कुवाडा जेवो काळ, जो सर्वनी पाछळ पडयो न होत तो विविध प्रकारना विषय सुखथी कोइ कदापि विरक्त थातज नहिं.

(२१) जगतनी कल्पित मायामां फसाइ जीवो ममताथी मारुं मारुं कर्या करे छे, पण मूढताथी समीपवर्ती कोपेला कृतांत—काळने देखी शकता नथी. नहिं तो जगतनी मिथ्या मोह मायामां अंजाइ जइ मारुं मारुं करीने तेओ केम मरे ?

(२२) छती सामग्रीनो सदुपयोग करवामां बेदरकार रहेनारने काळ समीप आव्ये छते मनमां खेद थाय छे के हाय ! मे स्वाधीन-पणे कांइ पण आत्म साधन न कर्युं, हवे पराधीन पडेलो हुं शुं करी शकुं ? प्रथमथीज सावधानपणे सत् सामग्रीने सफळ करी जा-णनारने पाछळथी खेद करवो पडतोज नथी.

(२३) प्रथम प्रमादवडे तप जप व्रत पचखाण नहिं करनार कायर माणस पाछळथी व्यर्थ मात्र दैवनेज दोष दे छे. खरो दोष तो पोतानोज छे के पोते छती सामग्रीए सवेळा चेत्यो नहिं.

(२४) बाल शीघ्र योवन वयने प्राप्त करतो अने जुवान जरा अवस्थाने प्राप्त थतो अने तेपण काळने वश थयो छतो, दृष्ट नष्ट थयो देखाय छे; एवां प्रत्यक्ष कौतुकवाळा बनाव देख्या बाद बीजा इंद्रजाळनुं शुं प्रयोजन छे ? आ संसारज अनेक पात्र युक्त विचित्र नाटकरूपज छे.

(२५) कर्मनुं विचित्रपणुं तो जोवो ? के मोटा राजाधिराज

पण दुर्दैव योगे भीख मागतो देखाय छे; अने एक पामर भीखारी जेवो मोटुं साम्राज्य सुख पामे छे. ए पूर्वकृत कर्मनोज महिमा छे.

(२६) परलोक जतां प्राणीने पुत्रादिक संतती तेमज लक्ष्मी विगेरे कामे आवतां नथी. फक्त पुण्यने पापज तेनी साथे जाय छे.

(२७) मोहना मदथी मानवी मनमां धारे छे के, धर्म तो आगळ कराशे पण विकराळ काळ अचानक आवीने ते बापडानो कोळीयो करी जाय छे. पवित्र धर्मनुं आराधन करवामां प्रमाद सेवनार खरे-खर ठगाइ जाय छे, माटेज कह्युं छे के 'काले करवुं होय ते आजे कर अने आजे करवुं होय ते अब घडीए कर.' केमके कालने काळनो भय छे.

(२८) रावण जेवा राजवी, हनुमान जेवा वीर अने रामचंद्र जेवा न्यायीनो पण काळ कोळीयो करी गयो तो बीजानुं तो कहेवुंज शुं? आथीज काळ सर्वभक्षी कहेवाय छे; ए वात सत्य छे.

(२९) सुकृत या सदाचरण विना मायामय बंधनोथी बंधायेला संसारी जीवोनी मुक्ति-मोक्ष शी रीते थइ शके वारु?

(३०) आ मनुष्य जन्मरुपी चिंतामणी रत्न पामीने, जे गफलत करे छे. ते तेने गुमावीने पाछळथी पस्तावो करे छे. काम.

क्रोध, कुबोध, मत्सर, कुबुद्धि अने मोह मायावडे जीवो स्वजन्मने निष्फळ करी नांखे छे.

(३१) आ मनुष्य देहादिक शुभ सामग्रीनो सदुपयोग करवाथी निर्वाण सुख स्वाधीन थइ शके तेम छतां, रागांध बनी जीव मोहमायामां मुंझाइ मूढनी जेम कोटी मूल्यवाळुं रत्न आपी कांगणी खरीदे छे.

(३२) भयंकर नर्कादिकनो मोटो डर न होत तो कोइ कदापि पापनो त्याग करी शकत नहि; अने सद्गुणनो मार्ग सेवी शकत नहि.

(३३) जेणे निर्मल शीळ पाळ्युं नथी, शुभ पात्रमां दान दीधुं नथी अने सद्गुरुनुं वचन सांभळीने आदर्युं नथी, तेनो दुर्लभ मानव भव अलेखे गयो जाणवो.

(३४) संयोगनुं सुख क्षणीक छे; देह व्याधिग्रस्त छे अने भयंकर काळ नजदीक आवतो जाय छे; तोपण चित्त पाप कर्मथी विरक्त केम थतुं नथी ? अथवा संसारनी मायाज विलक्षण छे.

(३५) आ संसार चक्रमां जीव अनंतशः जन्म मरणना असह्य दुःख सह्यां छतां हजी तेथी मन उद्विग्न थतुं नथी, अने पाप क्रियामां तो ते अहोनिश मग्नज रहे छे.

(३६) अहो अंकेला सांढनी पेरे चित्त स्वेच्छा मुजब निंद्य मार्गमां भम्या करे छे; पण चारित्र धर्मनी धुराने अने महाव्रतना भारने वहन करतुं नथी! आथीज आत्मानी संसार चक्रमां बहु प्रकारे खराबी थाय छे.

(३७) पूर्व पुण्ययोगे अनुकूळ सामग्री मळ्या छतां प्रमादना वशथी जीव कंइ पण आत्म साधन करी शकतो नथी, तेथीज तेने संसार चक्रमां पुनः पुनः भमवुं पडे छे.

(३८) जेणे संसार संबंधी सर्व दुःखनां मूळ कारण भूत क्रोध, मान, माया, अने लोभरुपी चारे कषायोने हठाववा प्रयत्न कर्यो नथी, ते बापडाए हाथमां आवेलुं मनुष्य जन्मरुपी कल्पवृक्षनुं अमृत फळ चाख्युंज नथी.

(३९) बाल्यवय क्रीडा मात्रमां, योवनवय विषयभोगमां अने वृद्ध अवस्था विविध व्याधिना दुखमां हारी जनारने सुकृतना अभावे परलोकमां कंइ पण सुख साधन मळी शकतुं नथी.

(४०) जे द्रव्यना लोभथी जीव अनेक आकरां जोखममां उतरे छे, ते द्रव्यनुं अस्थिरपणुं विचारीने संतोष वृत्ति धारवी उचित छे.

(४१) आ मन मर्कट मोह मदिराना मदथी मत्त बन्यु छतुं; अनेक प्रकारनी कुचेष्टा करवा तत्पर रहे छे, सत् समागमरुपी अमृत

सिंचन विना मननुं ठेकाणुं पडवुं महा मुश्केल छे. सद्बोधथी केळवाइने लांबा अभ्यासे ते पांसरु थाय छे.

(४२) निर्मळ शीलव्रतधारी श्रावकने, परस्त्रीथी अने उत्तम चारित्रधारी साधुजनने सर्व स्त्रीथी निरंतर चेतता रहेवानी खास जरुर छे. प्रमादथी घणा पतित थइने पायमाल थइ गया छे.

(४३) जो विषयभोगमां नित्य जतुं मन रोकवामां आव्युं नहिं तो; भस्म चोळवाथी, धूम्र पान करवाथी, वस्त्र त्यागथी, तेमज अनेक बीजां कष्ट सहन करवाथी के जपमाळा फेरववाथी शुं वळवानुं हतुं ?

(४४) अमृत जेवां मधुर वचनथी खळ पुरुषोने जे सन्मार्गमां जोडवा इच्छे छे; ते मधना बींदुथी खारा समुद्रने मीठो करवा वांछे छे, अने निर्मळ जळथी कोयलाने साफ करवा मांगे छे, जे बनवुं केवळ अशक्य छे.

(४५) कुमतिने सर्वथा तिलांजली दइने, सुमतिनो सर्वदा आदर करनार महामति दुर्गतिने दळीने सद्गतिनो भागी थइ शके छे.

(४६) कमळना पत्र उपर रहेला जळबिंदु समान जीवितने, चंचळ लेखीने विविध विषय भोगथी विरमीने, मोक्षार्थी जीवे दान

शील तप अने भावना रुपी पवित्र धर्मनुं सेवन करवुंज उचित छे.

(४७) सर्व संयोगिक भावोने क्षण विनाशी समजीने, गुरु कृपाथी शीघ्र स्वहित साधी लेवा बनतो श्रम करवो विवेकीने उचित छे.

(४८) जेमणे दुर्जननी संगति करी तेणे धर्म साधननी आ अपूर्व तक खोइ छे; एम निश्चयथी समजवुं. दुर्जन द्विजिह्व सर्पनी जेवाज झेरीला होवाथी सामाने पण विक्रिया उपजावे छे.

(४९) जो परमात्मायां पूर्ण प्रेम जाग्यो नहिं यातो संपूर्ण गुणानुराग जाग्यो नहिं, तो विविध शास्त्र परिश्रम मात्रथी शुं वळ्युं?

(५०) मिथ्याडंबरथी जीव परीणामे भारे दुःखी थाय छे. मिथ्या दमामथी जीव उंधुं वेतरवा जाय छे, जेमां निश्चे हानिज पामे छे. एवो दंभ निश्चे दूर्गतिनुंज मूळ छे. माटे सर्व प्रकारे कपटवृत्ति तजीने सरल भावज धारण करवो मोक्षार्थीने युक्त छे. दंभ युक्त सर्व कष्ट करणी मिथ्या थाय छे, निर्मळ ज्ञान वैराग्य योगेज दंभनी दुष्ट घाटी उल्लंघी शकाय छे.

(५१) हे हृदय! करुणा समान वीजो कोइ अमृतरस नथी पर-द्रोह समान वीजुं हालाहल झेर नथी, सदाचरण समान वीजो क-ल्पवृक्ष नथी, क्रोध समान कोइ दावानळ नथी, संतोष उपरांत

कोइ प्रिय मित्र नथी, अने लोभ समान कोइ शत्रु नथी. आमांथी युक्तायुक्त विचारीने तुजने रुचे ते आदर! हितकारी मार्गज आदरवो ए सद्विवेक पाम्यानुं सार छे.

(५२) हे भाइ जो तुं निर्वाण सुखने वांछतो होय तो परम क्षान्तिरुपी प्रियानो आदर कर; केमके तेणी शील श्रद्धा, ध्यान विवेक, कारुण्य औचित्य, सद्बोध अने सदाचरणादिक अनेक गुण रत्नोथी अलंकृत छे. क्षान्ति-क्षमानुं सम्यग् सेवन कर्या विना कोइ कदापि मोक्षपद पामी शकेज नहि.

(५३) जे रागद्वेष अने मोहादिक दुष्ट दोषोथी सर्वथा मुक्त थइ, परमात्मपदने प्राप्त थया छे, अने जेमनुं वचन सर्व विरोधरहित छे, जे जगत् त्रयना निष्कारण बंधु छे; एवा परम कारुणिक सर्वज्ञ पुरुषज शरण करवा योग्य छे. एवा आप्त पुरुषना वचन अनुसारे वदनारा सत्पुरुषो पण मोक्षार्थी सज्जनोए सावधानपणे सेवन करवा योग्यज छे.

(५४) ज्यां सुधी सुकृतवडे करेलो पूण्यनो संचय प्होंचे छे, त्यां सुधीज सर्व प्रकारनी अनुकूळ सुख सामग्री मळी आवे छे, एम समजीने शुभ धर्मकरणी करवा मन सदोदित रहे तेम प्रमादरहित वर्त्तवुं.

(५५) ज्यां सुधी दुष्कृत करेलो पाप संचय प्होंचे छे त्यांसुधीज

सर्व प्रकारनी प्रतिकुळतावाळां कारण मळी आवे छे, एम समजीने पूर्व पापनो क्षय करवा उदित दुःखने समभावे सहन करवा पूर्वक नवां पाप कर्मथी सदा निवर्त्तीने शुभ धर्मकरणी करवा सदा साव-धान रहेवुं युक्त छे.

(५६) जेमणे आ अमूल्य मनुष्य जन्म पामीने प्रमादने परवश थइ धर्म आराध्यो नहि, तेमज छते धने कृपणताथी तेनो सदुपयोग कर्यो नहि, एवा विवेक विकळने मोक्षनी प्राप्ति दूरज छे.

(५७) आकाश मध्ये पण कदाच पर्वतशिला मंत्रतंत्रना योगे लांबो काळ लटकी रहे, दैव अनुकूळ होय तो वे हाथना बळे कदाच समुद्र पण तराय अने धोळे दहाडे पण कदाच ग्रह योगथी आका-शमां स्फुट रीते ताराओ देखाय परंतु हिंसाथी कोइनुं कदापि कंइ पण कल्याण संभवतुंज नथी.

(५८) जेम ज्योतिश्चक्र रात्री अने दिवसनुं मंडन छे, तेम अ-खंड शील सतीओ अने यतिओनुं खरेखरुं भूषण छे.

(५९) मायावडे वेश्या, शीलवडे कुल वालिका, न्यायवडे पृ-थ्वीपति, अने सदाचारवडे यति महात्मा शोभे छे.

(६०) ज्यां सुधीमां शरीर व्याधिग्रस्त थइ न जाय, ज्यां सुधीमां जरा अवस्थाथी देह जर्जरित थइ न जाय, अने ज्यां सुधीमां

इंद्रियोनुं वळ घटी न जाय, त्यां सुधीमां स्वस्वशक्ति अने योग्यता मुजब पवित्र धर्मनुं सेवन करवुं युक्त छे, सद् उद्यमथी सकळ कार्यनी सिद्धि थाय छे; अने प्रमादाचरणथी सकळ कार्यने हानि प्होंचे छे.

(६१) मद्य (Intoxication) विषय (evil propensities) कषाय (Wrath etc.) निद्रा (Idleness) अने विकथा-कपोल कथारुप पांच प्रकारना प्रमाद जीवोने दुरंत व्यथामां पाडे छे.

(६२) जगत्गुरु जिनेश्वर प्रभुना पवित्र वचननुं उल्लंघन करीने स्वच्छंद वर्त्तन चलाववुं एज प्रमादनुं व्यापक लक्षण छे.

(६३) एवा प्रमादना जोरथी चौद पूर्वधर समान समर्थ पुरुषो पण सत्य चारित्र धर्मथी चलायमान थइ पतित थइ गया छे. तो बीजा अल्पज्ञ अने ओछा सामर्थ्यवाळाओनुं तो कहेवुंज शुं ?

(६४) थोडुं रुण थोडुं व्रण (चांदु) थोडो अग्नि अने थोडा कषायनो पण कदापि विश्वास करवो नहि. केमके ते सर्व थोडामांथी वधीने मोटुं भयंकर रुप धारण करे छे.

(६५) ज्यां सुधी क्रोधादि चारे कषायोनो सर्वथा क्षय थाय नहि, थोडो पण कषाय शेष रह्यो त्यां सुधी तेनो विश्वास करवो नहि. थोडा पण अवशिष्ट रहेला कषायनी उपेक्षा करवाथी क्वचित्

भारे विघ्न परीणाम आवे छे, माटे तेमनो सर्वथा क्षय करवा सतत् प्रयत्न करवो युक्त छे.

(६६) ज्ञानी पुरुषो क्रोधादिक चारे कषायने चंडाळचोकडी तरीके ओळखावे छे, अने तेनाथी सर्वथा अळगा रहेवा आग्रह करे छे.

(६७) राग अने द्वेष ए बंने क्रोधादिक चारे कषायनुं परिणाम छे, अथवा तो राग अने द्वेषथी उक्त क्रोधादि चारे कषायनी उत्पत्ति अने वृद्धि थाय छे. एम समजीने रागद्वेषनोज अंत करवा उजमाळ थवुं युक्त छे. ते बंनेनो अंत थये पूर्वोक्त चारे कषायनो स्वतः अंत थइ जाय छे.

(६८) रागद्वेष ए बंने मोहथकी प्रभवे छे, तेथी ते बंने मोहराज पुत्र तरीके ओळखाय छे, रागने केसरी सिंह जेवो बळवान कह्यो छे. अने द्वेषने मदोन्मत हाथी जेवो मस्त मान्यो छे. तेथी तेमनो जय करवा ज्ञानी पुरुषो मोटा सामर्थ्यनी जरुर जोवे छे.

(६९) राग अने द्वेष केवळ मोहराज विकारभूत होवाथी, ज्ञानी पुरुषो मोहनेज मारवानुं निशान ताके छे. मोह सर्व कर्ममां अग्रेसर छे.

(७०) मोहनो क्षय थये छते शेष सर्व परिवार पण स्वतः क्षय थाय छे. पण तेनी प्रबळता वडे सर्व शेष परिवारनुं पण प्राबल्य वधतुं जाय छे, दुनीयामां बळवानमां बळवान शत्रु मोहज छे.

(७१) काम, क्रोध, मद मत्सरादिक सर्व मोहनाज परिवार छे, एम समजीने मोह क्षयार्थीए ते सर्वथी चेतता रहेवानी खास जरुर छे.

(७२) हुं अने माहरुं एवा गुप्त मंत्रथी मोहे जगतने आंधळुं करी नांख्युं छे. अर्थात् ममताथीज मोहनी वृद्धि थती जाय छे.

(७३) नहिं हुं अने नहि मारुं ए मोहनेज मारवानो गुप्त मंत्र छे. अर्थात् निर्मलताज मोहने मारवानुं प्रबळ साधन छे.

(७४) आत्मानुं शुद्ध स्वरुप समजवाथी तेमज परभावने बरा-बर पीछानवाथी मोहनुं जोर पातळुं पडे छे.

(७५) स्फटिक रत्नोनी जेवुं निर्मल आत्मानुं स्वरुप छे, छतां कर्मकलंकथी ते मलीनताने पामेलुं होवाथी, जीव तेमां मुग्धताथी मुंझाय छे.

(७६) कर्मकलंक दूर थये छते जेवुं ने तेवुं निर्मल आत्म स्व रुप प्रगटे छे, त्यारे आत्माने तेनो साक्षात् अनुभव थाय छे.

(७७) कर्मकलंकने दूर करवा माटे सर्वज्ञ प्रभुए सम्यग् ज्ञान दर्शन अने चारित्ररुपी श्रेष्ट साधन बतावेलुं छे.

(७८) एज साधनथी पूर्वे अनेक महाशयोए आत्म शुद्धि करी छे, वर्तमान काळे साक्षात करे छे; अने आगामी काळे करशे एम समजीने उक्त साधनमां दृढतर उद्यम करवो युक्त छे.

(७९) ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य अने उपयोग एज आत्मानुं अनन्य लक्षण छे, एथी भिन्न विपरीत लक्षण अजीव जडनुंज छे.

(८०) स्व लक्षणांकित सद्गुणोमां रमण करवुं ते स्वभाव रमण कहेवाय छे, अने तेथी विपरीत दोषोमां विभाव प्रवृत्ति कहेवाय छे. मोक्षार्थीए विभाव प्रवृतीने तजी स्वभाव रमणज करवुं उचित छे, एम करवाथी आत्मानुं शुद्ध स्वरुप प्रगट थाय छे.

(८१) सम्यग् ज्ञान, दर्शन, अने चारित्ररुपी रत्नत्रयीनुं संसेवन करवाथी जेमने अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र अने अनंत–वीर्यरुपी अनंत चतुष्टयी प्राप्त थयेल छे; एवा परमात्मपद प्राप्त महापुरुषोज मोक्षार्थीओ ए ध्यावा योग्य छे.

(८२) एवा परमात्मानुं ध्यान करवाथी मन स्थिर थाय छे, इंद्रियो अने कषायनो जय थाय छे, अने शांत रसनी पुष्टिथी आ-

त्मा पोतेज परमात्मपदनो अधिकारी थाय छे, घनघाति कर्मनो क्षय थतांज पोते परमात्म रुप थाय छे, माटे मोक्षार्थी जनोए एवाज परमात्म प्रभुनुं ध्यान करवुं के जेथी अंते पोते पण तद्रूपज थाय.

(८३) एवा परमात्मपद प्राप्त पुरुषो पण अवशिष्ट अघाति कर्म क्षय थतां सुधी तो शरीरधारीज होय छे पण संपूर्ण कर्मथी मुक्त थये छते तेओ शरीरमुक्त—अशरीरी पूर्ण सिद्ध अवस्थाने प्राप्त थाय छे अने एकज समयमां सर्वथा सर्व बंधन मुक्त छता लोकना अग्र भागे जइ स्थितिने भजे छे.

(८४) त्यां तेओ अनंत ज्ञानादिक स्वरुप स्वभावमां स्थित छतां परमानंदमां मग्न रहे छे जन्म मरणादिक सर्व बंधनथी सर्वथा मुक्तज रहे छे एवा सिद्ध परमात्मा पण अनंत छे.

(८५) एवा सिद्ध भगवानना सद्गुणोनुं अनुकरण करीने जे तेमनुं अभेदपणे ध्यान करे छे ते स्फीताशयो पण तेवीज स्थितिने अंते भजे छे.

(८६) एवा भावी सिद्ध पुरुषो पण अनंत छे.

(८७) उत्तम प्रकारना आचार विचारमां कुशलपणे पोते प्रवर्तता छता अन्य मोक्षार्थी वर्गने प्रवर्तावनारा आचार्य महाराजा, पवित्र अंग उपांगरुप-आगम सिद्धांतने संपूर्ण जाणीने अन्य विनीत

वर्गने परमार्थ दावे पढावनारा उपाध्याय महाराजा, तथा पवित्र रत्नत्रयीना पालन पूर्वक अन्य आत्मार्थी जनोने यथाशक्ति आलंबन आपनारा मुनिराज महाराजा सर्वोत्तम लोकोत्तर मार्गना सेवनथी पूर्वोक्त परमात्म पदना पूर्ण अधिकारी होवाथी अनुक्रमे परमात्मपद पामीने संपूर्ण सिद्धरुप थाय छे.

(८८) जेओ संसारीक सुख संयोगोनी अनित्यता विचारीने संसारना सर्व संबंधथी विरक्त थइ उदासीन भाव धारण करी परमात्म पंथने अनुसरवा कटिबद्ध थइ स्व स्वभावमां स्थित थइ सिद्ध परमात्माने अभेद भावे ध्यावे छे तेओ सर्व दुःखबंधनने छेदीने निश्चे सिद्ध दशाने प्राप्त थाय छे.

(८९) एवा महापुरुषोनो समागम मोक्षार्थी जीवोने परम आशीर्वादरुप छे एम समजीने सर्व प्रमाद तजी सत्समागमनो बनतो लाभ लेवा चूकवुं नहिं, एवा सत्समागमथी क्षण वारमां अपूर्व लाभ संपादन थाय छे.

(९०) जेमनुं मन सत्समागम वडे ज्ञान वैराग्यमां तरबोळ रहे छे तेमनुं सुख तेओज जाणे छे. प्रियाना आलिंगनथी के चंदनना रसथी तेवी शीतळता वळती नथी एवी शीतळता वैराग्य रसनी ल्हेरीयोथी प्रभवे छे. जेम वैराग्य रसनी वृद्धि थाय तेम प्रयत्न करवो जरुरनो छे.

(९१) वैराग्य रसथी अनादि काळनो रागादिकनो ताप उपशमे छे, तृष्णा शांत थाय छे, अने ममत्वभाव दूर थाय छे, यावत् मोहनुं जोर नरम पडे छे अने चारित्रमार्गनी पुष्टि थाय छे.

(९२) वैराग्य रसनी अभिवृद्धिथी एवी तो उत्तम उदासीन दशा छाय जाय छे के तेथी सर्वत्र समानभाव वर्ते छे. निंदा–स्तुतिमां तेमज शत्रु–मित्रमां समपणुं आववाथी हर्ष शोक थता नथी. अनुकूळ के प्रतिकूळ सर्व संयोगोमां समचित्तपणुं आवे छे तेथी स्वभावनी शुद्धि विशेषे थाय छे.

(९३) वैराग्यनी वृद्धिथी संसारवास कारागृह जेवो भासे छे अने तेथी विरक्त थइ पारमार्थीक सुख माटे यत्न करवा मन दोराय छे.

(९४) शांत रसनी पुष्टि थतां द्रव्य अने भाव करुणानी वृद्धि थाय छे अने शांत रसना समुद्र एवा वीतराग प्रभुना वचन उपर पूर्ण प्रतीति आवे छे जेथी गमे तेवी कसोटीना वखते पण सत्य मार्गथी चलायमान थवातुं नथी.

(९५) प्रशम रसनी पुष्टि थवाथी अपराधी जीवनुं मनथी पण प्रतिकूळ–अहित चिंतवन करातुं नथी आवी रीते विवेक वर्तनथी मोक्ष महेलनो मजबूत पायो नंखाय छे अने सकळ धर्मकरणी मोक्ष साधकज थाय छे.

(९६) चिरकाळना लांबा अभ्यासथी शांतवाहिता योगे अहिंसादिक महाव्रतोनी दृढता अने सिद्धि थाय छे जेथी समीपवर्ती हिंसक जीवो पण पोतानो क्रूर स्वभाव तजी दइने शांत भावने भजे छे अने सातिशयपणाथी देव दानवादिक पण सेवामां हाजर रहे छे. आवो अपूर्व महिमा शांत–वैराग्य रसनोज छे एम सर्व मोक्षार्थी जनोने विशेषे प्रतीत थाय छे तेथी तेमां तेओ अधिक प्रयत्न करे छे.

(९७) जेमने मन, वचन अने कायामां संपूर्ण स्थिरता प्राप्त थइ छे एवा योगीश्वरो गाममां के अरण्यमां दिवसे के रात्रीमां सरखी रीते स्व स्वभावमांज स्थित रहे छे. कदापि संयम मार्गमां अरति भजताज नथी. सुवर्णनी पेरे विषम संयोगोमां चढवाने ते वर्ते छे.

(९८) जेओ फक्त अन्यनेज शिखामण देवामां शूरा छे तेओ खरी रीते पुरुषनी गणनामांज नथी. पण जेओ पोतानेज उत्तम शिखामणो आपीने चारित्र मार्गमां स्थिर करे छे तेओज खरेखर सत् पुरुषोनी गणनामां गणावा योग्य छे.

(९९) कांचनने जेम जेम अग्निमां तपाववामां आवे छे तेम तेम तेनो वान वधतोज जाय छे. शेलडीना सांठाने जेम जेम छेदवामां के पीलवामां आवे छे तेम तेम ते सरस मिष्ट रस समर्पे छे.

तेमज चंदनने जेम जेम घसवामां के कापवामां आवे छे तेम तेम ते तेना घसनार के कापनारने उत्तम प्रकारनी सुगंध या खुशवो आपे छे. तेवीज रीते सत्पुरुषोने प्राणांत कष्ट पडये छते पण कदापि प्रकृतिनो विकार थतोज नथी. ते तो तेवे वखते उलटी अधिक उजळी थइ आत्म लाभ भणी थाय छ आवाज पुरुषो जगतमां खरा पुरुषनी गणनामां गणावा योग्य छे.

(१००) योगी पुरुषोने वैराग्य–पुष्टिथी जे अंतरंग सुख थाय छे तेवुं सुख इंद्रादिकने स्वप्नमां पण संभवतुं नथी. केमके इंद्रादिकनुं सुख विषयजन्य होवाथी केवळ वहिरंग–बाह्य–कल्पितज छे.

(१०१) मध्य–उदरनी दुर्वळताथी कृशोदरी–स्त्री शोभे छे, तपोनुष्ठानवडे थयेली शरीरनी दुर्वळताथी यति–मुनि शोभे छे, अने मुखनी कृशताथी घोडो शोभे छे, पण तेओ कंइ आमुपणथी शोभतां नथी. सर्व कोइ स्व स्व लक्षण लक्षित छतांज शोभे छे.

(१०२) जे स्त्रीनां प्रेमाळ वचन सांभळीने चंचळ–चित्त थतो नथी तेमज स्त्रीना नेत्र कटाक्षथी पण लगारे संक्षोभ पामतो नथी तेज योगीश्वर रागद्वेष विवर्जित होवाथी जगतमां जयवंतो वर्त्ते छे.

(१०३) अनेक दोषथी भरेली कामनी कुपित थये छतं पण कामातुर जीव तेणीनो आदर करतो जाय छे. एवी कामांधताने धिकार पडो.

(१०४) जेनो संयोग थयो छे तेनो वियोग तो अवश्य व्हेलो मोडो थवानोज छे. त्यारे वियोग वखते शा माटे हृदयने शल्यरुप शोक करवोज जोइये ? तेवा दुःखदायी शोकथी शुं वळवानुं छे ?

(१०५) ममता विना शोक थतो नथी. ज्ञान वैराग्यथी ते ममता घटे छे. सम्यग्ज्ञान या अनुभव ज्ञानथी गांठ तूटे छे अने हृदयनुं बळ वधवाथी घटमां विवेक जागवाथी शोकादिकने अंतरमां पेसवानो अवकाश मळतो नथी.

(१०६) कफना विकारवाळुं नारीनुं मुख क्यां अने अमृतथी भरेलो चंद्रमा क्यां ? ते बंने वच्चे महान् अंतर छतां मंदबुद्धि एवा कामी लोको तेमनुं ऐक्य सरखापणुंज माने छे.

(१०७) हाथीना काननी माफक चपळ–क्षणवारमां छेह दे एवा विषय भोगने परिणामे माठा विपाक आपवावाळा जाण्या छतां तजी न शकाय ए केवळ मोहनीज प्रबळता देखाय छे.

(१०८) एक एक इंद्रियनी विषय लंपटताथी पतंगीया, भमरा, माछलां, हाथी अने हरण प्राणांत दुःख पामे छे तो एकी साथे पांचे इंद्रियोने परवश पडेला पामर प्राणीयोनुं तो कहेवुंज शुं ?

(१०९) जेम इंधनथी अग्नि शांत थतो नथी, परंतु ते वृद्धिज पामे छे तेम विषय भोगथी इंद्रियो तृप्त थती नथी परंतु तेथी तृष्णा वधती जाय छे. अने जेम जेम विशेषे विषय सेवन करवा जीव ल-लचाय छे तेम तेम अग्निमां आहूतिनी पेरे कामाग्निनी वृद्धि थया करे छे.

(११०) अनुभव ज्ञानीयोए युक्तज कह्युं छे के ज्ञान-वैराग्यज परममित्र छे, काम भोगज परमशत्रु छे, अहिंसाज परम धर्म छे अने नारीज परम जरा छे (केमके जरा विषयलंपटीनो शीघ्र पराभव करे छे.)

(१११) वळी युक्तज कह्युं छे के तृष्णा समान कोइ व्याधि नथी अने संतोष समान कोइ सुख नथी.

(११२) पवित्र ज्ञानामृत या वैराग्यरसथी आत्माने पोषवाथी तृष्णानो अंत आवे छे अने संतोष गुणनी प्राप्ति अने वृद्धि थायछे.

(११३) संतोष सर्व सुखनुं साधन होवाथी मोक्षार्थी जनोए ते अवश्य सेवन करवा योग्य छे. अने लोभ सर्व दुःखनुं मूळ होवाथी अवश्य तजवा योग्य छे. लोभ-बुद्धि तजवाथी संतोष गुण वाधे छे.

(११४) क्रोधादि चारे कषाय, संसाररूपी महावृक्षनां उंडा मजबूत मूळ छे. संसारीनो अंत करवा इच्छनार मोक्षार्थीए कषाय-

नोज अंत करवो युक्त छे. कषायनो अंत थये छतें भवनो अंत थयोज समजवो.

(११५) उपशम भावथी क्रोधने टाळवो, विनयभावथी मानने टाळवो, सरलभावथी माया–कपटनो नाश करवो अने संतोषथी लोभनो नाश करवो. कषायने टाळवानो एज उपाय ज्ञानीयोए बताव्यो छे.

(११६) राग अने द्वेषथी उक्त चारे कषायने पुष्टि मळे छे माटे वीतराग प्रभुए सर्व कर्मनो जड जेवा राग अने द्वेषनेज मूळथी टाळवा वारंवार उपदेश कर्यो छे. द्वेषथी क्रोध अने माननी तथा रागथी माया अने लोभनी वृद्धि थाय छे. राग–द्वेषनो क्षय थवाथी सर्व कषायनो स्वतः क्षय थइ जाय छे. माटे मोक्षार्थीए राग–द्वेषनो अवश्य क्षय करवो युक्त छे.

(११७) विषय भोगनी लालसाथी राग–द्वेषनी उत्पत्ति अने वृद्धि थाय छे माटे मोक्षार्थीए विषय लालसाने तजीने सहज संतोष गुण सेववो युक्त छे.

(११८) विविध विषयनी लालसावाळुं मलीन मनज दुर्गतिनुं मूळ छे माटे एवा मननेज मारवा महाशयो भार दइने कहे छे.

(११९) मनने मार्याथी इंद्रियो स्वतः मरी जाय छे. इंद्रियोना

मरणथी विषयलालसानो अंत आववाथी रागद्वेषरुप कषायनो पण अंत आवे छे, रागद्वेष रुप कषायनो क्षय थवाथी घाति कर्मनो क्षय थाय छे अने अनंत ज्ञानादिक सहज अनंत चतुष्टयी प्रगट थाय छे. यावत् अवशिष्ट अघाति कर्मनो पण अंत थतांज अज अविनाशी मोक्ष पदवी प्राप्त थाय छे.

(१२०) मन अने इंद्रियोने वश करीने विषयलालसा तजवाथी आवो अनुपम लाभ थतो जाणीने कोण हतभाग्य कामभोगनी वांछा करीने आवा श्रेष्ठ लाभ थकी चूकशे ? मुमुक्षु जनोने तो विषयवांछा हालाहल झेर जेवी छे.

(१२१) विषयलालसा हालाहल झेरथी पण आकरी छे केमके झेरतो खाधा बादज जीवनुं जोखम करे छे अने विषयनुं चिंतवन करवा मात्रथी चारित्र–प्राणनुं जोखम थाय छे. अथवा विष खाधुं छतुं एकज वखत मारे छे पण विषयवांछा तो जीवने भवोभव भटकावे छे.

(१२२) विषयसुखने वैराग्य योगे तजीने फरी वांछनार वमन–भक्षी श्वाननी उपमाने लायक छे.

(१२३) योगमार्गथी पतित थता मुमुक्षुने योग्य आलंबन आपीने पाछो मार्गमां स्थापवामां अनर्गळ लाभ रहेलो छे.

(१२४) जेम राजीमतिये रथनेमिने तथा नागिलाए भवदेव-

मुनिने तथा कोशाए सिंह गुफावासी साधुने प्रतिबोध आपीने संयम मार्गमां पुनः स्थाप्या तेम निःस्वार्थ बुद्धिथी मोक्षार्थी जीवने अवसर उचित आलंबन आपनार मोटो लाभ हांसल करी शके छे.

(१२५) मोक्षार्थी जनोए हमेशां चढताना दाखला लेवा योग्य छे पण पडताना दाखला लेवा योग्य नथी. चढताना दाखलाथी आत्मामां शूरातन आवे छे, अने पडताना दाखलाथी कायरता आवे छे.

(१२६) च्हाय तो पुरुष होय के स्त्री होय पण खरो पुरुषार्थ सेववाथीज ते सद्गति साधी शके छे. पुरुष छतां पुरुषार्थहीन होय तो ते पुंगणमां नथी अने स्त्री छतां पुरुषार्थयोगे पुंगणनामां गणवा योग्यज छे. पूर्वे अनेक उत्तम स्त्रीओए पुरुषार्थना वळे परमपदनो अधिकार प्राप्त कर्यो छे. मोक्षार्थी जनोए एवा चढताना दाखला लेवा योग्य छे. तेथी स्वपुरुषार्थ जागृत थाय छे.

(१२७) केवळ पुरुषज परमपदनो अधिकारी छे, स्त्रीने तेवो अधिकार नथी एम बोलनारा पक्षपाती या मिथ्याभाषी छे खरी वात तो ए छे के जे खरो पुरुषार्थ सेवे छे ते च्हाय तो पुरुष होय यातो स्त्री होय पण अवश्य परमपदनो अधिकारी होवाथी परम-पद मोक्षसुखने साधी शके छे. पुरुषनी पेरे अनेक स्त्रीओए पूर्वे परमपद साधेलुं छे.

(१२८) सम्यग् ज्ञानदर्शन अने चारित्रनुं विधिवत् पालन करवुं ते खरो पुरुषार्थ छे. पुरुषार्थहीन कायर माणसो तेम करी शकतां नथी.

(१२९) अहिंसादिक पांच महाव्रत तथा रात्रीभोजननो सर्वथा त्याग करवारुपी छठुं व्रत विवेकबुद्धिथी समजीने ग्रहण करी सिंहनी पेरे शूरवीरपणे ते सर्व व्रतोनुं यथाविधि पालन करवुं तथा अन्य योग्य–अधिकारी स्त्रीपुरुषोने शुद्ध मार्ग समजावी सन्मार्गमां स्थापी तेमने यथोचित सहाय आपवी ते खरो कल्याणनो मार्ग छे.

(१३०) सर्व जीवोने आत्म समान लेखीने कोइने कोइ रीते मनथी, वचनथी के कायाथी हणवो नहिं, हणाववो नहिं के हणनारने संमत थवुं नहिं ए प्रथम महाव्रतनुं स्वरुप छे. एम सर्वत्र समजी लेवानुं छे.

(१३१) क्रोधादिक कषायथी, भयथी के हास्यथी जूठ बोलवुं नहिं, जूठ बोलाववुं नहिं तेमज जूठ बोलनारने संमत थवुं नहिं ए बीजुं महाव्रत छे. पवित्र शास्त्रना मार्गने मूकीने स्वच्छंदे बोलनार मृषावादीज छे.

(१३२) पवित्र शास्त्रनी आज्ञा विरुद्ध कोइपण चीज स्वामीनी रजा विना लेवी नहिं, लेवडाववी नहिं, तेमज लेनारने संमत थवुं

नहिं. संयमना निर्वाह माटे जे कांइ अशन वसनादिक जरुर होय ते पण शास्त्र आज्ञा मुजब सद्गुरुनी संमति लइने अदीनपणे गवेपणा करतां निर्दोप मळे तोज ग्रहण करवुं ए त्रीजुं महाव्रत कह्युं छे.

(१३३) देव, मनुष्य के तिर्यंच संबंधी विषयभोग मन, वचन, के कायाथी सेववा नहिं बीजाने सेवडाववा नहिं अने सेवनारने संमत थवुं नहिं ए चोथुं महाव्रत जाणवुं.

(१३४) कंइ पण अल्प मूल्यवाळी के बहु मूल्यवाळी वस्तु उपर मुर्छा राखवी नहिं, संयमने बाधकभूत कोइ पण वस्तुनो संग्रह करवो नहि, कराववो नहि, तेमज करनारने संमत थवुं नहि. ए पांचमुं महाव्रत छे.

(१३५) अशन, पाणी, खादिम के स्वादिम रात्री समये (सूर्य अस्त पछी अने सूर्य उदय पहेलां) सर्वथा वापरवा नहिं वपराववा नहि तेमज वापरनारने संमत थवुं नहिं ए छठुं व्रत छे.

(१३६) पूर्वोक्त सर्व महाव्रतोनुं यथाविधि पालन करतां जेम रागद्वेपनी हानी थाय तेम सावधानपणे प्रवृत्ति निवृत्ति मार्ग स्वीकारी तेनो यथार्थ निर्वाह करवो, अने अन्य आत्मार्थीजनोने यथाशक्ति यथावकाश सहाय करवी ते उत्तम प्रकारनो पुरुपार्थ छे.

(१३७) सद्गुरुनुं शरण लही तेमनी पवित्र आज्ञानुसारे वर्तनार महाशयोनो सकळ पुरुपार्थ सफळ थाय छे.

(१३८) सद्गुरुनी कृपाथी प्राप्त थयेला सद्बोधवडे, संयम मार्गमां आवता अपायो सहेलाइथी दूर करी शकाय छे.

(१३९) मुमुक्षुजनोए चंद्रनी पेरे शीतळ स्वभावी, सायरनी जेवा गंभीर, भारंड पंखीनी जेवा प्रमाद रहीत, अने कमळनी पेरे निर्लेप थवुं जोइए. यावत मेरु पर्वतनी पेरे निश्चळता धारीने सिंहनी जेम शूरवीर थइने वृषभनी पेरे निर्मळ धर्मनी धुरा मुनिजनोए अवश्य धारवी जोइए.

(१४०) मुमुक्षुजनोए कंचन अने कामर्नाने दूरथीज तजवां जोइए.

(१४१) मुमुक्षुजनोए राय अने रंकने सरखा लेखवा जोइए. तथा समभावथी तेमने धर्म उपदेश आपवो जोइए.

(१४२) मुमुक्षुजनोए नारीने नागणी समान लेखी तेणीनो संग सर्वथा तजवो जोइए. नारीना संगथी निश्चे कलंक चडे छे.

(१४३) मुमुक्षुजनोए समरस भावमां झीलतां थकां शास्त्र अवगाहन कर्या करवुं जोइए.

(१४४) मुमुक्षुजनोए अधिकारीनी हितशिक्षा हृदयमां धारीने स्व शक्तिने गोपव्या विना तेनुं यत्नथी पालन करवुं जोइए. कोइ

रीते अधिकारीनी हितशिक्षानो अनादर नज करवो जोइए.

(१४५) मुमुक्षु जनोए क्षुधादिकनो उदय थये छते गुर्वादिकनी संमती लइने निर्दोष आहार पाणीनी गवेषणा करी तेवो निर्दोष आहार प्रमुख मळे तो ते अदीनपणे लइने गुर्वादिकनी समीपे आवीने तेनी आलोचना करी गुर्वादिकनी रजाथी अन्य मुमुक्षु जननी यथायोग्य भक्ति करीने लोलुपता रहीत लावेलो आहार संयमना निर्वाह माटे वापरतां मनमां समभाव राखी तेने वखाण्या के वखोडयाविना पवित्र मोक्षना मार्गमां पुनः कटि बद्ध थइने विशेषे उद्यम करवो जोइए.

(१४६) मुमुक्षु जनोनी शास्त्र आज्ञा मुजब वर्त्तीने करवामां आवती माधुकरी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'सर्व संपत् करी' कहे छे.

(१४७) मुमुक्षु जनोनी शास्त्र आज्ञा विरुद्ध वर्त्तीने करवामां आवती भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'बलहरणी' कहीने बोलावे छे.

(१४८) केवळ अनाथ अशरण एवा आंधळां पांगळां विगेरे दीनजनोनी भिक्षाने ज्ञानी पुरुषो 'वृत्ति भिक्षा' कहीने बोलावे छे.

(१४९) मुमुक्षु जनोए शास्त्र विरुद्ध मार्गे वर्त्ततां थती 'बलहरणी' भिक्षाने सर्वथा तजीने शास्त्र विहित मार्गे वर्त्तीने 'सर्व संपत्करी' भिक्षानोज खप करवो युक्त छे.

(१५०) मुमुक्षु जनोए अकृत, अकारित अने असंकल्पितज आहार गवेषीने ग्रहण करवो जोइए. पोते नहि करेलो नहि करावेलो तेमज पोताने माटे खास संकल्पीने गृहस्थादिके नहि करेलो के करावेलोज आहार मुमुक्षु जनोने कल्पे छे. तेवो पण आहार गवेषणा करतां मळी शके छे.

(१५१) यति धर्म याने मुमुक्षु मार्ग अति दुष्कर कह्यो छे केमके तेमां एवा निर्दोष आहारथीज संयम निर्वाह करवानो कह्यो छे.

(१५२) गृहस्थ जनो पोताने माटे अथवा पोताना कुटुंबने माटे अन्न पानादिक नीपजावता होय तेमां एवो शुभ विचार करे के आपणे माटे करवामां आवता आ अन्न पाणीमांथी कदाच भाग्य योगे कोइ महात्मांना पात्रमां थोडुं पण अपाशे तो मोटो लाभ थशे. आवो शुभ विचार गृहस्थ जनोने हितकारीज छे.

(१५३) एवा शुभ चिंतन युक्त गृहस्थोए पोताने माटे के पोताना कुटुंबने माटे नीपजावेलां अन्न पाणी विगेरे मुमुक्षु मुनीने लेवामां बाधक नथी.

(१५४) निर्दोष आहार लावी विधिवत् ते वापरनार मुनि संयमनी शुद्धि करी शके छे. तेथी उलटी रीते वर्ततां संयमनी विराधना थाय छे.

(१५५) मुमुक्षुजनोए शब्द, रूप, रस, गंध अने स्पर्श संबंधी सर्व विषयआसक्तिथी सावधपणे दूर रहेवुं युक्त छे.

(१५६) मुमुक्षुजनोए विषय वासनानेज हठाववा यत्न करवो जोइए.

(१५७) मुमुक्षुजनोए गृहस्थोनो परिचय तजीने ब्रह्मचर्यनी खूब पुष्टि थाय तेम पवित्र ज्ञान ध्यायनो सतत अभ्यास करवो जोइए.

(१५८) मुमुक्षुजनोए स्त्री, पशु, पंडग विनानुं संयमने अनुकूळ स्थानज रहेवाने पसंद करवुं जोइए.

(१५९) मुमुक्षुजनोए कामविकार पेदा थाय एवी कोइ पण चेष्टा करवी न जोइए. स्त्री कथा, स्त्री शय्या, स्त्रीनां अंगोपांगनुं नीरीक्षण, स्त्री समीपे स्थिति, पूर्वे करेली कामक्रीडानुं स्मरण, स्निग्ध भोजन तथा प्रमाणातिरक्त भोजन, तथा शरीर विभूषादिक सर्वे तजवां जोइए.

(१६०) मुमुक्षुजनोए पूर्वे थयेला महा पुरुषोना पवित्र चारित्रने जाणीने तेमनुं वनतुं अनुकरण करवाने सदा सावधान रहेवुं जोइए.

(१६१) मुमुक्षुजनोए गमे तेवा संयोगोमां संयमथी चलायमान थवुं न जोइए. देव, मनुष्य के तिर्यंचे करेला सर्व अनुकूळ के प्रतिकूळ उपसर्ग परीषहोने अदीनपणे आत्म कल्याणार्थे सहन करवा जोइए.

(१६२) मुमुक्षुजनोए मार्गमां चालतां धुंसरा प्रमाण भुमीने आगळ जोतां कोइ पण न्हाना के मोटा जीवने जोखम न पहोंचे तेम करुणा नजरथी तपासीने चालवुं जोइए.

(१६३) मुमुक्षु जनोए जरुर पडतुं बोलता कोइने अप्रीति न उपजे एवुं हित मित मिष्ट अने सत्य धर्मने बाधक न थाय तेवुं भाषण करवुं जोइए.

(१६४) मुमुक्षु जनोए संयमना निर्वाह माटे जरुर पडये छते ४२ दोष रहीत आहार पाणी विगेरे गुर्वादिकनी संमतिथी लावीने विधिवत् वापरवां जोइए.

(१६५) मुमुक्षु जनोए कोइपण वस्तु लेतां या मूकतां कोइ पण जीवनी विराधना थइ न जाय तेम संभाळीने ते वस्तु लेवी मूकवी जोइए.

(१६६) मुमुक्षु जनोए लघुनीति वडीनीति विगेरे शरीरना सर्व मळनो त्याग निर्जीव स्थानमां जइने विधिवत् करवो जोइए.

(१६७) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे मनने गोपवीने धर्म ध्यानमां जोडवुं जोइए. जेम बने तेम तेने विविध विकल्प जालथी मुक्त राखवुं जोइए.

(१६८) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे तथाप्रकारना कारणविना मौनज धारण करी रहेवुंज जोइए. जरूर जणातां सत्य निर्दोषज भाषण करवुं जोइए.

(१६९) मुमुक्षुजनोए मुख्यपणे संयमार्थे जवा आववानी जरूर न होय तो कायाने काचवानी पेरे गोपवी राखवी जोइए स्थिर आसन करीने पवित्र ज्ञान ध्याननोज अभ्यास करवो जोइए.

(१७०) मुमुक्षुजनोए चालवानी, वेसवानी, उठवानी, सुवानी खावानी, पीवानी के वोलवानी जे जे क्रिया करवी पडे ते ते कोइ जीवने इजा न थाय तेमज संभाळथीज करवी जोइए.

(१७१) मुमुक्षुजनोए रसगृद्ध नहि थतां परिमितभोजी थवुं जोइए.

(१७२) मुमुक्षुजनोए संयम अनुष्ठानने समजपूर्वक प्रमाद रहित सेवीने अन्य मुमुक्षुजनोने यथाशक्ति संयममां सहायभूत थवुं जोइए. एक क्षण मात्र पण कल्याणार्थीए प्रमाद करवो न जोइए.

(१७३) प्रीय मनोहर अने स्वाधीन भोगने जे जाणी जोइने तजे छे. तेज खरो त्यागी कहेवाय छे.

(१७४) वस्त्र, गंध, माल्य अलंकार तथा स्त्री शय्यादिक नहि मळवा मात्रथी भोगवतो नथी. पण मनथी तो तेवा विषयमां सार मानीने मग्न रहे छे ते त्यागी कहेवाय नहीं.

(१७५) जो जळमां मच्छनी पद पंक्ति मालूम पडे के आकाशमां पंखीनी पद पंक्ति जणाय, तोज स्त्रीना गहन चरित्रनी समज पडी शके, तात्पर्य के स्त्रीना चरित्रनो पार पामवो अशक्य छे.

(१७६) प्रियालापथी कोइनी साथ वात करती कामनी कटाक्षवडे कोइ अन्यने सानमां समजावती होय तेम वळी हृदयथी तो कोइ बीजानुं ध्यान [चिंतवन] करती होय, एवी स्त्रीनी चंचळताने धिक्कार पडो. स्त्रीओ प्रायः कपटनीज पेटी होय छे.

(१७७) जो मन वैराग्यना रंगथी रंगायलुं न होय तो दान, शील, अने तप केवळ कष्टरुपज थाय छे. वैराग्य युक्त करेली सर्व धर्म करणी कल्याणकारी थाय छे. माटे जेम बने तेम वैराग्य भावनी वृद्धि करवी युक्त छे. ते विना अलुणा धान्यनी पेरे धर्म करणीमां ल्हेजत आवती नथी, वैराग्य योगे तेमां भारे मीठाश आवे छे.

(१७८) अभिनव अध्यात्मिक शास्त्रो वांचवाथी सहजे वैराग्यनी वृद्धि थाय छे.

(१७९) मैत्री, मुदिता, करुणा अने मध्यस्थ एवी चार भावनाओनुं संयमना कामीए अवश्य सेवन करवुं जोइए.

(१८०) जगतना सर्व जंतुओ आपणा मित्र छे, कोइ पण आपणा शत्रु नथी, ते सर्व सुखी थाओ, कोइ दुःखी न थाओ, सर्वे सुखना मार्गे चालो एवी मतिने मैत्रीभावना कहे छे.

(१८१) सद्गुणीना सद्गुणो जोइने चित्तमां राजी थवुं. जेम चंद्रने देखीने चकोर राजी थाय छे, अथवा मेघनो गर्जारव सांभळीने मोर राजी थाय छे; तेम गुणीने देखी प्रमुदित थवुं, अंतःकरणमां आनंदना उर्मीओ उठे तेनुं नाम मुदिता भावना कहेवाय छे.

(१८२) कोइ पण दुःखीने देखी दयार्द्र दीलथी शक्ति अनुसारे तेने सहाय करवी तेमज धर्म कार्यमां सीदाता साधर्मी भाइने योग्य आलंबन आपवुं तेनुं नाम करुणा भावना कहेवाय छे.

(१८३) जेने कोइपण प्रकारे हितोपदेश असर करी शके नहिं एवा अत्यंत कठोर मनवाळा जीव उपर पण द्वेष नहि करतां तेवाथी दूरज रहेवुं तेनुं नाम मध्यस्थ भावना कहेवाय छे.

(१८४) बीजी पण अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्व, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक स्वभाव, बोधि दुर्लभ अने स्व तत्वनुं चिंतनरुप द्वादश अनुप्रेक्षा,–भावना कही छे.

(१८५) भावनाभवनाशिनि अर्थात् आवी उत्तम भावनाथी भव संततिनो क्षय थइ जाय छे. अने शांतरसनी वृद्धिथी चित्तनी

शांति–प्रसन्नता थाय छे. माटे मोक्षार्थी जनोए अवश्य उक्त भावना-ओनो अभ्यास कर्या करवो युक्त छे.

(१८६) गमे तेटली कळा प्राप्त थाय, गमे तेवो आकरो तप तपाय, अथवा निर्मळ किर्त्ति प्रसरे परंतु अंतरमां विवेक कळा जो न प्रगटी तो ते सर्व निष्फळज छे. विवेक कळाथी ते सर्वनी सफळता छे.

(१८७) विवेक ए एक अभिनव सूर्य या अभिनव नेत्र छे. जेथी अंतरमां वस्तु तत्त्वनुं यथार्थ दर्शन थाय एवुं अजवाळुं थाय छे माटे बीजी बधी जंजाळ तजीने केवळ विवेककळा माटे उद्यम करवो युक्त छे.

(१८८) सत् समागम योगे हितोपदेश सांभळवाथी या तो आप्त प्रणीत शास्त्रना चिर परिचयथी विवेक प्रगटे छे.

(१८९) विवेकवडे सत्यासत्यनो निर्णय करी शकाय छे. ते विना हिताहित कृत्याकृत्य भक्ष्याभक्ष्य पेयापेय, उचितानुचित के गुणदोषनी खात्री थइ शकती नथी. विवेक वडेज असत् वस्तुनो त्याग करीने सद् वस्तुनो स्वीकार करी शकाय छे.

(१९०) जेम निर्मळ आरिसामां सामी वस्तुनुं बराबर प्रतिबिंब पडी रहे छे, तेम निर्मळ विवेकयुक्त हृदयमां वस्तुनुं यथार्थ भान थाय छे. जेम सूक्ष्म दर्शक यंत्रथी सुक्ष्म वस्तु सहेलाइथी देखी श-

काय छे. तेम विवेकना अधिकाधिक अभ्यासथी सुक्ष्ममां सुक्ष्मने दुरमां दुर रहेला पदार्थनुं यथार्थ भान थइ शके छे माटेज ज्ञानी पुरुषो विवेक रहीतने पशु माने छे.

(१९१) विवेकी पुरुष आ मनुष्य भवना क्षणने पण लाखेणो (लक्ष मुल्य अथवा अमुल्यं) लेखे छे.

(१९२) जेम राजहंस पक्षी क्षीर नीरने जुदां करीने क्षीर मात्र ग्रहे छे. तेम विवेकी पुरुष दोष मात्रने तजी गुण मात्रने ग्रहण करेछे.

(१९३) मननी क्षुद्रता (पारकां छिद्र जोवानी बुद्धि) मटवाथीज गुण ग्राहकता आवे छे. गुण गुणिनो योग्य आदरसत्कार करवारुप विनयगुणथी गुण ग्राहकता वधती जाय छे.

(१९४) विनय सर्व गुणोनुं वशीकरण छे. भक्ति या बाह्यसेवा, हृदय प्रेम या बहुमान सद्गुणनी स्तुति अवगुणने ढांकवा अने अवज्ञा, आशातना, हेलना, निंदा, के खिंसाथी दूर रहेवुं एवा विनयना मुख्य पांच प्रकार छे.

(१९५) जेम अणधोयेला मेला वस्त्र उपर मेल चडी शकतो नथी. अथवा विषम भुमिमां चित्र उठी शकतुं नथी. तेम विनयादि गुण हिनने सत्य धर्मनी प्राप्ती थइ शकती नथी.

(१९६) विनयादि सद्गुण संपन्नने सहेजे धर्मनी प्राप्ती थइ शके छे.

(१९७) विनयादि शून्यने विद्यादिक उलटी अनर्थकारी थाय छे. माटे प्रथम विनयादिकनोज अभ्यास करवो योग्य छे.

(१९८) धर्मनी योग्यता—पात्रता प्राप्त करवी ए प्रथम अवश्यनुं छे. तृण थकी गायने दुध थाय छे अने दुध थकी सर्पने झेर थाय छे. ए उपरथीज पात्रापात्रनो विवेक धारवो प्रगट समजाय छे.

(१९९) धर्मनी योग्यता मेळववा माटे नीचेना २१ गुणोनो खूब अभ्यास करवो खास जरुरनो छे.

१ अक्षुद्रता—गंभीरता—गुण ग्राहकता. २ सोम्यता—प्रसन्नता. ३ निरोगता—अंग सौष्टव—सुंदराकृति. ४ जनप्रिय—लोकप्रिय. ५ अक्रुरता—मननी कोमळता—नरमाश. ६ भीरुता पाप या अपवादथी बीवापणुं. ७ अशठता—निष्कपटीपणुं—सरलता. ८ दाक्षिण्यता मोटानी अनुज्ञा पाळवी ते. ९ लज्जालुता—मर्यादा शीलपणुं—माजा. १० दयाळुता—करुणा. ११ समदृष्टि—मध्यस्थता—निष्पक्षपातपणुं. १२ गुण रागीपणुं. १३ सत्यवादीपणुं—सत्यप्रियता. १४ सुपक्ष—धर्मीकुटुंब होवापणुं. १५ दीर्घ दर्शिता—लांबी नजर पहोंचाडवापणुं. १६ विशेषज्ञता—लांबी समज. १७ वृद्धानुसारीपणुं शिष्टानुसारिता. १८ विनीतता—नम्रता. १९ कृतज्ञता—कर्या गुणनुं जाणपणुं. २० परोप-

कारता—परहितै षिता. २१ लब्धलक्षता—कार्यदक्षता—सुनिपुणता, कळाकौशल्य.

(२००) पुर्वोक्त गुणना अभ्यास रहित योग्यता विनाज धर्मनी प्राप्ती थवी वंध्यापुत्र अथवा शशशृंगनी पेरे अशक्य छे.

(२०१) योग्य जीवने पण सत्य धर्मनी प्राप्ति वहुधा श्रमण निर्ग्रंथद्वारा हितोपदेश सांभळवाथीज थाय छे. माटे योग्य जीवोने पण सत् समागमनी खास अपेक्षा रहेछेज.

(२०२) हजारो ग्रंथ वांचवाथी सार न मळे एवो सरस सार क्षण मात्रमां सत्समागमथी भाग्य योगे मळी शके छे.

(२०३) दुर्जनो छते योगे तेवा लाभथी कमनशीबज रहेछे.

(२०४) सज्जनोने तो दुर्जनोनी हैयातीथी अभिनव जागृति रहे छे.

(२०५) दुर्जनो सज्जनोना निष्कारण शत्रु छे. पण सज्जनो तो समस्त जगतना निष्कारण मित्र छे.

(२०६) दुर्जनोने द्विजीह्व सर्प जेवा कह्या छे ते यथार्थज छे. केमके ते एकांत हितकारी सज्जनने पण काटे छे.

(२०७) सज्जनो तो एवा खारीला—झेरीला दुर्जनोने पण दुहवा इच्छता नथी एज तेमनु उदार आशयपणुं सूचवे छे.

(२०८) कागडाने के कोयलाने गमे तेटलो धोयो होय तोपण ते तेनी काळाश तजेज नहि तेम दुर्जनने पण गमे तेटलुं ज्ञान आपो पण ते कदापि कुटिलता तजवानो नहि.

(२०९) सज्जनने तो गमे तेटलुं संतापशो तोपण ते तेमनी सज्जनता कदापि तजशेज नहि.

(२१०) सज्जनज सत्य धर्मने लायक छे. माटे बीजी धमाल तजी दइने केवल सज्जनताज आदरवा प्रयत्न करो.

(२११) वीतराग समान कोइ मोक्षदाता देव नथी.

(२१२) निर्ग्रंथ साधु समान कोइ सन्मार्ग दर्शक साथी नथी.

(२१३) शुद्ध अहिंसा समान कोइ भवदुःखवारक औषध नथी.

(२१४) आत्माना सहज गुणोनो लोप करे एवा रागद्वेष अने मोहादिक दोषोने सेववा समान कोइ प्रबळ हिंसा नथी.

(२१५) आत्माना ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्गुणोने साचवी राखवा अथवा ते सहज गुणोनुं संरक्षण करवुं तेना समान कोइ शुद्ध अहिंसा नथी.

(२१६) आत्म हिंसा तज्या विना कदापि आत्म दया पाळी शकवाना नथी. रागद्वेष अने मोह–ममतादिक दुष्ट दोषोने तजीने

सहज–आत्म गुणमां मग्न रहेवुं एज खरी आत्म दया छे. वीजी औपचारिक जीवदया पाळवानो पण परमार्थ रागादि दुष्ट दोषोने आवता वारवानो अने ज्ञान दर्शन अने चारित्रादिक सद्‌गुणोने पोषवानोज छे.

(२२७) सत्यादिक महाव्रतो पाळवानो पण एज महान् उद्देश छे. यावत् सकळ क्रियानुष्ठाननो उंडो हेतु शुद्ध अहिंसा व्रतनी दृढता करवानोज छे.

(२२८) एवी शुद्ध समज दीलमां धारी संयमक्रियामां सावधान रहेनारा योगीश्वरो अवश्य आत्महित साधी शके छे.

(२२९) एवी शुद्ध समज दीलमां धार्या विना केवळ अंधश्रद्धाथी क्रियाकांडने करनारा साधुओ शीघ्र स्वहित साधी शकता नथी.

(२३०) शुद्ध समजवाळा ज्ञानी पुरुषोनो पूर्ण श्रद्धाथी आश्रय लही संयम पाळनारा प्रमाद रहित साधुओ पण अवश्य आत्महित साधी शके छे. केमके तेमना नियामक (नियंता–नायक) श्रेष्ठ छे.

(२३१) सुविहित साधुजनो मोक्षमार्गना खरा सारथी छे एवी शुद्ध श्रद्धाथी मोक्षार्थी भव्य जनोए, तेमनुं दृढ आलंबन करवुं अने तेमनी लगारे पण अवज्ञा करवी नहि.

(२३२) ग्रहण करेलां व्रत या महाव्रतने अखंड पाळनार समान कोइ भाग्यशाळी नथी, तेनुंज जीवित सफळ छे.

(२३३) ग्रहण करेलां व्रत के महाव्रतने खंडीने जे जीवे छे तेनी समान कोइ मंदभाग्य नथी. केमके तेवा जीवित करतां तो ग्रहण करेला व्रत के महाव्रतने अखंड राखीने मरवुंज सारुं छे.

(२३४) जेने हितकारी वचनो कहेवामां आवतां छतां बिलकुल काने धारतो नथी अने नहिं सांभळ्या जेवुं करे छे तेने छते काने बहेरोज लेखवो युक्त छे. केमके ते श्रोत्रने सफळ करी शकतो नथी.

(२३५) जे जाणी जोइने खरो रस्तो तजीने खोटे मार्गे चाले छे, ते छती आंखे आंधळो छे एम समजवुं.

(२३६) जे अवसर उचित प्रिय वचन बोली सामानुं समाधान करतो नथी ते छते मुखे मूंगो छे, एम शाणा माणसे समजवुं.

(२३७) मोक्षार्थी जनोए प्रथमपदे आदरवा योग्य सद्गुरुनुं वचनज छे.

(२३८) जन्म मरणना दुःखनो अंत थाय एवो उपाय विचक्षण पुरुषे शीघ्र करवो युक्त छे केमके ते विना कदापि तत्त्वथी शांति थती नथी.

(२३९) तत्त्वज्ञान पूर्वक संयमानुष्ठान सेववाथीज भवनो अंत थाय छे.

(२४०) परभव जतां संवल मात्र धर्मनुंज छे माटे तेनो विशेष खप करवो ते विनाज जीव दुःखनी परंपराने पामे छे.

(२४१) जेनुं मन शुद्ध-निर्मळ छे तेज खरो पवित्र छे एम ज्ञानीयो माने छे.

(२४२) जेना अंतर-घटमां विवेक प्रगट्यो छे, तेज खरो पंडित छे एम मानवुं.

(२४३) सद्गुरुनी सुखकारी सेवाने बदले अवज्ञा करवी एज खरुं विष छे.

(२४४) सदा स्वपरहित साधवा उजमाल रहेवुं एज मनुष्य जन्मनुं खरुं फल छे.

(२४५) जीवने बेभान करी देनार स्नेह रागज खरी मदिरा छे एम समजवुं.

(२४६) धोळे दहाडे धाड पाडीने धर्मधनने लूंटनारा विषयोज खरा चोर छे.

(२४७) जन्म मरणनां अत्यंत कटुक फळने देनारी तृष्णाज खरी भववेली छे.

(२४८) अनेक प्रकारनी आपत्तिने आपनार प्रमाद समान कोइ शत्रु नथी.

(२४९) मरण समान कोइ भय नथी अने तेथी मुक्त करनार वैराग्य समान कोइ मीत्र नथी, विषयवासना जेथी नाबुद थाय तेज खरो वैराग्य जाणवो.

(२५०) विषयलंपट—कामांधसमान कोइ अंध नथी केमके ते विवेक शून्य होय छे.

(२५१) स्त्रीना नेत्र कटाक्षथी जे न डगे तेज खरो शूरवीर छे.

(२५२) संत पुरुषोना सदुपदेश समान बीजुं अमृत नथी. केमके तेथी भव ताप उपशांत थवाथी जन्म मरणनां अनंत दुःखोनो अंत आवे छे.

(२५३) दीनतानो त्याग करवा समान बीजो गुरुतानो सीधो रस्तो नथी.

(२५४) स्त्रीनां गहन चरित्रथी न छेतराय तेना जेवो कोइ चतुर नथी.

(२५५) असंतोषी समान कोइ दुःखी नथी केमके ते मंमण शेठनी जेवो दुःखी रहे छे.

(२५६) पारकी याचना करवा उपरांत कोइ मोटुं लघुतानुं कारण नथी.

(२५७) निर्दोष-निष्पाप वृत्तिसमान बीजुं सारुं जीवितनुं फळ नथी.

(२५८) बुद्धिबळ छतां विद्याभ्यास नहि करवा समान बीजी कोइ जडता नथी.

(२५९) विवेकसमान जागृति अने मूढतासमान निद्रा नथी.

(२६०) चंद्रनी पेरे भव्य लोकने खरी शीतळता करनार आ कलिकाळमां फक्त सज्जनोज छे.

(२६१) परवशता नर्कनी पेरे प्राणीओने पीडाकारी छे.

(२६२) संयम या निवृत्तिसमान कोइ सुख नथी.

(२६३) जेथी आत्माने हित थाय तेवुंज वचन वदवुं ते सत्य छे पण जेथी एलटुं अहित थाय एवुं वचन विचार्या विना वदवुं ते सत्य होय तो पण असत्यज समजवुं. आथीज अंधने पण अंध कहेवानो शास्त्रमां निषेध करेलो छे.

अध्यात्म-गीता.

प्रणमीये विश्व हित[1] जैनवाणी, महानंद तरु सींचवा अमृत पाणी;
महा मोहपुर भेदवा वज्र पाणि[2], गहन भवफंद छेदन कृपाणि[3]. १

द्रव्य अनंत प्रकासक भासक तत्त्व स्वरुप,
आतम तत्त्व विबोधक सोधक सत् चिद् रुप;
नय निक्षेप प्रमाणे जाणे वस्तु समस्त,
त्रिकरण जोगे प्रणमुं जैनागम सुप्रशस्त[4]. २

जेणे आतमा शुद्धताए पिछाण्यो, तेणे लोक अलोकनो भाव जाण्यो;
आत्मा रमणी मुनि जगविदिता, उपदिशी तेणे अध्यात्म गीता. ३

द्रव्य सर्वना भावनो जाणग पासग एह,
ज्ञाता कर्ता भोक्ता रमता परिणति गेह;
ग्राहक रक्षक व्यापक धारक धर्म समूह,
दान लाभ भोग उपभोग तणो जे व्यूह. ४

संग्रहे एक आया वखाण्यो, नैगमे अंशथी जे प्रमाण्यो;
द्विविध व्यवहार नय वस्तु वहेंचे, अशुद्ध वळी शुद्ध भासन प्रपंचे. ५

१ सर्वने हितकारी. २ इंद्र. ३ तलवार. ४ अति सुंदर.

अशुद्धपणे पणसय तेसठी[१] भेद प्रमाण,
उदय विभेदे द्रव्यना भेद अनंत कहाण;
शुद्धपणे चेतनता प्रगटे जीव विभिन्न,
क्षयोपशमिक असंख्य क्षायक एक अनुन्न[२]. ६

नामथी जीव चेतन प्रबुद्ध, क्षेत्रथी असंख्य देशी विशुद्ध;
द्रव्यथी स्वगुण पर्याय पिंड, नित्य एकत्व सहज अखंड. ७

उज्जुसुए[३] विकल्प परिणामे[४] जीव स्वभाव,
वर्तमान परिणत मय व्यक्त ग्राहक भाव;
शब्दनये निज सत्ता जोतो इहतो[५] धर्म,
शुद्ध अरुपी चेतन अणग्रहतो नव[६] कर्म. ८

इणी पेरे शुद्ध सिद्धात्मरुपी, मुक्त परशक्ति व्यक्त अरुपी;
[illegible] धरे साध्य रुपे सदा तत्त्व प्रीति. ९

समभिरुढ नये निरावरणी ज्ञानादिक गुण मुख्य,
क्षायक अनंत चतुष्टयी[७] भोगी मुग्ध अलक्ष्य;
एवंभूति निर्मळ सकळ स्वधर्म प्रकास,
पूरण पर्याय प्रगटे पूरण शक्ति विलास. १०

---

१ पांचसो अने त्रेसठ. २ संपूर्ण. ३ रुजुसूत्र नये. ४ अनुसारे ५ अभिलषतो, इच्छतो. ६ नवां. ७ अनंतज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्य.

एम नय भंग संगे सनूरो, साधना सिद्धता रुप पूरो;
साधक भाव त्यां लगें अधूरो, साध्य सिद्धे नहि हेतु सूरो. ११

काळ अनादि अतीत अनंते जे पर रक्त,
संगांगी परिणामे वर्ते मोहासक्त;
पुद्गल भोगे रीझ्यो धारे पुद्गळ खंध,
पर कर्ता परिणामे बांधे कर्मनो बंध. १२

बंधक वीर्य करणे उदीरे, विपाकी प्रकृति भोगवे दळ विखेरे;
कर्म उदयागता स्वगुण रोके[1], गुण विना जीव भवोभवे ढोके.[2] १३

आतमगुण आवरणे न ग्रहे आतम धर्म,
ग्राहक शक्ति प्रयोगे जोडे पुद्गळ शर्म;[3]
परलाभे परभोगने योगे थाये पर कीरतार,
ए अनादि प्रवर्ते वाधे पर विस्तार. १४

एम उपयोग वीर्यादि लब्धि, परभाव रंगी करे कर्म वृद्धि;
परदयादिक यदा सुह विकल्पे, तदा पुण्य कर्म तणो बंध कल्पे. १५

तेहज हिंसादिक द्रव्याश्रव करतो चंचळ चित्त,
कटुक विपाके चेतन मेळे,[4] कर्म विचित्त;[5]

१ अटकावे. २ रखडे. ३ सुख. ४ एकठा करे, संचे.
५ विचित्र.

आतम गुणने हणतो हिंसक भावे थाय,
आतमधर्म[1] नो रक्षक भाव अहिंस कहाय. १६

आत्मगुण रक्षणा तेह धर्म, स्वगुण विध्वंसणा ते अधर्म;
भाव अध्यात्म प्रवृत्ति, तेहथी होय संसार छित्ति[2] १७

एह प्रबोधनो कारण तारण सद्गुरु संग,
श्रुत उपयोगी चरणानंदी करी गुरु रंग;
आतम तत्त्वालंबी रमता आतम राम,
शुद्ध स्वरुपने भोगे योगे जसु[3] विसराम. १८

सद्गुरु योगथी वहुला जीव, कोइ वळी सहजथी थइ सजीव;
आत्म शक्ति करी गंठी[4] भेदी, भेदज्ञानी थयो आत्मवेदी. १९

द्रव्य गुण पर्याय अनंतनी थइ परतीत,
जाण्यो आतम कर्ता भोक्ता गइ परभीत;
श्रद्धायोगे उपन्यो भासन सुनये सत्य,
साध्यालंबी चेतना वळगी आतम तत्त्व. २०

इंद्र चंद्रादि पदवी रोग जाण्यो, शुद्ध निज शुद्धता धन पिछाण्यो;
आतमधन अन्य आपे न चोरे, कोण जग दीन वळी कोण जोरे. २१

---

१ ज्ञानादिक आत्मगुण. २ छेद. ३ जेने. ४ मोहग्रंथि–रागद्वेषनी गांठ.

आतम सर्व समान निधान महा सुखकंद,
सिद्धतणा साधर्म ! सत्ताए गुण वृंद;
जेहस्वजाति तेहथी कोण करे वध बंध,
प्रगटयो भाव अहिंसक जाणे शुद्ध प्रबंध. २२

ज्ञाननी तीक्ष्णता चरण तेह, ज्ञान एकत्वता ध्यान गेह;
आत्म तादात्म्यता[१] पूर्ण भावे, तदा निर्मळानंद संपूर्ण पावे. २३

चेतन अस्ति स्वभावमां जेहने भासे भाव,
तेहथी भिन्न अरोचक रोचक आत्म स्वभाव;
समकित भावे भावे आतम शक्ति अनंत,
कर्म नासनो चिंतन नाणे चिंते ते मतिमंत. २४

स्वगुण चिंतन रसे बुद्धि घाले, आत्म सत्ता भणी जे निहाळे;
शुद्ध स्याद्वादपद जे संभाळे[२], परघरे[३] तेह मति केम वाळे. २५

पुन्य पाप बे पुद्गळ दळ भासे परभाव,
परभावे परसंगत पामे दुष्ट विभाव;
ते माटे निज भोगी योगीरस सुप्रसन्न,
देव नरक तृण मणि सम[४] भासे जेहने मन्न. २६

---

१ तन्मयता, अभेदता—एकता. २ बराबर काळजीथी (वीतरागनी आज्ञाने) पाळे. ३ नकामी वस्तुमां. ४ न्यूनाधिकता रहित.

तेह समता रस तत्त्व साधे, निश्चलानंद अनुभव आराधे;
तीव्र घनघाति[1] निज कर्म तोडे, संधि[2] पडिलेहिने[3] ते विछोडे. २७

सम्यग् रत्नत्रयी रस साचो चेतन राय,
ज्ञानक्रिया चक्रे चकचूरे सर्व अपाय,[4]
कारक[5] चक्र स्वभावे साधे पूरण साध्य,
कर्ता कारण कारज एक थया निरबाध. २८

स्वगुण आयुध थकी कर्म चूरे, असंख्यात गुण निर्जरा तेह पूरे;
टळे आवरणथी गुण विकासे, साधना शक्ति तेम तेम प्रकासे. २९

प्रगट्यो आतम धर्म थया सवि साधन रीत,
बाधकभाव ग्रहणता भागी जागी नीत;
उदय उदीरण ते पण पूरण निर्जरा काज,
अनभिसंधि बंधकता नीरसता[6] आतमराज. ३०

देशपति जब थयो नित्य रंगी, तदा कोण थाय कुनय चाल संगी;
यदा आतमा आत्मभावे रमाव्यो, तदा बाधक भाव दुरे गमाव्यो. ३१

---

१ ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी अने अंतराय कर्म. २ लाग. ३ जोइने. ४ विघ्न. ५ कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, अने अधिकरणरुप षट्. ६ अनाउपयोगे बंधाता कर्मनी ओछाश.

सहज क्षमा गुण शक्तिथी छेद्यो क्रोध सुभट,
मार्दव[1] भाव प्रभावथी भेद्यो मान मरद;
माया आर्जव[2] योगे लोभ ते निःस्पृह भाव,
मोह महाभड[3] ध्वंसे ध्वंस्यो[4] सर्व विभाव. ३२

एम स्वभाविक थयो आत्म वीर, भोगवे आत्म संपदा सुधीर;
जे उदयागता प्रकृति वळगी, अव्यापक थयो खेरवे तेह अळगी. ३३

धर्म ध्यान एक तानमे ध्यावे अरिहा सिद्ध,
ते परिणतिथी प्रगटी तात्त्विक सहज समृद्ध;[5]
स्व स्वरुप एकत्वे तन्मय गुण पर्याय,
ध्याने ध्याता निरमोहीने विकलप जाय. ३४

यदा निर्विकल्पी थयो शुद्ध ब्रह्म, तदा अनुभवे शुद्ध आनंद शर्म;
भेद रत्नत्रयी तीक्ष्णताए, अभेद रत्नत्रयी में समाए. ३५

दर्शन ज्ञान चरण गुण सम्यग् एक एकना हेतु,
स्व स्व हेतु थया समकाले तेह अभेद भाषेतु;
पूर्ण स्वजाति समाधि घनघाति दल छिन्न,
क्षायिक भावे प्रगटे आतम धर्म विभिन्न. ३६

---

१ नम्रता, लघुता-विनय. २ सरळता. ३ सुभट-वीर. ४ विनाश्यो. ५ समृद्धि-अनर्गल धन.

पछी योग[1] रुंधी थयो ते अयोगी, भाव शैले सिताए[2] अभंगी;
पंच लघु अक्षरे कार्यकारी, भवोपग्रही[3] कर्म संतति विदारी. ३७

समश्रेणे एक समये पहोत्या जे लोकांत,
अफुसमाण[4] गति निर्मळ चेतन भाव महांत;
चरम त्रिभाग विहीन[5] प्रमाणे जसु अवगाह,
आतम भेद अरूप अखंडा नंदावाह. ३८

जीहां एक सिद्धात्म तिहां छे अनंता, अवन्ना अगंधा नहि फासमंता;[6]
आतमगुण पूर्णतावंत संता, निरावाध अत्यंत सुखास्वाद वंता. ३९

कर्ता कारण कारज निज परिणामिक भाव,
ज्ञाता ज्ञायक भोग्य भोग्यता शुद्ध स्वभाव;
ग्राहक रक्षक व्यापक तन्मयताए लीन,
पूरण आतम धर्म प्रकास रसें लयलीन. ४०

द्रव्यथी जीव चेतन अलेशी, क्षेत्रथी जे असंख्य प्रदेशी;
उत्पाद वळी नास ध्रुव काळधर्म, शुद्ध उपयोग गुण भाव शर्म. ४१

स्याद्वाद आतम सत्ता रुचि समकित तेह,
आतम धर्मनो भासन निर्मळ ज्ञानी जेह;

१ मन, वचन अने काया. २ मेरुपर्वतनी जेवी निश्चळता, शैलेशीकरण. ३ अघाति. ४ अस्पर्शमान. ५ ३. ६ वर्ण गंध अने स्पर्शरहित, अरूपी शुद्ध सहज स्वरूपी.

आतम रमणी चरणी ध्यानी आतम लीन,
आतम धर्म रमो तेणे[1] भव्य सदा सुख पीन.[2] ४२

अहो भव्य तमे ओळखो जैन धर्म, जेणे पामीये शुद्ध अध्यात्ममर्म;
अल्पकाळे टळे दुष्ट कर्म, पामीये सोय आनंद शर्म. ४३

नय निक्षेप प्रमाणे जाणे जीवा जीव,
स्व पर विवेचन करतां थाये लाभ सदैव;
निश्चयने व्यवहारे विचरे जे मुनिराज,
भवसागरना तारण निर्भय तेह ज्हाज. ४४

वस्तु–तत्त्वे रम्या ते निर्ग्रंथ, तत्त्व अभ्यास तिहां साधु पंथ;
तीणे गीतार्थ चरणे रहीजे, शुद्ध सिद्धान्त रस तो लहीजे. ४५

श्रुत अभ्यासी चोमासी वासी लींमडी ठाम,
शासन रागी सोभागी श्रावकनां बहु धाम;
खरतर गछ पाठक श्री दीपचंद सु पसाय,
देवचंद्र निज हरखे गायो आतम राय. ४६

आत्म रमण करवा अभ्यासे, शुद्ध सत्ता रसीने उल्लासे;
देवचंद्रे रची आत्म गीता, आत्म रमणी मुनि सुप्रतीता.[3] ४७

इति अध्यात्म गीता.

---

१ ते माटे. २ पुष्ट. ३ सुप्रसिद्ध.

क्षमा छत्रीशी.

आदर जीव क्षमा गुण आदर, म करीश रागने द्वेषजी;
समताये शीवसुख पामीजे, क्रोधे कुगति विशेषजी. आ० १
समता संजम सार सुणीजे, कल्पसूत्रनी शाखजी;
क्रोध पूर्व क्रोडि चारित्र वाळे, भगवंत एणीपेरे भाखजी. आ० २
कुण कोण जीव तर्या उपशमथी, सांभळ तुं दृष्टांतजी;
कुण कोण जीव भम्या भवमांहे, क्रोध तणे विरतंतजी. आ० ३
सोमल ससरे शीश प्रजाळ्यो, बांधी माटीनी पाळजी;
गज सुकमाळ क्षमा मन धरतो, मुक्ति गयो ततकाळजी. आ० ४
कुळ वाळुओ साधु कहातो, कीधो क्रोध अपारजी;
कोणिकनी गणिका वश पडियो, रडवडियो संसारजी. आ० ५
सोवनकार करी अति वेदन, वाघ्रसुं वींटयुं शीशजी;
मेतारज मुनि मुगति पहोत्यो, उपशम एह जगीशजी. आ० ६
कुरुड अकुरुड बे साधु कहाता, रह्या कुणाला खाळजी;
क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, जनम गमायो आळजी. आ० ७
कर्म खपावी मुगते पहोता, खंधक सूरिना शिष्यजी;
पालक पापीये घाणी पील्या, नाणी मनमां रीशजी. आ० ८
अच्छंकारी नारि अछंकी, तोडयो पियुशुं नेहजी;
बब्बर कुळ सह्यां दुःख बहोळां, क्रोध तणां फळ एहजी. आ० ९

वाघणे सर्व शरीर वलूर्युं, तत्क्षण छोडयां प्राणजी;
साधु सुकोशळ शिवसुख पाम्या, एह क्षमागुण जाणजी. आ० १०
कुण चंडाळ कहिजे विहुमें, निरती नहि कहे देवजी;
रुषी चंडाळ कहीजे वढतो, टाळे वेढनी टेवजी. आ० ११
सातमी नरके गयो ते ब्रह्मदत्त, काढी ब्राह्मण आंखजी;
क्रोध तणां फळ कडवां जाणी, रागद्वेष द्यो नांखजी. आ० १२
खंधक रुषीनी खाल उतारी, सह्यो परीसह जेणजी;
गरभावासना दुःखथी छुटयो, सबळ क्षमागुण तेणजी. आ० १३
क्रोध करी खंधक आचारज, हुओ अग्नि कुमारजी;
दंडक नृपनो देश प्रजाळ्यो, भमशे भवह मझारजी. आ० १४
चंडरुद्र आचारज चळतां, मस्तक दीध प्रहारजी;
क्षमा करंतां केवळ पाम्यो, नव दिक्षीत अणगारजी. आ० १५
पांचवार रुषीने संताप्यो, आणी मनमां द्वेषजी;
पंचभव सीमद्ह्यो नंदनादिक, क्रोधतणां फळ देखजी. आ० १६
सागरचंदनुं शीश प्रजाळी, निशि नभसेन नरिंदजी;
समता भाव धरी सुरलोके, पुहुतो परमानंदजी. आ० १७
चंदना गुरुणीयें घणुं निभ्रंछी, धिग् धिग् तुज आचारजी;
मृगावंती केवळ सिरि पामी, एह क्षमा अधिकारजी. आ० १८
सांब प्रद्युम्न कुमारे संताप्यो, कृष्ण द्वैपायन साहजी;
क्रोध करी तपनुं फळ हार्यो, कीधो द्वारिका दाहजी. आ० १९

भरतने मारण मूठि उपाडी, बाहुबळ बळवंतजी;
उपशम रस मनमांहिं आणी, संजम ले मतिमंतजी. आ० २०
काउसगमां चडियो अति क्रोधे, प्रसंनचंद्र रुषिरायजी;
सातमी नरकतणां दल मेळ्यां, कडुआ तेणें कषायजी. आ० २१
आहारमांहे क्रोधे रुषि थूंक्यो, आण्यो अमृत भावजी;
कूरगडुए केवळ पाम्युं, क्षमातणें परभावजी. आ० २२
पार्श्वनाथने उपसर्ग कीधा, कमठ भवांतर धीठजी;
नरक तिर्यंचतणां दुःख लाधां, क्रोधतणां फळ दीठजी आ० २३
क्षमावंत दमदंत मुनिश्वर, वनमां रह्यो काउस्सग्गजी;
कौरव कटक हण्यो इंटाळे, त्रोडया कर्मना वर्गजी. आ० २४
सज्या पाळक काने तरुओ, नाम्यो क्रोध उदीरजी;
बिहुं काने खीला ठोकाणा, नवि छूटा महावीरजी. आ० २५
चार हत्यानो कारक हुंतो, दृढ प्रहारि अतिरेकजी;
क्षमा करीने मुक्ति पहोत्यो, उपसर्ग सह्या अनेकजी. आ० २६
पोहोरमांहे उपजंतो हार्यो, क्रोधें केवळ नाणजी;
देखो श्रीदमसार मुनीश्वर, सूत्र गुण्यो उट्ठाणजी. आ० २७
सिंह गुफावासी रुषि कीधो, थूलिभद्र उपर कोपजी;
वेश्या वचनें गयो नेपाळे, कीधो संजम लोपजी. आ० २८
चंद्रावतंसक काउसग रहियो, क्षमातणो भंडारजी;
दासी तेल भर्यो निशि दीवो, सुर पदवी लही सारजी. आ० २९

एम अनेक तर्या त्रिभुवनमे, क्षमा गुणें भवि जीवजी;
क्रोध करी कुगते ते पहोत्या, पाडंता मुख रीवजी. आ० ३०
विष हलाहल कहीये विरुओ, ते मारे एकवारजी;
पण कषाय अनंती वेळा, आपे मरण अपारजी. आ० ३१
क्रोध करंता तप जप कीधां, न पडे कांइ ठामजी;
आप तपे परने संतापे, क्रोध शुं केहो कामजी. आ० ३२
क्षमा करंतां खरच न लागे, भांगे क्रोड कलेशजी;
अरिहंत देव आराधक थावे, व्यापे सुयश प्रदेशजी आ० ३३
नगरमांहे नागोर नगीनो, ज्यां जिनवर प्रासादजी;
श्रावक लोक वसे अति सुखीया, धर्मतणे प्रसादजी. आ० ३४
क्षमा छत्रीशी खांते कीधी, आतम पर उपकारजी;
सांभळतां श्रावक पण समज्या, उपशम धर्यो अपारजी. आ० ३५
जुग प्रधान जिणचंद सुरिश्वर, सकळचंद तसु शिष्यजी;
समय सुंदर तसु शिष्य भणे एम, चतुर्विध संघ जगीसजी. आ० ३६

इति क्षमा छत्रीशी संपूर्ण.

यति धर्म बत्रिशी.

दोहा.

भाव यति तेने कहो, ज्यां दशविध यति धर्म;
कपट क्रियामां मालहता, महीयां बांधे कर्म. १

लोकिक लोकोत्तर क्षमा, दुविध कही भगवंत;
तेहमां लोकोत्तर क्षमा, प्रथम धर्म छे तंत. २

वचन धर्म नामे कह्यो, तेहना पण बहु भेद;
आगम वयणे जे क्षमा, तेह प्रथम अपखेद. ३

धर्म क्षमा निज सहजथी, चंदन गंध प्रकार;
निरतिचार ते जाणीये, प्रथम सूक्ष्म अतिचार. ४

उपकारे अपकारथी, लौकिक वळी विवाग;
बहु अतिचार भरी क्षमा, नहि संयमने लाग. ५

बार कषाये क्षय करी, जे मुनि धर्म लहाय;
वचन धर्म नामे क्षमा, जे बहु तिहां कहाय. ६

मद्दव अज्जव मुत्ति तव, पंच भेद एम जाण;
त्यां पण भाव नियंठने, चरम भेद प्रमाण. ७

इह लोकादिक कामना, विण अणसण मुख जोग;
शुद्ध निर्जरा फळ कह्यो, तप शिवसुख संयोग. ८

आश्रव द्वारने रुंधिये, इंद्रिय दंड कषाय;
सत्तर भेद संयम कह्यो, एहिज मोक्ष उपाय. ९

सत्य सूत्र अविरुद्ध जे, वचन विवेक विशुद्ध;
आलोयण जळ शुद्धता, शौच धर्म अविरुद्ध. १०

खग उपाय मनमे धरे, धर्मोपगरण जेह;
वरजित उपधि न आदरे, भाव अकिंचन तेह. ११

शील विषय मन वृत्ति जे, ब्रह्म तेह सुपवित्त;
होय अनुत्तर देवने, विषय त्यागनो चित्त. १२

ए दसविध यति धर्म जे, आराधे नित्य मेव;
मूळ उत्तर गुण यतनथी, तेहनी कीजे सेव. १३
अंतर जतना विण किश्यो, बाह्य क्रियानो लाग;
केवळ कंचुकि परिहरे, निर्विष हुए न नाग. १४
दोषरहित आहार ल्ये, मनमां गारव राखि;
ते केवळ आजीविका, सूयगडांगनी साखि. १५
नाम धरावे चरणनुं, विगर चरण गुण खाण;
पाप श्रमण ते जाणीये, उत्तराध्ययन प्रमाण. १६
शुद्ध क्रिया न करी शके, तो तुं शुद्धि भाष;
शुद्ध प्ररुपक होइ करी, जिनशासन स्थिति राख. १७
उसन्नो पण करम रज, टाळे पाळे बोध;
चरण करण अनुमोदता, गच्छाचारे सोध. १८
हीणो पण ज्ञाने अधिक, सुंदर सुरुचि विशाळ;
अल्पागम मुनि नहि भलो, बोले उपदेश माळ. १९
ज्ञानवंतने केवळी, द्रव्यादिक अहि नाण;
बृहत् कल्प भाषे वळी, सरसा भाष्या जाण. २०
ज्ञानादिक गुण मच्छरी, कष्ट करे ते फोक;
ग्रंथि भेद पण तस नही, भूले भोळा लोक. २१
ज्यां जोहार जवेहरी, ज्ञाने ज्ञानी तेम;
हीणाधिक जाणे चतुर, मूरख जाणे केम. २२
आदर कीधे तेहने, उन्मारग थीर होय;

वाह्य क्रिया मत राचजो, पंचाशक अवलोय. २३
जेहथी मारग पामींयो, तेहने सामो थाय;
प्रत्यनीक ते पापीयो निश्चयें नरके जाय. २४
सुंदर बुद्धि पणे कर्यो, सुंदर सरव न थाय;
ज्ञानादिक वचने करी, मारग चाल्यो जाय. २५
ज्ञानादिक वचने रह्या, साधे जे शीव पंथ;
आतम ज्ञाने उजळो, तेहु भाव निग्रंथ. २६
निंदक निश्चें नारकी, वाह्य रुचि मति अंध;
आतम ज्ञाने जे रमे, तेहने तो नहि बंध. २७
आतम साखे धर्म जे, त्यां जननुं शुं काम; ?
जन मन रंजन धर्मनुं, मूळ न एक बदाम. २८
जगमां जन छे वहु सुखी, रुचि नही को एक;
निज हित होय तिम कीजीये, ग्रही प्रतिज्ञा टेक. २९
दूर रही जे विषयथी, कीजे श्रुत अभ्यास;
संगति कीजे संतनी, हुइये तेहना दास. ३०
समतासें लय लाइये, धरि अध्यातम रंग;
निंदा तजीये परतणी, भजीये संयम चंग. ३१
वाचक यश विजयें कही, ए मुनिने हित वात;
एह भाव जे मुनि धरे, ते पामे शीव सात. ३२

इति संयम वत्तीसी संपूर्ण.

"जैन कोमना हितनी खातर खास निर्माण करेली समयानुसारी बहु उपयोगी सूचनाओ."

१. विदेशी भ्रष्ट वस्तुओथी आपणे सदंतर दूर रहेवुं अने स्वदेशी पवित्र वस्तुओनोज उपयोग निश्चयपूर्वक करवो अने करावको.

२. आपणा पवित्र तीर्थोनी रक्षा माटे आपणे विशेषे सावधान रहेवुं.

३. कोइ पण प्रकारना खोटा व्यसनथी सावधानपणे दूर रहेवुं, अने अन्य भाइ व्हेनोने दूर रहेवा प्रेरणा कर्या करवी.

४. शांत रसथी भरपूर जिन–प्रतिमाने जिनवत् लेखी तेवी शांत दशा प्रगटाववा प्रतिदिन पूजा अर्चादिक करवा कराववा पूरतुं लक्ष राखवुं तथा रखाववुं.

५. परम सुख शांतिने आपवावाळी श्री जिन वाणीनो स्वाद मेळववा दिवस रात्रीमां थोडो वखत पण जरुर श्रम लेवो, अभ्यास राखवो.

६. जैन तरीके आपणुं शुं शुं कर्तव्य छे ते पूरा तोरथी जाणी लेवा अने जाणीने ते प्रमाणे वर्तवा पूरो ख्याल राखवो.

७. शरीर सारुं होय तो धर्म साधन सारी रीते साधी शकाय छे. एवी बुद्धिथी शरुआतथीज शरीरनी संभाळ राखवा सावचेत रहेवुं. वळी बाळलग्न, वृद्धविवाह, परस्त्री तथा वेश्यागमन, कुपथ्य भोजन अने कुदरत विरुद्ध वर्तनथी नाहक विर्यनो नाश थवा साथे शरीर कमजोर थायज छे, एम समजी उक्त अनाचारोथी सदंतर दूर रहेवा खास लक्ष राखतां रहेवुं.

८. आवकना प्रमाणमांज खर्च करवा तेमज नकामा उडाउ खर्चो बंध करी बचेला नाणांनो सदुपयोग करवा करावबा पूरतुं लक्ष राखवुं अने रखाववुं.

९. धर्मादा खाते जे रकम खर्चवा धारी होय ते विलंब कर्या विना विवेकथी खर्ची देवी. कारणके सदा काळे सरखा परिणाम रही शकता नथी. वळी लक्ष्मी पण आज छे, अने काले नथी.

१०. ज्ञान दान समान कोइ दान नथी, एम समजी सहुए तेमां यथाशक्ति सहाय करवी, तत्त्व ज्ञाननो फेलावो थवा पामे तेवो प्रबंध करवो, केमके शासननी उन्नतिनो खरो आधार तत्त्वज्ञान उपरजछे.

११. जैनी भाइ व्हेनोमां पण केटलाक भागे कळा कौशल्यनी खामीथी, प्रमादथी तथा अगमचेतीपणाना अभावथी बहुधा नात वरा विगेरे नकामा खर्चो करवाथी दुःखी हालत थवा पामेल छे. ते दूर थाय तेवी देशकाळने अनुसारे उछरती प्रजाने तालीम (केळवणी) आपवी दरेक स्थळे शरु करवानी पूरी जरुर छे.

१२. वीतराग प्रभुनो उपदेश सारी आलमने उपगारी थइ शके एवो होवाथी तेनो जेम प्रसार थवा पामे तेम प्रयत्न कर्या करवो. जिनेश्वर भगवाने आपेली शिखामणोनुं सार ए छे के.

क. सर्व जीवनुं भलुं करवा करावता बनती काळजी राखवी.

ख. सादाइ अने नरमाश राखवी.

ग. समजु अने सरल (विवेकी) बनवुं.

घ. निर्लोभी थइ संतोष वृत्तिमांज सुख मानवुं.

ङ. आळस तजी चीवट राखी यथाशक्ति आत्मसाधन करवुं.

च. मन, वचन अने कायाने काबुमां राखवा तत्पर रहेवुं.

छ. सत्यनुं स्वरुप समजीने सत्यज बोलवुं, हितमित भाषण करवुं.

ज. अंतःकरण साफ राखी शुद्ध व्यवहार सेववो कोइ रीते मलीनता आदरवी नहि.

झ. उदार दिलथी आत्मार्पण करवुं, स्वार्थता तजी परमार्थ प्रति प्रेम लगाडवो, परार्थ परायण रहेवुं.

ञ. उत्तम प्रकारनुं सद्वर्तन (आदरवुं) सेववुं.

१३. काळ मुख कुसंपने जेम तेम दाटी दइ सुखदायी संपने वधारवा शासन रसिक जनोए भगीरथ प्रयत्न सेववा तत्पर थवुं.

१४. हानिकारक रीत रीवाजोने दूर करवा कराववा पूरतुं मथन करवुं.

१५. सीदाता साधर्मी जनोने विवेकथी सहाय आपवा मेदान पडवुं.

१६. जे उत्तम पुरुषे आपणने उपगार कर्यो होय तेनी सामा थइ तेने नुकशान करवानी अगर तेनुं बुरु बोलवानी प्रवृत्ति स्वार्थने खातर अगर प्राणांत कष्ट आवे छते पण करवी नहि.

१७. कोइए करेला अपराधथी गुस्से थइ तेनो अनादर करवाने बदले शांतिथी तेनुं खरुं स्वरुप समजावी ठेकाणे पाडवामांज सार छे.

१८. द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावने लक्षमां राखीने उचित प्रवृत्ति करतां नम्रता धारण करशे, तेज भव्यजनो स्वपर हितने साधवा समर्थ थइ शकशे. रागद्वेष अने मोहने सर्वथा तजी सर्वज्ञ सर्वदर्शी थइ आपणने पण एवाज–निर्मळ निर्दोष थवा जिनेश्वर भगवान उपदिशे छे.

उक्त सूचना मुजब वर्तवा सकळ उपदेशक मुनिमंडळ तथा अन्य उत्साही श्रावक वर्ग खरा जीगरथी प्रयत्न करे तो सारो अने संगीन लाभ स्वल्प समयमां थवा संभवे छे. सुज्ञेषु किंबहुना.

शुद्धिपत्र.

जैन हितोपदेश भाग २ जो.

पृष्ट.	लींटी.	अशुद्ध.	शुद्ध.
२	३	विरह	विरहे
५	६	त्यजं	त्यज
१०	२	शत्रु	शत्रू
१०	२	विज्ञेयो	विज्ञेयौ
१०	३	फलप्रदम्	फलप्रदौ
१०	५	मुलम्	मूलम्
१९	६	तमे	तेम
३४	११	वर	वैर
४१	११	तथा	तेथी
४६	१६	पासे	पाछळ रहेलुं
४९	३	अनती	अनंती
४९	१०	धमनां	धर्मनां
५६	१४	फळीभत	फळीभूत
५५	८	अघन	अघने
५८	१६	वाण	निर्वाण
८२	१४	उपयोगमां	उपयोग
१२९	६	कलीनताने	कुलीनताने

जैन हितोपदेश भाग ३ जो.

पृष्ठ.	लींटी.	अशुद्ध.	शुद्ध.
१६	२	आस्थिर	स्थिर
२३	२	समुद्धोत्थं	समुद्रोत्थं
२९	७	दुःपूर	दुष्पूर
२९	१५	मिनेभ	मीनेभ
७०	१२	संज्ञिकं	संज्ञकं
७०	१४	शरीररुप	शरीररूप
७३	१६	नीरुपे	नीरूपे
७३	१६	रूपीणी	रूपिणी
९१	१३	लोकसंज्ञाअे	लोकसंज्ञा ए
९२	२	एवी	एवा
१०७	३	परेभ्योपि	परेभ्यापि
१०७	५	भेदा	भेदाः
१०८	७	पाछली	पाछला
१०८	१५	योग	योग.
१०८	१९	करवानां	करवानां
१२९	१२	लइ	थइ
१३३	२	मार्दीकृतं	माद्रींकृतं
१३६	८	तद्	तज्
१३८	५	पूर्णान्दघने	पूर्णानन्दघने
१४४	१९	मोटा	मोटो
१८१	९	धारो	धारी